हिंदी वीरकाव्य-संग्रह

हिंदी के कवि और काव्य—१

हिंदी वीरकाव्य-संग्रह

संपादक

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

डॉ० उदयनारायण तिवारी

द्वारा संशोधित

१९५६

हिंदुस्तानी एकेडेमी

उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १९३७
द्वितीय संस्करण : १९५६
मूल्य ४)

मुद्रक : श्री प्रेमचन्द्र मेहरा, न्यू ईरा प्रेस, इलाहाबाद

प्रकाशकीय

हिंदी काव्यधारा की विशिष्ट परंपराओं को आधार मानते हुए हिंदी कविता के विस्तृत संकलन कई भागों में प्रकाशित करने की एक योजना हिंदुस्तानी एकेडेमी ने बनाई थी। इस योजना के अंतर्गत प्रारंभ में हिंदी के कवि और काव्य शीर्षक से तीन भागों में काव्य-संकलन प्रकाशित भी हुए थे। ये स्वर्गीय श्री गणेश प्रसाद द्विवेदी द्वारा प्रस्तुत किए गए थे।

'हिंदी के कवि और काव्य' भाग १ में हिंदी वीर काव्य का संकलन था। यह संकलन १९३९ ई० में प्रकाशित हुआ था। हिंदी संसार ने इसका अच्छा स्वागत किया और कुछ ही वर्षों में यह संस्करण समाप्त हो गया।

यही संकलन डॉ० उदय नारायण तिवारी द्वारा संशोधित होकर 'हिंदी वीरकाव्य-संग्रह' शीर्षक से अब प्रकाशित हो रहा है। आशा है यह नवीन संस्करण अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

१५—७—'५६
हिंदुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

धीरेंद्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष

भूमिका

रसों में वीर रस का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अग्निपुराण ने जिन चार रसों [1] को प्रमुख माना है, उनमें वीर भी है। साहित्य-दर्पण-कार ने 'उत्तम प्रकृतिः वीरः' लक्षण देकर वीर रस को अन्य रसों से श्रेष्ठ माना है। इनके अनुसार वीर रस का स्थायी भाव उत्साह, देवता महेन्द्र और रंग सोने के सदृश होता है।

वीर रस में जिस पर वीरता दिखलाई जाती है या जिसे जीता जाता है, वह आलंबन विभाव, उसकी चेष्टाएँ, जिन्हें देखकर उद्दीपन हो उद्दीपन विभाव और सेना तथा अस्त्र आदि युद्ध के सहायक का अन्वेषणादि, इसका अनुभाव होता है। इसके संचारी भाव धैर्य, मति, गर्व तथा रोमांच आदि हैं।

वीर रस के दान, धर्म, दया और युद्ध के आधार पर चार भेद प्रसिद्ध हैं, जिनके भाव तथा विभाव आदि निम्नांकित हैं :—

दानवीर

स्थायी भाव	:	त्याग में उत्साह
आलंबन	:	दान के योग्य ब्राह्मण या दीन हीन व्यक्ति
उद्दीपन	:	ब्राह्मण आदि की सात्विकता
अनुभाव	:	सर्वस्व परित्यागादि
संचारी भाव	:	हर्ष, मति, गर्व आदि

धर्मवीर

स्थायी भाव	:	धर्म में उत्साह
आलंबन	:	धर्म तथा धार्मिक ग्रंथ

[1] श्रृंगार, रौद्र, वीर, वीभत्स।

उद्दीपन : यज्ञ, व्रत, अनुष्ठान
अनुभाव : धर्माचरण
संचारी भाव : धृति, मति आदि

युद्धवीर

स्थायी भाव : युद्ध में उत्साह
आलंबन : शत्रु[1]
उद्दीपन : शत्रु की चेष्टाएँ
अनुभाव : गर्वोक्ति
संचारी भाव : गर्व, धृति, रोमांच आदि

दयावीर

स्थायी भाव : दया में उत्साह
आलंबन : दया के पात्र
उद्दीपन : दया के पात्र की दीन दशा
अनुभाव : दया के पात्र के प्रति सांत्वना भरे वचन
संचारी भाव : धृति, रोमांच आदि

वीररस के इन चार भेदों के संबंध में सभी आचार्य एक मत नहीं हैं।

---

[1] यहाँ युद्ध वीर का आलंबन शत्रु कहा गया है। रौद्र रस में भी यही आलंबन होता है। स्वभावतः यहाँ दोनों की अभिन्नता के कारण शंका के लिए स्थान है। इस संबंध में साहित्य दर्पण में स्पष्टीकरण की दृष्टि से कहा गया है कि रौद्र रस में मुंह तथा नेत्र लाल हो जाते हैं, पर वीर रस में ऐसा नहीं होता। इस अंतर से यह समझा जा सकता है कि रस वीर है या रौद्र।

अग्निपुराणकार ने दान, धर्म और युद्ध के आधार पर केवल तीन भेद माने हैं। उसमें दया वीर को स्थान नहीं दिया गया है। साहित्य-दर्पण तथा रस गंगाधर में उपर्युक्त चार ही भेद दिए गए हैं, पर रस गंगाधर के रचयिता ने आगे चलकर यह स्पष्ट कर दिया है कि इन चार के अतिरिक्त सत्यवीर, पांडित्य वीर तथा क्षमावीर आदि और भी इसके भेद हो सकते हैं। सत्य यह है कि जब इसका स्थायी भाव 'उत्साह' है तो जिस किसी कार्य में उत्साह हो, उसके आधार पर वीर रस का एक भेद किया जा सकता है और इस प्रकार इसके अनंत भेद हो सकते हैं। आधुनिक कवि वियोगी हरि ने इसी आधार पर 'विरह वीर' आदि उसके नए भेद किए हैं। पर इस प्रकार के किए गए भेदों को तत्वतः वीर रस की परिधि में नहीं रक्खा जा सकता। वीर रस के प्रकृत रूप से इनका कोई भी संबंध नहीं।

वीरता की भावना मनुष्य में शृंगार जैसी ही प्राचीन है, इसी कारण विश्व के प्राचीनतम साहित्यों में भी वीररस का किसी न किसी रूप में परिपाक हमें मिलता है।

भारत का प्राचीन ज्ञात ग्रंथ ऋग्वेद है। इसमें भी वीर रस को स्पर्श करने वाली युद्ध-विषयक कविता प्राप्य है। उदाहरणार्थ इसके एक सूत्र में तृत्सु-वंशीय राजा सुदास की विजय का वर्णन है तो दूसरे में दिवोदास द्वारा संबर के हराए जाने का। ऋग्वेद में इस प्रकार के और भी उदाहरण हैं पर वस्तुतः वीरकाव्य का प्रथम उल्लेख हमें शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। और आगे चलकर तो महाभारत, रामायण तथा अन्य पुराणों में वीररस के छंद भरे पड़े हैं। कहना न होगा कि इन सभी में युद्धों का प्रमुख स्थान है और उनके प्रसंग में वीरकाव्य को विविध रूपों में स्थान मिला है। विशेषतः रामायण तथा महाभारत तो इस दृष्टि से दर्शनीय हैं।

संस्कृत के प्रमुख कवियों तथा नाटककारों में वीरकाव्य की दृष्टि से भारवि

(किरातार्जुनीय), भवभूति (उत्तररामचरित) तथा भट्ट नारायण (वेणी संहार) विशेष उल्लेखनीय हैं, यों अन्य लोगों के ग्रंथ भी इससे पूर्णतः शून्य नहीं कहे जा सकते। पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य में भी वीरकाव्य की धारा सूखती नहीं मिलती। विशेषतः अपभ्रंश तो इस दृष्टि से पर्याप्त धनी है। स्वयंभू का नाम इस प्रसंग में प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। राहुल जी की हिंदी काव्यधारा में अपभ्रंश की वीर रस की और कविताएँ भी देखी जा सकती हैं।

वीर रस की यह प्राचीन काल से आती हुई धारा हिंदी में आकर और भी समुन्नत हो गयी है। हिंदी का प्रथम चरण इस धारा के पल्लवित होने के लिए बहुत अनुकूल सिद्ध हुआ। वह युग राजनीतिक उथल-पुथल का था, अतः स्वभावतः चारों ओर युद्ध का स्वर तीव्र था और फल यह हुआ कि साहित्य में भी उसी स्वर को प्रधानता मिली। 'रासो' आदि वीरगाथाओं से संबद्ध काव्य ही उस युग में विशेष रूप से लिखे गए। इसी कारण हिंदी के उस प्रथम युग को लोगों ने 'वीरगाथा काल' नाम से अभिहित किया। हिंदी में वीरकाव्य की रचना उस आदि युग से आज तक होती आ रही है। भक्तिकाल में इसकी धारा कुछ क्षीण अवश्य हो गई थी पर उसका पूर्ण लोप नहीं हुआ। जायसी के पद्मावत, तुलसी के रामचरितमानस तथा कवितावली एवं केशव की रामचंद्रिका, रतनबावनी तथा वीरसिंहदेव-चरित आदि में वीरकाव्य के अच्छे उदाहरण उपलब्ध हैं।

हिंदी में यों तो बहुत से कवियों के काव्य में यत्र-तत्र वीर रस के अंश मिल जाते हैं, पर इस दृष्टि से प्रमुख रूप से चंद बरदाई, जगनिक, केशव, मान, जोधराज, गोरेलाल, भूषण, श्रीधर, पद्माकर, सूदन तथा चंद्रशेखर के नाम लिये जा सकते हैं। प्रस्तुत संग्रह में इन्हीं लोगों को स्थान दिया गया है।

हिंदी-वीरकाव्य का एक प्रमुख रस की दृष्टि से तो महत्व है ही पर उसमें प्राप्त ऐतिहासिकता की दृष्टि से भी वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। वीरकाव्य का अधिकांश किसी राजा के दरबार में लिखा गया है और शौर्य तथा युद्धों आदि से संबद्ध है, अतः स्वभावतः तत्कालीन राजनीति तथा इतिहास पर उससे पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। डॉ० टीकमसिंह तोमर ने अपने प्रबंध, 'हिंदी वीरकाव्य' में १६०० से १८०० ई० के बीच रचे गये वीरकाव्यों पर ऐतिहासिक दृष्टि से विस्तार के साथ विचार किया है। इस संबंध में उनका निष्कर्ष द्रष्टव्य है—

"......ऐतिहासिक दृष्टि से इस धारा का विशेष महत्त्व है। इन ग्रथों में से कुछ ऐसे हैं, जो अपने चरित्र-नायकों के जीवन से संबंधित विस्तृत एवं सूक्ष्म विवरण देने में सफल हुए हैं। यदि नीर-क्षीर-विवेक से इन ग्रंथों का अध्ययन किया जाय, तो इन ग्रंथों में से बहुत कुछ नवीन एवं मौलिक ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो सकती है, जिसकी सहायता से तत्कालीन ऐसी घटनाएँ जो अभी तक अंधकार के गर्त में निहित हैं, प्रकाश में आ सकती हैं। इस दृष्टि से इस धारा (वीरकाव्य की धारा) का विशेष महत्व है[१]।"

हिन्दी वीरकाव्य धारा की रचनाओं में प्रमुख रूप से ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है[२]। इस धारा का प्रथम प्रसिद्ध ग्रंथ 'पृथ्वीराज रासो' है। इसकी भाषा का भी मूल ढाँचा ब्रज ही है पर शब्द-समूह तथा कहीं-कहीं कुछ वाक्य या वाक्यांशों की दृष्टि से डिंगल, प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत, तथा फ़ारसी आदि का भी प्रयोग हुआ है। रासोकार ने स्वयं अपनी भाषा के विषय में 'षड्भाषा पुरानं च कुरानं कथितंमया' में छः भाषाओं का संकेत

१. हिन्दी वीर काव्य, पृ०, १७३

२. आल्हखंड की भाषा में कई बोलियों के रूपों का मिश्रण है तथा महोबे की बोली का भी पुट है।

किया है। संभव है ये ही छः भाषाएँ हों, यद्यपि वंशभस्कार के रचयिता सूर्यमल ने भी अपनी भाषा को षड्भाषा कहा है और उनके नाम संस्कृत, प्राकृत, व्रजभाषा, अपभ्रंश तथा पैशाची कहा है। इनकी छठीं भाषा कौन-सी है, यह नहीं कहा जा सकता।

शब्द-समूह की दृष्टि-प्रायः सभी रचनाओं की यही स्थिति है। कुछ लोगों की भाषा में कन्नौजी तथा बुंदेली के भी पुट यत्र-तत्र वर्तमान हैं।

हिंदी वीरकाव्य में दोहा, कवित्त, छप्पय, चौपाई, गाथा, पद्धरी, मोतीदाम, त्रोटक, नाराच, भुजंगप्रयात, चामर, मधुभार, चंचरी, मोदक, सवैया, दंडक, त्रिभंगी, हरिगीता, चंद्रकला, डिल्ला तथा कलहंस आदि छंदों का प्रमुखतः प्रयोग हुआ है।

यों तो पूरी वीरकाव्य धारा में बहुत से अलंकारों का प्रयोग हुआ है, पर प्रमुखतः शब्दालंकारों में अनुप्रास और यमक; सादृश्यमूलक अर्थालंकारों में उपमा, मालोपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, भ्रम एवं संदेह; विरोधमूलक अलंकारों में विरोधाभास तथा लोकव्यवहार-मूलक अलंकारों में लोकोक्ति प्रयुक्त हुए हैं।

वीरकाव्य में वीर रस के अतिरिक्त शृङ्गार, शांत, हास्य, रौद्र तथा वीभत्स रस के प्रयोग भी मिलते हैं। कहीं-कहीं प्रकृति-चित्रण भी बड़ा सुंदर हुआ है।

हिंदी वीरकाव्य में कुछ दोष भी हैं। कुछ कवियों ने शब्दों को छंद की आवश्यकतानुसार इतना विकृत किया है कि कहीं-कहीं अर्थ समझना भी मुश्किल हो जाता है। इस दृष्टि से भूषण का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। इसी प्रकार युद्ध का वातावरण उपस्थित करने के प्रयास में कुछ लोगों ने ध्वन्यात्मक शब्दों को झड़ी लगा दी है। कभी-कभी तो आधे-आधे

पृष्ठ तक इस प्रकार के निरर्थक शब्द रक्खे गये हैं, जो हास्यास्पद से लगते हैं। यह दोष सूदन में विशेष रूप से मिलता है। उनकी काव्य की विशेषताओं पर विचार करते समय पृ० २४२ पर इस प्रकार की एक कविता दी गई है। पृ० २६८ भी इस दृष्टि से द्रष्टव्य है। हिंदी वीरकाव्य में शब्दों के मध्य के या अंतिम अक्षर को व्यर्थ में संयुक्ताक्षर बनाने या द्वित्त करने तथा छंद की पूर्ति की दृष्टि से भरती के शब्द भरने की भी प्रवृत्ति रही है। श्रीधर के काव्य में इसके उदाहरण विशेष रूप से मिल सकते हैं।

ऊपर कहा जा चुका है कि हिन्दी वीरकाव्य में इतिहास की सामग्री भी मिलती है। इसके कारण वीरकाव्य के काव्य-पक्ष को काफी क्षति पहुँची है। एक ओर इसके फलस्वरूप वर्णनात्मकता अधिक हो गई है तो दूसरी ओर कहीं-कहीं आधे-आधे पृष्ठ तक सरदारों या दरबारियों के नाम गिनाए गए हैं। पर, इन दोषों के बावजूद भी इस काव्य का अपना महत्त्व है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

१४-७-५६ उदयनारायण तिवारी
अलोपी बाग, प्रयाग

विषय सूची

चंद बरदाई

पृथ्वीराज रासो में चंद के जन्मकाल के संबंध में कुछ नहीं लिखा है, परंतु यह प्रसिद्ध है कि चंद और पृथ्वीराज साथ ही पैदा हुए, जन्म भर साथ रहे और अंत में साथ ही मरे। पृथ्वीराज का जन्म संवत् रासो में १११५ दिया हुआ है। अब यदि चंद और पृथ्वीराज का जन्म एक ही समय हुआ है तो चंद का जन्म भी सं० १११५ में मानना पड़ेगा। परंतु यह संवत् अशुद्ध है। प्रामाणिक इतिहासों तथा शिलालेखों के आधार से यह निश्चय हो चुका है कि पृथ्वीराज का जन्म संवत् १२१७ वि० के पहले नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार की गड़बड़ी रासो में आये हुए सभी संवतों में है और यही मुख्य कारण है कि विद्वानों को पृथ्वीराजरासो के पृथ्वीराज के राजत्वकाल में लिखे जाने के संबंध में संदेह हुआ। जो हो, रासो के अनुसार चंद भट्ट जाति के थे और जगाति इन का गोत्र था। इन के पूर्वपुरुषों का वास-स्थान पंजाब में था और इनका जन्म भी लाहौर में हुआ था। ये महाराज पृथ्वीराज के राज कवि तो थे ही, साथ ही उन के सखा और सामंत भी थे। ये षड्भाषा, व्याकरण, काव्य साहित्य, छंद शास्त्र, ज्योतिष, पुराण, तथा नाटक आदि अनेक विषयों और विद्याओं में निपुण थे। इन्हें जालंधरी देवी का इष्ट था जिससे ये अदृष्ट काव्य भी कर सकते थे। ये मंत्र-तंत्र आदि में भी बड़े प्रवीण थे। इनका जीवन पृथ्वीराज के जीवन से ऐसा मिला-जुला था कि उससे अलग नहीं किया जा सकता। युद्ध, आखेट, सभा तथा यात्रा में सदा ये महाराज के साथ रहा करते थे और इन्होंने कई बार संकट और आसन्न मृत्यु से महाराज की रक्षा भी की थी। शहाबुद्दीन के साथ अंतिम युद्ध में जब वह पृथ्वीराज को कैद कर ग़ज़नी ले गया तो कुछ दिनों बाद चंद भी वहीं गए। पृथ्वीराज को ग़ज़नी ले जाकर शहाबुद्दीन ने उनको

कवि-परिचय

आँखें निकलवा ली थीं और जेल में बड़ी यातना दे रहा था। छद्मवेश में चंद उसके दरबार में पहुँचे। वहाँ कोई जलसा हो रहा था और लोग भिन्न-भिन्न प्रकार से शाह के सामने अपना-अपना जौहर दिखा रहे थे। चंद ने कहा, पृथ्वीराज जो इस समय अन्धा है, शब्दवेधी बाण मार सकता है। इस उत्सव के समय आपको उसे भी अपनी विद्या दिखाने का अवसर देना चाहिए। शाह के भी मन में यह बात बैठ गई, उसने पृथ्वीराज को बुलाया। उन्होंने पृथ्वीराज की सफलता पर मुग्ध हो 'शाबाश' कहा, उनका स्वर इनके कानों में पड़ा, बस फिर क्या था, चंद का इशारा तो था ही, दूसरा तीर दूसरे ही क्षण में शाह के हृदय को चीरता हुआ निकल गया। तदनंतर, इसके पहले कि शाह के सिपाही इनके ऊपर हाथ उठावें, चंद ने अपनी पगड़ी में से एक कटार निकाली, और उसी से दोनों ने एक दूसरे को मारकर वहीं अपनी-अपनी इह-लीला समाप्त कर दी।

अब हमें यह देखना है कि चंद के संबंध की उपर्युक्त सूचनाएँ कहाँ तक विश्वसनीय हैं। पृथ्वीराज के दरबार में एक जयानक नाम का कवि था जिसने संस्कृत में 'पृथ्वीराज-विजय' नामक एक काव्य लिखा है। इसमें दिये हुए संवत्, पृथ्वीराज की वंशावली, तथा उनके जीवन की मुख्य घटनाएँ प्रामाणिक इतिहासों, शिलालेखों तथा फ़ारसी के इतिहासों के वर्णन से मिलती हैं और इसलिए इसके सम-सामयिक और प्रामाणिक ग्रंथ होने में संदेह करने का कोई कारण नहीं है। अब ऐसी अवस्था में यदि चंद पृथ्वीराज का लँगोटिया यार, सलाहकार और राजकवि होता तो जयानक उसे अवश्य भलीप्रकार जानता और उसका यथोचित उल्लेख अपने काव्य में करता। परंतु वह पृथ्वीराज के मुख्य भाट या बंदिराज का नाम "पृथिवी भट्ट" लिखता है। चंद का वह कहीं नाम तक नहीं लेता।

इसके अतिरिक्त पृथ्वीराज के समय के शिलालेखों तथा फ़ारसी इतिहासकारों की कृतियों से भी चंद का पृथ्वीराज का समकालीन होना

नहीं सिद्ध होता। यह विषय आगे वर्तमान पृथ्वीराज रासो तथा उसके निर्माणकाल पर विचार करने से और भी स्पष्ट हो जायगा। परंतु ग्रथ और उसके निर्माणकाल पर विचार करने के पहले हरप्रसाद शास्त्री तथा अपने को चंद का वर्तमान वंशधर कहनेवाले नानूरामजी के चंद संबधी वक्तव्य को जान लेना आवश्यक प्रतीत होता है।

महामहोपाध्याय पंडित हरप्रसाद शास्त्री ने सन् १९०९ से १९१३ तक मारवाड़ और मेवाड़ में पुराने काव्य-ग्रंथों की खोज में कई यात्राएँ की थीं। नानूरामजी से इनकी भेंट इसी अवसर पर हुई थी और उन्होंने अधिकतर यात्राओं में शास्त्री जी का साथ देते हुए उनकी खोज में यथेष्ट सहायता पहुँचाई थी। शास्त्री जी ने बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में छपे अपने विवरण में चंद और पृथ्वीराज रासो के संबध में बहुत कुछ कहा है। इसमें लिखा है कि कोई-कोई तो चंद के पूर्वजों को मगध से आया हुआ बताते हैं पर पृथ्वीराज रासो के अनुसार चंद का जन्म लाहौर में हुआ था। फिर कहा जाता है कि चंद पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर के समय में राजपूताने में आया था और पहले कुछ दिन तक सोमेश्वर के दरबार में भी था, जहाँ इसकी यथेष्ट प्रतिष्ठा हुई थी। सोमेश्वर के जीवन-काल में ही इसकी पृथ्वीराज से गाढ़ी मित्रता हो गई थी और इसका अधिकांश समय पृथ्वीराज के ही साथ बीतता था। पृथ्वीराज के सिंहासनारोहण के बाद वह मित्रता और भी घनिष्ठ हुई और यह क्रमशः इनका एक सामंत, मंत्री और राजकवि होकर अंत में सर्वेसर्वा हो गया था। पृथ्वीराज ने नागोर नाम का एक नगर बसाया था और वहाँ चंद को बहुत-सी भू-संपत्ति भी मिल गई थी।

नानूरामजी के अनुसार चंद के चार पुत्र थे जिन में दो के नाम तो मालूम हैं ही, शेष दो के बारे में उन का कहना है कि इन में एक तो मुसलमान हो गया था, और दूसरे का कुछ पता नहीं।

इस समय जो प्रकाशित पृथ्वीराज रासो हमारे सामने है, वह प्राय

ढाई हज़ार पृष्ठों का बहुत बड़ा ग्रंथ है। इस में ६९ 'समय' या अध्याय हैं, जिनमें पृथ्वीराज का जन्म से लेकर मरण पर्यंत वृत्तांत है। प्रसंगवश पृथ्वीराज का जिन-जिन लोगों से जहाँ-जहाँ काम पड़ा था, उन का भी पर्याप्त विवरण इस में मिलता है। इस प्रकार उस समय के भारत-वर्ष के प्रायः सभी राजाओं और उन के राज्यों तथा वहाँ के लोगों का पर्याप्त विवरण इस महान् ग्रंथ में मिलता है। इन्हीं कारणों से कर्नल टाड को इसे अपने समय का विश्वइतिहास मानना पड़ा था।

पृथ्वीराज रासो

रासो के अनुसार पृथ्वीराज सोमेश्वर का पुत्र तथा अर्णोराज का पौत्र था। सोमेश्वर का विवाह दिल्ली के तोमर राजा अनंगपाल की कन्या से हुआ था। अनंगपाल की दो कन्याएँ थीं, जिन में से एक का नाम सुन्दरी तथा दूसरी का नाम कमला था। कमला अजमेर के चौहान राजा सोमेश्वर को ब्याही थी और इसी से पृथ्वीराज का जन्म हुआ था। दूसरी कन्या सुंदरी का विवाह कन्नौज के राठौर राजा विजयपाल से हुआ था और इसी से जयचंद का जन्म हुआ। अनंगपाल पुत्रहीन थे और इसलिए उन्होंने अपने नाती पृथ्वीराज को गोद ले लिया। जयचंद भी उन का नाती था पर उन को स्नेह पृथ्वीराज से इसलिए अधिक था कि विवाह के पहले ही जब जयचंद के पिता विजयपाल ने अनंगपाल के ऊपर चढ़ाई की थी तब इन्हीं पृथ्वी-राज के पिता सोमेश्वर ने तोमरराज की सहायता की थी। इसका फल यह हुआ कि अनंगपाल का राज्य भी पृथ्वीराज के हाथ लगा और इससे जयचंद बहुत कुढ़ा। यद्यपि उस समय वह सब से अधिक समृद्धिशाली था, आर्यावर्त के प्रायः सभी राजा उसके सामने शीश नवाते थे, पर पृथ्वीराज इस से सदा अकड़े ही रहे। जयचंद ने एक बार संसार को अपना एकछत्राधिपत्य दिखाने के लिये राजसूय यज्ञ का विशाल आयोजन कर यज्ञ के कामों में हाथ बँटाने के लिए सब राजाओं को निमंत्रित किया। पृथ्वीराज भी निमंत्रित हुए पर उन्होंने वहाँ जाना अस्वीकार किया। जयचंद ने अपनी कन्या

संयोगिता का स्वयंवर भी इसी समय रचा। संयोगिता ने पहले से ही अपना हृदय पृथ्वीराज को दे रखा था और मन ही मन उन्हें ही अपना पति बनाने का निश्चय कर चुकी थी। इधर स्वयंवर सभा में और सब तो पहुँचे पर पृथ्वीराज नहीं आए, यह देख जयचंद ने सब उपस्थित राजाओं के सम्मुख अनुपस्थित पृथ्वीराज को अपमानित करने का एक विचित्र उपाय ढूँढ़ निकाला। उसने पृथ्वीराज की एक प्रतिमा बनवा कर सभामंडप के द्वार पर द्वारपाल के सामने रखवा दी। इसका आशय सब को यह बताना था कि मेरे दरबार में पृथ्वी-राज ऐसों की हैसियत द्वारपाल से अधिक नहीं है। जो हो, पर संयो-गिता ने औरों की ओर दृष्टिपात भी न करते हुए इसी प्रतिमा को जयमाल पहिना कर पृथ्वीराज के प्रति अपने अपार प्रेम का परिचय दिया। भरी सभा में जयचंद का सिर नीचा हो गया। वे चले थे पृथ्वीराज को अपमानित करने पर अब अपने ही को हजार गुना अधिक अपमानित समझने लगे। बाद में उन्होंने हर तरह से संयो-गिता का मन पृथ्वीराज की ओर से फेरने की चेष्टा की पर सब व्यर्थ हुआ। अंत में झुँझला कर उन्होंने गंगा किनारे एक महल में संयोगिता को एकांतवास का दंड दे दिया। इधर पृथ्वीराज के सामंतों को इस की सूचना मिली तो उन्होंने आकर जयचंद का यज्ञ विध्वंस कर डाला और साथ ही पृथ्वीराज और चंद भी भेस बदल कर कन्नौज पहुँचे। पर जयचंद को इनके आने की सूचना मिल गई और उसने चंद का डेरा घेर लिया। बस फिर क्या था, लड़ाई शुरू हो गई। इधर पृथ्वीराज कन्नौज की सैर करते हुए संयोग से संयोगिता के महल के नीचे से गुजरे और दोनों की निगाहें भी चार हुईं। अंत में सखी सहेलियों की सहायता से दोनों वहीं मिले और गांधर्व विवाह भी वहीं हो गया। इस विचित्र प्रेममिलन के बाद पृथ्वीराज अपने सामंतों से आ मिला, पर उन लोगों को पृथ्वीराज का इस प्रकार अकेले आना अच्छा न लगा। यह देख पृथ्वीराज लौटे और अपने घोड़े पर प्रेममुग्धा संयोगिता को बैठाकर फिर अपने सामंतों

से आ मिले। लड़ाई तो हो ही रही थी पर जयचंद और उस के आदमियों को जब यह मालूम हुआ कि पृथ्वीराज संयोगिता को भी भगा ले आया है तो उन के क्रोध का ठिकाना न रहा और बड़ी भीषण मार-काट आरंभ हुई। पृथ्वीराज और उस के सिपाही लड़ते हुए दिल्ली की ओर अग्रसर होते जा रहे थे। अंत में इसी तरह दिल्ली की सीमा तक लड़ाई होती रही पर जयचंद के आदमी पृथ्वीराज को पकड़ न सके। अंत में जयचंद ने कोई उपाय न देख कर दिल्ली में ही विधिवत् पृथ्वीराज और संयोगिता का ब्याह करा दिया और दहेज के रूप में बहुत-सी धनसंपत्ति भी दी। यह सब तो हुआ पर जयचंद के हृदय में पृथ्वीराज के प्रति जो भयानक द्वेषाग्नि भभक उठी थी वह शांत न हुई। इधर संयोगिता को पाकर पृथ्वीराज भोग-विलास में ऐसे डूबे कि राज-काज से उन्होंने एक प्रकार से संबंध ही तोड़ लिया। इधर समय देख और जयचंद का इशारा पा शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी इन पर चढ़ दौड़ा पर गई गुज़री हालत में भी पृथ्वीराज के सामने उसे बार-बार नीचा देखना पड़ा, किंतु अंत में वह पृथ्वीराज को पकड़ कर ग़ज़नी ले ही गया और वहाँ उसने उस की आँखें निकलवाकर कारागार में ठूस दिया। इधर चंद भी वहाँ पहुँचे और जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, पृथ्वीराज के हाथों शहाबुद्दीन को मरवा कर अंत में स्वयं एक दूसरे को मार कर सुरधाम सिधारे।

पृथ्वीराज रासो में आए हुए संवत् और उस में वर्णित घटनाएँ कुछ ऐसी निराधार और कल्पित-सी सिद्ध हुई हैं कि बहुत से विद्वानों ने इसे एक जाली ग्रंथ कहा है। रासो को जाली मानने वाले विद्वानों की ऐसी धारणा है कि इस ग्रंथ का संकलन या संपादन सं० १६०० के आस-पास हुआ होगा।

डॉ० श्याम सुन्दर दास के अनुसार वर्तमान रासो का प्रथम संग्रह या संपादन सं० १६२६ और १६४२ के बीच में ही हुआ होगा। नागरी

प्रचारिणी सभा काशी में जो रासो की प्रति सुरक्षित है, वह सं० १६४२ की है।

वर्तमान रासो का संकलन विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी के पहले मानने में पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा तथा अन्य विद्वानों को निम्नलिखित कठिनाइयाँ पड़ती हैं :—

(१) सं० १४६० में रचित हम्मीर महाकाव्य में चौहानों का विस्तृत इतिहास दिया गया है परंतु उसमें रासो के अनुसार चौहानों को अग्निवंशी क्षत्रिय नहीं माना गया है और न उस की दी हुई चौहानों को वंशावली ही इस में आधार मानी गई है। ऐसी स्थिति में यह धारणा स्वाभाविक है कि उस समय तक रासो को कोई नहीं जानता था; क्योंकि यदि इतना बड़ा ग्रंथ उस समय तक प्रसिद्धि में आ गया होता तो हम्मीर महाकाव्य का लेखक कुछ अंशों में तो अवश्य उसे आधार मानता।

(२) पृथ्वीराज रासो में रावल समर सिंह के ज्येष्ठ पुत्र कुंभा का बीदर के मुसलमान बादशाह के पास जाना लिखा है परंतु पृथ्वीराज के समय तक मुसलमानों का दक्षिण में प्रवेश नहीं हुआ था। बीदर का राज्य सं० १४८७ में अहमद शाह वली द्वारा पहले पहल स्वतंत्र रूप से स्थापित किया गया था। इससे भी वही धारणा पुष्ट होती है।

(३) पृथ्वीराज रासो में सोमेश्वर और पृथ्वीराज की मेवात के मुगल राजा से लड़ाई और उस में उस के कैद होने तथा उस के पुत्र वाजिद खाँ के मारे जाने की कथा लिखी है और यह भी एक बड़ी भारी गड़बड़ी है। मुग़लों का भारत में प्रथम प्रवेश सं० १४५५ में तैमूर लंग के हमले के साथ हुआ और उन का प्रथम राज्य-स्थापन बाबर के द्वारा सं० १५८३ में हुआ। ऐसी अवस्था में १४५५ से पहले रासो का बनना कैसे माना जा सकता है।

(४) महाराणा कुंभ ने वि० सं० १५१७ में कुंभल गढ़ के किले की प्रतिष्ठा की थी और वहाँ के मामादेव (कुंभ स्वामी) के मंदिर की बड़ी-बड़ी पाँच शिलाओं पर संस्कृत काव्य में मेवाड़ के उस समय तक के राजाओं का बहुत कुछ वृत्तांत लिखवाया था। पर इस में न तो कहीं

रासो का उल्लेख है और न महाराणा समरसिंह के पृथ्वीराज की बहिन पृथा से विवाह या शहाबुद्दीन के साथ लड़ाई में उन के मारे जाने का ही वर्णन है। इस से भी यही विश्वास होता है कि सं० १५१७ तक रासो प्रसिद्धि में नहीं आया था, क्योंकि यदि ऐसा न होता तो कुंभलगढ़ वाले लेख में अवश्य उक्त घटनाओं का उल्लेख होता। कुंभ ही की भाँति महाराणा राज सिंह ने अपने बनवाए हुए राजसमुद्र तालाब के 'नौ चौकी', नामक बाँध पर २५ बड़ी-बड़ी शिलाओं पर एक महाकाव्य सं० १६३२ में खुदवाया था। इसमें उक्त घटना का उल्लेख तो है ही साथ ही उस में रासो का नाम भी आया है जैसा कि पहले कहा जा चुका है।[1]

उपर्युक्त युक्तियों के आधार पर यह निर्भ्रान्त रूप से कहा जा सकता है कि वर्तमान रासो का निर्माण, संकलन, या संपादन सं० १५१७ और सं० १७३२ के बीच किसी समय हुआ होगा।

पृथ्वीराज रासो की भाषा बहुत ही अव्यवस्थित तथा अस्थिर है। भाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह किसी एक कवि या एक काल की रचना नहीं है, वरन् वह भिन्न-भिन्न काल के भिन्न कवियों की रचना है। ऐसी अवस्था में गड़बड़ी और भी बढ़ जाती है, और चंद की रचना यदि उस में कहीं है तो उसको और से छाँटकर निकालना

---

[1] ततः समर सिंहाख्यः पृथ्वीराजस्य भूपतेः।
पृथाख्यायाः भगिन्यास्तु पतिरित्यातिहार्दतः॥
गोरी साहिब दीनेन गजनीशेन संगरं।
कुर्वतोऽखर्वगर्वस्य महा सामंतशोभितः॥
दिल्लीश्वरस्य चोहाननाथस्यच सहायकृत्।
स द्वादशसहस्त्रैः स्ववीराणां सहितो रणे॥
वध्वा गोरीपतिं दैवात् स्वर्यातः सूर्यविंबभित्।
भाषा रासा पुस्तकेस्य युद्धस्योक्तोऽस्ति विस्तरः॥
राजप्रशस्ति महाकाव्य, सर्ग ३

असंभव जान पड़ने लगता है। कहीं-कहीं भाषा बिलकुल अपभ्रंश और प्राकृत से मिलती हुई है तो कहीं बहुत कुछ अर्वाचीन-सी हो गई है; कहीं व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नहीं है तो कहीं क्रियाएँ और कारक चिह्न आदि आधुनिक साँचे में ढले दीखते हैं। इनके अतिरिक्त कहीं-कहीं इस में स्पष्ट परिवर्तनकालिक भाषा का सच्चा स्वरूप अर्थात् पुरानी या प्रारंभिक हिंदी का वह रूप जिसे हम विक्रम की बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी की भाषा का रूप कह सकते हैं, देखने में आता है।

मोटे तौर पर प्राप्त रासो में मुख्यत: तीन प्रकार की भाषाएँ स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। एक तो वह जो प्राकृत और अपभ्रश से टक्कर लेती हुई जान पड़ती है और जिसमें व्याकरण आदि बहुत अव्यवस्थित और त्रोटक आदि छोटे छंदों में अनुस्वारांत शब्दों की बेतरह भरमार दिखाई पड़ती है। इसके समझने में सर्वसाधारण को बहुत कठिनाइयाँ पड़ती हैं। रासो का अधिक भाग इसी भाषा में है। उदाहरणार्थ—

छंद रसावला

बोल पुच्चै घनं स्वामि जंपे मन। रोस लग्गो तनं सिघ मद्द मनं।
छोह मोइं षिनं दांन छुट्टं ननं। ममरजं घनं भ्रंम सातुक्कनं॥
मेलि साह भरं षग्ग षोले रुरं। हिंदू मेछं जुरं मंत जा जंभरं।
दतं कढ्ढे करं उपमा डप्परं। कँद मीलं जुरं कोपि कढ्ढे करं॥

दूसरे प्रकार की भाषा जो उल्लिखित उद्धरण की भाषा से बिलकुल भिन्न है, वह बहुत कुछ आधुनिक साँचे में ढली हुई मालूम पड़ती है। उदाहरण के लिए—

चौपाई

एक पहुर में साँवत प्यारे। लोक हजार पाँच तहँ मारे।
ये साँवर पृथ्वीराज पियारे। के ते ईदल सँकर बुहारे॥
तब दल थंभ चंदेल जुहारे। सांवत युगे महल मँझारे।
बहलन मध्ये घाव सिवाये। फते-फते बर सांमत आए॥

तीसरी प्रकार की भाषा में कृत्रिमता बहुत कम तथा प्राचीन भाषा के वास्तविक लक्षण अधिक मिलते हैं। वह उपर्युक्त दोनों ही से भिन्न है। इस का भी एक उदाहरण दिया जाता है—

कवित्त

कहै साह हुस्सेन, सुनौ चहुआन जुझ्झ बत।
आज सीस तुम कज्ज, सेन साहब षडौं षत॥
मो कज्जै दाहस्स, करिग पृथिराज सरन भ्रम।
हौं उज डंसू अज्ज, करौं राजन अकथ क्रम॥
जपै सुराज पृथीराज तब, कहा अचिज्ज जंपौ तुमह।
अप्पौं सुछत्र गज्जन पुरह, सद्धि सेन साहाब गह॥

उपर्युक्त उद्धरण की भाषा में प्राचीन हिंदी के सब लक्षण वर्तमान होते हुए भी यह पहले उद्धरण की भाषा की भाँति प्राकृत या अपभ्रंश की नकल नहीं जान पड़ती। इस में न तो प्राचीनता प्रकट करने के लिए जान बूझ कर अनुस्वारांत अनगढ़ शब्दों की भरमार ही है और न इसमें कृत्रिमता ही आने पाई है। संभव है यही मौलिक रचना की भाषा हो, यद्यपि निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार हम देखते हैं कि और बातों के साथ भाषा की विभिन्नता से भी रासो की प्रामाणिकता में व्याघात ही होता है और कुछ इने-गिने विद्वानों को छोड़कर अधिकांश विद्वान् अब हताश होकर यही कह रहे हैं कि भाषा की दृष्टि से भी यह ग्रंथ अन्वेषकों के काम का नहीं। इस का स्पष्ट कारण यही है कि यह किसी एक निश्चित काल की रचना न होकर कई शताब्दियों के भिन्न-भिन्न कवियों की रचनाओं का एक गड़बड़ संग्रह हो गया है। दूसरे शब्दों में इस में 'क्षेपक' भाग इतना अधिक हो गया है कि असली ग्रंथ की मौलिक भाषा का अलग करना असंभव-सा है।

आगे पृथ्वीराज रासो के दो अंश दिए गए हैं। पहला अंश 'महोबा समय' है जो नागरी प्रचारिणी पत्रिका के ९ वें भाग में छप

चुका है। यह नानूरामजी की प्रति पर आधारित है। दूसरा अंश रासो का नवाँ समय (हुसेन कथा) है जो सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण से लिया गया है। इसमें पृथ्वीराज और शहाबुद्दीन के वैमनस्य का मूल कारण, युद्ध तथा शहाबुद्दीन का पकड़ा जाना आदि वर्णित है।

महोबा समय

दोहरा

मौहब्ब राज चंदेल कर। वोहो बलवंत राजाँन॥
पंचस दिष्ष के प्रचंड। महावीर बलवाँन ॥१॥
मोहवे राज चंदेल किन। घामलां भाग बिसराम लीन।
आरंभ घावना किया संज। निरमला निरउन भाग भंज॥
तहाँ देख रूप दरखत अनूप। देखे बिसित सुगंद चूप।
नौ नौ प्रकास फुलवार रूप। आंख पूँबना देष भूप॥
मकान रच्यां च्यार घायला पूर। अत्यंत महा बिकराल सूर।
अतीत राय अद्भुत चहुँवाँन। लिंगरि चंड पंडिर नान॥
तिन पास च्यार षिज मत्त होय। तवि आग बनाई धके जोय।
तहां भाग मंझ परवेस कीन। सुलताँन मंझ सुगंध लीन॥
रहियत्त रूषवारो बागवान। देषे साँवत बरजे तमाम।
उतरो नहीं इत बाग माँहि। चंदेल राय को हुकम नांहि॥
इम बागवान बर्जत तोय। इन बाग मंझ उतरे न कोय।
इकहूँ सावँत बोलत बचन। मो मती बरज इक रह बरन॥
मोदी लिथांन प्रथीराज भूप। सिंभरि सिंघ ना मोह दूत।
मोह सिंह घाव चालत्त राह। उज्जार भाग कौ करां नाह॥
उतरे जहाँ बादल अवास। पुक्कार तोयना राय पास।
चालत नहीं दिन च्यार हेक। तुम राय जाय बल करीम सेष॥
तब बागवान उच्चरत बैन। उन दई बान कावल केन।

परसुनी गाल चहुँवान कौन। षग तोल सिस मेल्यो भवन ॥
तव चलि मालनि करि पुकार। चंदेल राय राजा मंझार।
चदेल राय तोय क्रियाद्। मोय समय मारकिनो विषाद ॥
चंदे राय उच्चरत श्रेम। मोहराज भंह कहोक कम केम।
ऐसो जुक्रू बलवंत सूर। फुरमाय राय बोलब हजूर ॥
कहियत मालनि महरवांन। चहुँवान वंस मैं दिलीथाँन।
मादल महल में वसे जाय। षिजमत्तदार समुसियत धाय ॥
कर हुँकम राय पठाय दूत। पच्चिसूरके के हरियकूत।
चाली सुदूत भागन सद्रोव। जानत एक सावंत भेव ॥
पठे सुजाय बागन भम्झार। षिजमत्त धाव साँवत सार।
ललकार करन पच्चिसताम। सुन उठे च्यार सावंत नाम ॥
धावना पूर. अधभुत अपार। छोड़े बिसार षिजमत्तदार।
कर कोप कन बोले चहुँवान। धिरकार तोय छत्रि प्रवाँन ॥
धादला हवरामिन कन्न। धिक्कार तोय भाता संमन।
मुज पास आव देहत वीर। जियत्त जाय तुम जवा भीर ॥
धिक्कार तोय राजन समेत। तोय राय तेय सिर रेत रेत।
अब आव पास मोय करहु हत्थ। तुम संग किसे छत्रि सुअत्थ ॥
षगतोल बोल चांवड राय। पंडिर राय छत्रि सवाय।
लिंगरि अंग बोहोत्तरिय धाव। अतित राय संग्राम भाव ॥
सुवच्यार धाव कोपे सवाय। समसेर आँन कर पंझलाय।
पच्चिस मार पच्चास दिठ। पच्चास मार इक्क माजरिठ ॥
इक सौ मार दोय सौ जुआय। दोय सौ जो मार दस सस्त्र आय।
राय संग लोक ग्यारे हजार। पीछले लोक को कौन पार ॥
संग्राम मंडेपुर मंझार। सांवत फौज पर षाग झार।

चौपाई

एक पहुर में सांवत सारे। लोक हजार पाँच तहँ मारे।
ये सांवत पृथिराज पियारे। केते ईंदल संकर बुहारे ॥
मारे लोक हजार अठारा। उमय हूर इक बीस सिंगारा।

दोउ घरिय पच्चिसूँ पूं गे । धूम ध्यान के चुषट पुग्गे ॥
तापिछ तोगच्यार दस मारे । पिछले पहुर पचास सिंगारें ।
तब दल थंभ चंदेल जुहारे । सांवत युगे महल मंझारे ॥
महलन मध्ये घाव सिवाये । फते फते कर सांमत आये ।

कबित्त छप्पय

लूटन नगर मौहबो आँन चहुँवाँन दी रायत ।
मोह चित्त आनंद जित चहुवाँन न पावत ॥
षुलरे चहुवाँन जान करब अरुपडव ।
सिरजीत अप्रबल मारि जिसे नव षडव ॥
विन सांवत मनुसूर समद से नर पड हंके ।
मझदेश मारवि नाँव सँमर सूँ सूके ॥
चक्रवंत चहुँवाँन तास घर छत्रि इधक नर ।
सिष्ट सितसा पुरस भव में राजन् इमस भर ॥
मोहौब मझार संग्राम सुध इधक इधक जस जस उत्तर ।
साँवत इस प्रथिराजरा भरदाय चंद किरल कर ॥

दोहरा

सुनहि बात मातन द्रिगन उपकरत अंभेर ।
मांनूं क्रोध में कोप कर कर में कर समसेर ॥

छंद जात भुंजगी

सिर कोपियो राय चंदेल भ्रांत । लघुभ्रात किमिर चाले सुराँत ।
अस बंस छतीस संग्राम सुरं । महामूष साथे मुगंट हजूरं ॥
तहं संग सूरं असुरं अपारं । महाभारथि अेम सासूर भारं ।
तिहं जात कुल नाम सांवत होईं । मह प्रकट नरमिरभ ताल जोईं ॥
तहं जुद्ध संग्राम सांवत प्रवानं । येहि पौह मलिरना कौन ज्यानं ।
तिहं मार षग्गं करूं टूक टुक्कं । नहि औरकं मीर ना नाह ढक्कं ॥
अनि क्रोधकं कोप फौजां चालं । जिमि इंद्र घटान सावन कलानं ।
अगलान पानि पिछलान कोय । तिहं मन संग्राम भारत्थ जोय ॥

तह चलिय मालहे माल डंडे । तहाँ मार बलवाँन किय षंड षंडे ।
असि भिद्ध फौज चलाई तहारं । तपे जो मनाजोर सौहाल झारं ॥
तिहं मोहोब बान कब्बान कस्ते । षगब्बार तो बार सोभा रसस्ते ।
हस्ती घूमते चले फौजान मध्धं । तुरि पीठ पाषर कसे तेग बध्धं ॥
यहि विधना फौज सावंत घेरे । तहं लौक महलन को और दौरे ।
तिहं राय नोंनम भारत्थ होई । महाभीर बलवान मरिया न सोई ॥
महलां मंझ सावंत निचत्त सोही । मानों डरे नासक्त नासं महोही ।
तब उच्चरे भने भारत्थ रायं । लघुभ्रात कुँजीत कहां दिस जायं ॥
तुजे मार षंगा धरा टूक डारे । मेरे भ्रांत निपंच दससीस सिरे ।
असावान जवान भारत्थ उचारे । तुम लोक हजार पचास मारे ॥
असा कौन बलवान मोय थान आवे । तुजे धावना भ्रांत भवना सिवावे ।
तुज सांमने मुज्ज सों पाव मंडं । तुज मार षंगा करु षंड षंडं ॥
ऐसो कौन बलवांन तुम कौन सूरं । तुम किसे ना पास छत्री हजूरं ।
बक बोल सांवंत वयने उचारं । मुझ राय चहुँवान नासूर भारं ॥
मैहथां नहि दान दिल्ली हजूरी । प्रथी राजरि पास षिजमत पूरी ।
तहां षरारे महा बैन बोले । मैहे ता सरूपं षर्ग तोले ॥
तब होय सांवंत क्रोधं अपारं । करे तोलवे चंद बेदे त्रिवारं ।
पग मेटिये घाव अनवार तेनं । तहां जुद्ध संग्राम नाकोड मंडनं ॥
दल सांम हहालिया सूरभिरं । मनु आप संग्राम सांवंत घिरं ।
तिह मार सांवंत अनन्न तोले । हहक्कार हक्कार झक्कार बोले ॥
हले ऊलटे एम सांवंत आरं । तहां मार संग्राम सांवंत जोरं ।
तबे चालिये वांन प्रबाँन बेनं । जिनू सांमैहै च्यार सांवंत मेनं ॥
दले टुक टुकं तिहां षाग झाटं । तहां चंड पंडिर चाले निहाटं ।
वहे च्यार तरवार एके सीरिसि । इमे राय चहुँवान अतीति सौसि ॥
महा जुद्ध होषै संग्राम सूरं । तहाँ झुंषिये आन आजेक रूरं ।
तहँ सामिये कौन नामिर ढक्कं । महा भारथि तास कै कंठ सुक्कं ॥
तनंगां आला बहु जुद्ध जियं । बहे फूल धारा मनुं बीज दीपं ।

तां समिय सूर अन्नेक हारे । यना च्यार खर्व बहु लोक मारे ॥
बहे रक्त नाला न दिजे मनिरं । भये जोगनि सट्ठ त्रपत्र त्रमिरं ।
परे सुर गयेंद सानेक वारि । सबे च्यार समसा संन्यास मारि ॥
देषे सुरना हाथ भारत्थ राई । तये राय नौ लोक भागे न जाई ।
जिनु मार षग्गां सभे दल्ल ढाई । महा भारथ षूब तरवार वाही ॥
इमे पाछलि भौन भारत्थ जादे । तहां पास संग्राम सावंत ठाढे ॥
जिनु मार षग्गां सबे दल्ल ढायौ । अनुजस सामंत चंदेल गायौ ॥

हुसेन कथा

दोहरा

संभरिवै चहुँआन कै, अरु गज्जन वै साह ॥
कहौ आदि किम बैर हुअ, अति उतकंठ कथाह ॥

कबित्त

बंधव साहि सहाब । मीर हुस्सेन बान धर ।
निज्ज वान सु प्रमान । वान नीसान बधै सुर ॥
गान तान सुज्जान । बाहु अज्जान वान बर ।
भेव राज परवान । उच्च जस थान जुभ्झ भर ॥
उद्दार चित्त दातार अति । तेग एक बंदै विसब ।
संकंत साहि साहाब तिन । तेज अजै जयमंत अब ॥
इष्षि बधु आचार । मीरं उमराव जपि जस ॥
एक पात्र साहाब । चित्ररेषा सु नाम तस ॥
रूप रंग रति अंग । गान परमान विचष्षन ॥
बीन जान बाजान । आनि बत्तीसह लच्छन ॥

दस पंच बरष वाचा सुबच । सुप्रसाद साहाब अति ॥
आसक्क तास हुस्सेन हुअ । प्रीति परसपर प्रान गति ॥
एक्क सुदिन सुविहांन । साह हुस्सेन सुबुल्लिग ॥
वे काफ़ुर आतस्स उतँग । दह दिसि नह डुल्लिग ॥
पैसंगी पासंग लष्ष लष्षां नलवाही ॥
सांई सौं संग्राम । हक्कि हैवर गुरदाही
गर्दन गुराव नहि मंहि मषां । षांषवास अष्षिय घरह ॥
अन हल्ल नाल लभ्भय रवन । करौं तुच्छ तुभ्भी बरह ॥

दोहरा

सुनिअ बैन साहाब तब । प्रीत न छंडी बाम ॥
कोपि कह्यौ सुरतान तब । हनौ कि छंडौ ग्रांम ॥

कबित्त

सुनिय बत्त हुस्सेन । सेन अप्पन साधारिय ॥
छंडि नयर निस्संक । संक मन साह नसारिय ॥
निसा जाम इक आदि । लई सो पात्र परम गुन ॥
तरुनि पुत्र परिवार । सज्जि सब साज सु अप्पन ॥
परिगह सु अप्प अग्गैं करिय । षांन षांन बंधी सिलह ॥
संचस्यौ नैर नागौर इह । तजिय देस निज गंठ ग्रह ॥

दोहरा

लै परिगह हुस्सेन गय । दिसि प्रथिराज नरिंद ॥
संभरि वै संभारि कैं । मनु आयौ ग्रहदंद ॥

कबित्त

पातिसाहि तद्दिन नरिंद । साहि पीरोज प्रसन्नौ ॥
घर घर साहि घरंन । छित्ति नीसान दिवन्नौ ॥
पर पठान उंचीगु । मान अगिवान अगन्नौ ॥
तिन में रष्यौ साहि । आन गज्जन घर थन्नौ ॥
लभ्भै सुमीर जंमी जहर । दुनियां दिल लगि दुअन थां ॥
हुस्सेन मीर सल्लाम करि । गौ चहुआनह पास थां ॥

पारधि पहु प्रथिराज । रमै षट्टू पुर पासह ॥
वहिल त्रीस चित्रक्क । ससिष्र रेसम घर रासह ॥
सो कुरंग फंदेत । डोरि बहु बंधि विनानिय ॥
जाम एक दिन आदि । मध्य पेलै मृगयानिय ॥
आयौ बसाहि हुस्सेन तहँ । सुन्यौ राज मृगया समय ॥
बुल्लाय दास सुंदर पित्रिय । पठ्यौ प्रत्ति चहुआन तय ॥

दूहा

उत्तन ठाम सुछांह जल । करि मुकाम बलवीर ॥
पुलि डेरा बिधि बिधि बरन । तहां बयट्ठौ मीर ॥
डेरा हरम सुपिट्ठ रषि । चिहु पष्षा बर मीर ॥
पासबांन कुल सील सम । पास रष्षि बर नीर ॥
सुंदर दास सुपास गय । जहां राज प्रथिराज ॥
मिलिय बि बिधि पुच्छै कुसल । कहो मीर सब साज ॥
बोलि मंत्रि कैमास बर । बोलि चंद पुंडीर ॥
राव पजून प्रसंग नर । गोयँद रा गुन नीर ॥
मेछ मुष देषे न नृपति । विपति परी दुहु क्रंम ॥
इक सरना इक ग्रहन । इक धर रष्षन ध्रंम ॥

गाथा

मनसा धारि विरंचं । दच्छिन पग अंगुरी नषयं ॥
संभू मंन नरिंदं । सत जुगं आदि कीन पैदासं ॥

कवित्त

संभू मन वरदान । लियौ तप जोर ब्रह्म पहि ॥
सरन रष्षि वसुमती । होत कलपंत काल महि ॥
नारद धरत बताइ । मच्छ रूपं जगदीसं ॥
दस हजार जोजनं । शृंग रचि ऊरध सीसं ॥
करि सत्त नाव तिहि पर धरे । अनकंपित जिम गैन धुम्र ॥
ऐसेक चंद कहि पीय सम । गहुअ तंत तप आगा हुअ ॥

दूहा

संक्रर गर विष कंद जिम । बड़वा अगनि समंद ॥
तै रष्षहु चहुआंन तिम । षां हुसेन कहि चंद ॥
मिलिय सु सुंदर दास तहँ । पुच्छिय त्रिधि विधित्रत्त ॥
कहौ सुषी त्रिय सब वित्रर । विरस साहि सौं सत्त ॥
पात्र एक साहाब संग । हूर नूर गुन गान ॥
लै आयो हुस्सेन इत । सरन तक्कि चहुआंन ॥

कवित्त

मोरद्धज कै सरन । गयौ दुज होइ सु अर्जुन ॥
सिंह रूप धरि कन्ह । मंस मंग्यौ करि गर्जन ॥
दैन चीर अरधंग । नृपति सिर कर वत धारयौ ॥
देषि महा सतवंत । प्रगट गोविंद उचारयौ ॥
धनि धंनि मात पित धंनि तुअ । सरनागत ध्रंम तै रषिय ॥
षित्री कहंत कविचंद सौं । संभरि वै तिहिस्रम लषिय ॥

दूहा

गयो राज सामंत सम । मिलिग साह हूसैन ॥
आदर न्रप किन्नौ अदब । विवह प्रसंनिय बैनं ॥
लिए सथ्थ प्रथिराज पहुँ । गयौ सुपुर नागौर ॥
धरमायन कारथ धवल । दिसि दच्छिन दिय ठौर ॥
भोजन भष्षे विविध वर । बहु आदर विधि कीन ॥
मान महातम रष्षि राज । राज उभय हय दीन ॥
धरिय डोर हुस्सेन सिर । है बंधिय हैसाल ॥
अप्प सुचिन्हिय अवर दिन । रज पट्ठवै रसाल ॥

कवित्त

तरकस पंच गिरंम । तीन प्रति षगत तीन सह ॥
षुरासान कंमांन । पंच परमान मान जह ॥
गज सु एक सिंघ लीय । सेन तन मद्द रत्ति वह ॥
गुंजत मधुप कपोल । गज्ज भज्जे प्रेमल सह ॥

इय पंच साजि साकति सुनग । ऐरा की कुल उच्च जिहि ॥
अंमोल बज्र इक लाल दोय । रिंझ समिप्पय राज सहि ॥

दूहा

राजन रष्षिय सब्ब इह । प्रनवेऊ प्रति मंत ॥
उभय परस्पर गंठि परि । संचिय पेम सुमंत ॥
च्यारि दूत अजमेर पुर । थिर मुक्केसु विहान ॥
आषेटक बन देषि कै । तक्कि गए चहुआन ॥

कवित्त

आषेटक चहुआंन । पास हुस्सेन संपत्तौ ॥
बार आइ चहुआंन । भाइ घन ताहि दिषत्तौ ॥
नीति राव कुटवाल । तास ग्रहराज सु अप्पिय ॥
वर कैंथल हांसि हिंसार । राज पट्टौ दै थप्पिय ॥
इह चरित देषि सब दूत तब । जाइ संपते साहि दर ॥
चरवर चरित जुग्गिनी पुरह । कहिय बत्त से मुष्षंधर ॥

पद्धरी

संभरिय बत्त साहाब दीन । उच्चरिय बैन अति कोप कीन ॥
मुकलौं इत चहुआंन पास । कट्ठौ हुसैन जो जीव आस ॥
बोलयौ षांन तातार तब्ब । संजाव षांन उमराव सब्ब ॥
पुच्छी सु बत्त किय इतसार । थप्पी सु बत्त षुरसान बार ॥
आरब्ब सेष लीनौ बुलाइ । वैव्रद्ध व्रद्ध बुद्धी सुताइ ॥
वंछै सु पेम सक लेहिं साहि । लज्जी अनंत आदब्ब थाहि ॥
उचरयौ बैन साहाब भास । आरब्ब जाहु चहुँआंन पास ॥
अप्पै जु पात्र हुस्सेन जाम । लै आउ सम्म हुसेन ताम ॥
मुक्कों सु गुनह कीनौ पसाव । मैं दीन पच्छ करि षिमा दाव ॥
छंडै न पात्र हुस्सेन अब्ब । चहुआंन मिलै सामंत सब्ब ॥
जंपियौ वयन चहुआंन साइ । कढ्ढौ हुसेन नागौर थाइ ॥
अज्जीज षांन तुम सच्च उच्च । लिष्यौ सुपत्र हम परम रुच्च ॥
कढ्ढौ हुसेन तुम देस अंत । बंच्छो जो पेम मानौं सुमंत ॥

रष्या हुसेन जो असु परेस। चतुरंग सेन सज्जौं विसेस ॥
भंजौं सुनैर नागौर देस। जीवंत बंदि बंधौं नरेस ॥
सामंत सूर सब करौ अंत। धौं सुबंध सा तरुनि कंत ॥
उच्चरि गुमान तन बत्त थूल। संप्रेष कहैं मानौं स मूल ॥
तुम जाउ सिघ्र नागौर वाम। मति करौ एक षिन घर विश्राम ॥
सै तीन दीन असवार सथ्थ। आरुहन दीन नरयान रथ्थ ॥
संचरयौ सेष आरब्ब राह। दो पष्ष पत्त नागौर थाह ॥

दूहा

गय आरब नागौर घर। मिल्यौ साह हूसेन ॥
भोजन भष्ष सुभाव किय। विवध प्रसन्निय बैन ॥
कही वत्त हुसेन सम। जो कहि साह सहाब ॥
नह मंनिय सोमंत हिय। दिय आरब जबाब ॥
गयो सेष आरब्ब दर। लही षवर प्रथिराज ॥
बोलि मझ्झ मंडिय महल। सामंतन सब साज ॥
मंझ महल आरब्ब गय। मिलि मंनिय सनमान ॥
दै आसन पुच्छिय कुसल। चाहुआंन सुलतान ॥

पद्धरी

उचरयो बैन आरब्ब सेष। सल्लाम बहुत पति एक एष ॥
कढ्ढौ हुसेन तुम देस अंत। साहाब साहि बंछौ सुमंत ॥
जुगमीत अथ्थि उबरै न आदि। इस ताउ भाउ बहु बैन सादि ॥
जंपै सुबैन जे कहे साहि। कढ्ढी न वत्त गंभीर भाहि ॥
संभलिय वत्त प्रथिराज मंत। भ्रिकुटी करूर द्रिग रत्त जंत ॥
आरत्त मुष्ष स्रुत श्रोन बुंद। कलमलिय कोप रोमंच जिंद ॥
उच्चरयौ कोपि कैमास बानि। अतासनि आर्य सिंच्यौ सुजानि ॥
आरब्ब बोल बोल्यौ विरुर। सुरतान जानि जंप्यौ गरूर ॥
प्रति बुद्ध लहौ प्रथिराज नूर। अतुलित जुद्ध सामंत सूर ॥
हुस्सेन आइ प्रथिराज थान। जोधांन भ्रंम पत्रीय आन ॥
जंपै सुबैन चहुआंन कन्ह। द्रिग पानि रत्त रोमंच तंन ॥

रज भ्रम विषम बुम्भ्भैन न साह। अनि राह जेम जंपै बिराह ॥
गज्जैं न लज्ज कोपैं मृगिंद्र। उतकिष्ट सूर सिर सहि न निंद्र ॥
गुरु तज्जि जंप्पि गोइंदराज। लग बैन गीर गरु वत्त साज ॥
संज्वाल तेज सम तेज बान। निरभै सुतासु चंपै पयान ॥
उच्चर्यौ चंद पुंडीर कोप। आदीत भाल रस दून ओप ॥
गज्जनौ कौंन केतुक सहाय। गरु अत्त बत्त जंपैं कहाव ॥
हुस्सेन आइ प्रथिराज थान। सरनै सुकौन कढ़ूढैं नियान ॥
दल सज्जि सीम चम्पै सुसाहि। दल भंजि ग्रहै प्रथिराज ताहि ॥
मानी न सेष आरब्ध बत्त। सामंत सूर देषे विरत्त ॥
आदरह मंद तजि उद्यौ सेष। भंष्रौर बदन द्रिग बढ़ि तेष ॥
पुच्छीय जुगति नृप महल जानि। उठि गर्व दुष्ष मन हीन मानि ॥
चढ़ि चल्यौ सेष रह साह देस। गज्जनैं गयौ मन मानि रेस ॥
गय महल साहि मिलि कहिय बत्त। सिर धूनि रीस करि नैन रत्त ॥
उठि गयौ साह बद्दल महल्ल। आसंन साजि बैठों सथल्ल ॥

कवित्त

सजि आसन साहाब। साह काजी मत बैठो ॥
बोलि मम्भ्भ तत्तार। बोलि आरब दिन जेठौ ॥
मीर जमांम कमांम। षांन षुरसांन न्यान बर ॥
षांन रहंन महंनं। षांन रुस्तंम महा भर ॥
हाजीय प्रांन गाजीय षां। षांन जमन बंधव सुत्रिय ॥
गजनीय षांन महुबत्ति षां। मीर खान सबबोलि लिय ॥
कहै साहि साहाब। अहा तत्तार षांन सुनि ॥
जिन जुमत्ति उपज्जै। कहौ सब षांन जानि मन ॥
गौ आरब चहुँआन। फेरि आयौ सु सुनिय सब ॥
सरन रष्षि हुस्सेन। बोलि सामंत राज अब ॥
जंपिय ततार संजो सयन। हनौ राज प्रथिराज रन ॥
है गै सुबंध बंधौ रिनह। मेरे कि गहि छुट्टै सुतन ॥

दूहा

कहैं षांन सुरषांन तब। अहो षांन तत्तार ॥
चाहुआंन सामंत बल। चिंत सुविविध विचार ॥
कहै सेष आरब अतुल। बल सामंत नरिंद ॥
अवे न तुम दिष्षिय नयन। सजो सैन बिन बंध ॥
कहै साहि आरब्ब तुम। कहौ सूर सामंत ॥
कहा क्रांति प्राक्रम कहा। सत्ति पयं पहुँ तंत ॥

कवित्त

इष्ट मंत्र उच्चार। दिष्ट उट्ठ हित इक्क थर॥
क्रमत पेषि पचीस। मिलत सत एक इष्षि पर॥
सहस सुभर बाहंत। एक सामंत पराक्रम॥
जामह दुप्पल कटैं। ताम बाधंत बीर दस॥
सिर परै सुहक्के धर भिरै। परैं श्रोन उठै सधर॥
असिधार सूर उट्ठैं किलकि। एह पराक्रम सूर नर॥
हस्यो षान तातार। एम हाजी सब बद्दिय॥
जय रुनहीं बिन बषत। मरन भै डरै न कद्दिय॥
कहि आरब तत्तार। अहो सामंत न दिष्षिय॥
अतुल तेज बल अतुल। अतुल बलदेव सुरष्षिय॥
वे साम ध्रंम रत्ते अतुल। अतुल मत्त कैमास भर॥
उमरा अनंत देषे अनत। अतुल बत्त पहुँचे न नर॥

दूहा

कहै साहि गोरी गरुअ। अहो षांन तत्तार॥
कल्हि तरीक सुउझ दिन। चढ़ि अरि सद्धौ सार॥
उठि गोरी दिन्ने बहुरि। गयौ सुअंदर साह॥
बहुरि षानि मीरं बरा। अति चंचल तुर ताह॥
तपै साहि गोरी सबर। चित सालै चहुआंन॥
वैरोचन की सांष ज्यौं। कीटी भ्रंग प्रमान॥

अरिल्ल

जग्गत निषि झंषत सुरतानह। घरी सत्त रहि सेष प्रमानह ॥
जगि आयस दिय दीन निसानह। चिंता साहि चढ़ी चहुआनह ॥

मोतीदाम

भर सुर तीन धुनक्क निसान। चढ्यौ अश्व सज्जि सिल्है सुरतान ॥
चढ़े सब षांनसु उम्मर मीर। सजे सहनाइ बजे रस बीर ॥
बजे सब बाज भयानक भाइ। चितै हिय बुद्धि जिनै जन नाइ ॥
चढ्यो सब सज्जिय सेन गरिष्ट। परी दस दिग्ग सुधूधरि दिष्ट ॥
सबद्द सियांन सुसेन कपोत। सनमुष साहि दिष्यौ दल दोत ॥
भयौ दिसि वामिय कग्ग करार। रुक्यो दिवि घोमय धूम गभार ॥
सनमुख देषिय जंबुक सेन। विरो मिलि चंपहि भग्गहि तेन ॥
क्रमें तस उप्पर गिद्ध असंष। चवै सुर रुद्र पसारिय पंष ॥
गही सुरतान सु आरब बग्ग। रहौ दिन आज सगुन न जग्ग ॥
रहै कुहु अज्ज ततार सुदिन्न। गही चढ़ि चल्लहु मन्नि सगुन्न ॥
कहै सुरतान अहो तुम क्रूर। भयै भय म्रित्यु सु झंषहु नूर ॥
कहा बल जुद्ध कहौ प्रथिराज। कितौ बल सामत युद्धिह साज ॥
हनौं रन सूर जिके चहुआंन। गहौ युद्ध राज सुषंडिय प्रान ॥
कहा डर काफ़र दासहु मुझ्झ। कहा भर आवध आगरि जुज्झ ॥
नंमनि चंमकि चढ्यो सुरतान। टमंकिय गज्जिय नद्द निसान ॥
जल थ्थल होय थल जल भार। अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ॥
मिल्यो इक साहन लष्ष समुंद। समुझ्झिन कंन भयो सुर मुंद ॥
चल्यो सुरतान मिलान-मिलान। बढ़ी अति चिंत दुनी चहुआंन ॥

दूहा

गयौ साहि चहुँआन घर। दिए मिलानमिलान ॥
गए सुचर नागौर पुर। कही षबरि सुरतान ॥

कवित्त

सुनिय षबरि प्रथिराज। कहिय जे चरन चरित सह ॥
बोलि मंत्रि कयमास। चांमंड गुझ्झ गह ॥

बोलि चंद पुंडीर । बोलि षींची प्रसंग बर ॥
बोलि गज्जि गहि लौत । बोलि का कन्ह नाहि नर ॥
बोलेति सब्ब सामंत भर । कही बत्त सो कहिय चर ॥
सामंत मंत भर सब्ब मिलि । सिंधु सुचंपिय साह घर ॥

दूहा

कहत सब्ब सामंत मति । चढ़ि दल सजौ समंकि ॥
सुनिब मंत्रि कयमास कहि । करहु निसांन टमंकि ॥

गाथा

भय टामंक निसानं । पत्तं निज ग्रेह सूर सामंतं ॥
बाजे बज्जि अनेकं । हय मंगे राज चहुआंन ॥

पद्धरी

आये सुताम गुर राम राज । पढ़ि पत्र मंत्र दुज बोलि साज ॥
ग्रह नव सुदान विधि विद्ध दीन । वेदंत विप्र अभिषेक कीन ॥
चव सहस हेम दिय विप्र दान । अस्सेष वेद त्रय साम गान ॥
दिय दान भूरि पंषी सुचंड । दीनौ सुअथ्थ जिन हथ्थ मंडि ॥
जै जया जीह जंपी सु आन । मंगल सवार चव पट्टि गान ॥
आसिष्ष वयन चहुआंन रान । गुरु राम जज्जि आहुत्त आन ॥
दिय तिलक पत्र पढ़ि वेद मंत्र । आरोपि कंठ हन मंत्र जंत्र ॥
कज दरस वाम चक्कोर आनि । कब्बूत जानि जंपै सुबानि ॥
पंजर सिपंड किय दरसि दिस्स । आदरस दिष्षिकिय असि परस्स ॥
चिंत्यै सुचित्त जपि उमय कंत । मंग्यौ सुहंस हय तेजवंत ॥
षिची सु जाति जोवंनपुर । बंच्यो कि मनौ नृप रथ्थ सूर ॥
साकत्ति सब्ब सज्जी सु बानि । धरि और हेम नृप अग्ग आनि ॥
चंपै सु चढ्यौ नृप वाम पास । जै जया सद्द आयास भास ॥
चढि चल्यौ बंधि आवद्ध राज । समंत सब्ब चढि सूछ साज ॥
नीसांन ताम बज्जे सु घाव । आकास धरा फुट्टे निहाव ॥
संबत तीस अरु पंच माघ । तेरस्स सेत सुभ जोगि साध ॥
सजि सथ्थ चढ्यौ हुस्सेन सेन । बंधे स तोन भर मीर ऐन ॥

हुस्सेन सथ्थ मलि सहस एक। उर सामि ध्रंम बंधैं सुतेक ॥
प्रथिराज आइ क्रिन्नौ सलाम। आदर अदब्ब दिय राज ताम ॥
मिलि चल्यौ सेन भर तेजवंत। बज्जे सुबज्ज जय हेमवंत ॥
दस कोस जाइ दिन्नौ मेलान। डेरा सुदीन जल सुभ्भ थान ॥

दूहा

देखि चरित नृप साह चर। गए पास सुरतान ॥
कहैं सेन संमुष रजै। चढि आयौ चहुआंन ॥
सुनि चरित्त साहाब चर। दिय निरघोष निशान ॥
चढ्यौ सेन सज्जे सिलह। करिब फौज सुरतान ॥

मोतीदाम

चढ्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज। बजे वर बजन वीर असोज ॥
भयौ गज घुंमर घंट निघोर। मनौं झुकि क्रंन्न भयौ सुर रोर ॥
गजैं गज मद्द मनौं घन भद्द। चिकार फिकार भये सुर रुद्द ॥
तुरंग महींस कडुक्क लगांम। खरक्किय पष्पर तोन सुंतान ।
चमंकत तेज सनाह सनाह। करै धर पद्धर राह बिराह ॥
भलक्कय टोप सुटोप उतंग। मनौं रज जोति उद्योत बिहंग ॥
दमंकत तेज कमान कमान। छितं चित मीर रही मइमान ॥
भले भर सांइय ध्रंम सगत्ति। लषैं धर जीयन जत्तिन गत्ति ॥
नमैं निज सांइय पंच बषत्त। सिपारह तीस पढै दिन रत्त ॥
नमैं निज सेष धरंम सरंम। क्रमैं रह रीति कुरान करंम ॥
दिढंबर बाचरु काछह मीर। तरुंनिय एक रतैं बर बीर ॥
सबद्दय बेध करैं तम तांह। भमंतिय पंषि हनैं छित छांह ॥
धरै इक एक अनेक सुवान। झलक्कत मुंड तवल्लह मान ॥
धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस। सिरक्कहि बंबर धुंमर दीस ॥
अनेक सुवान अनेकय रंग। चढ़े सब मीरह सेन अभंग ॥
अनेक सुवान अनेकय ब्रंन। समुझि न हीय समुझि न क्रंन ॥
पयं भर अंग अनेक सुभार। अनेक सुजाति अनेक सुतार ॥
सिरंकिय मुंडिय मुंड सु अद्ध। जुवट्टिय उट्टिय जानि अनद्ध ॥

करंतिय झंडिय रंग अनेक । फुरक्कहि झंषहि झंषह तेग ॥
चले धर बान सुसद्धिय दिठ्ठ । अगें हथ नारि अभूल गरिठ्ठ ॥
अगें किय मद्द सरक्क सुभार । मनौं पय चल्लत पब्बत लार ॥
ढलैं सिर ढाल अनेक सुरंग । फरैं फर हारि उभारिय अंग ॥
बंरनह झंडय मंडय जूव । मनौं षट रित्ति अनंगह रूव ॥
भई षुर डंबर अंबर रेंन । जलं थल पद्धरि संक्रमि सेन ॥

दूहा

जथ्थ तथ्थ संक्रमि सयन । उंच थान जल थांन ॥
दिय सारूडंप अचल पुर । किय मुकाम सुरतान ॥
घरी सुनव निसि सेष चर । आय पास चहुआंन ॥
गये पास कैमास जपि । चरित सब्ब सुरतान ॥

अरिल्ल

जगि मंत्री कैमास महाभर । गंठिय चित्त चरित्त कहिय बर ॥
जग्गिय सथ्थ सज्ज निस सेनं । गयो राज यह सज्जि द्रुगेनं ॥

गाथा

जग्गिय नृप चहुवानं । कहियं कैमास सज्जि सुरतानं ॥
बज्जि निहाय निसानं । सजि बंधि सेन सुरतानं ॥

त्रिभंगी

सयंन सब्बानं, किय सज्जानं, बज्जि नीहानं, नीसानं ॥
बंधे सिलहानं, निज, निज थानं, पष्षरि पानं, असगानं ॥
निजकिय तं न्हानं, दीन सुदानं, सेव समानं, हंसानं ॥
मंने बिप्पानं, चंडी सानं, आसिष्षानं, जंपानं ॥
तुलसी तिन मंजरि, चक्र तनं धरि हरि चरनां चारि जल सारं ॥
गिलकी सत कंतरि, कृष्ण उरं धरि सांज सबं करि जूझारं ॥
मौजह हलहं धरि, राग तंब परि, सज्जि बंग तरि, करि ढारं ॥
मंगै हय राजं, साकति साजं, पष्षरि भ्राजं सुष राजं ॥
हिंदू अंदाजं, तेज महाजं, कीरति काजं, कुलराजं ॥

नामं जा हंसं, उत्तिम बंसं, पुर गिरि जंसं रजिमंसं ॥
पडुदिय आएसं, सेव नेरसं, •कस्सेतं सं, उत्तंसं ॥
चढ्ढयौ चहुवानं, मंगे जानं, पै वामानं चंपानं ॥
चिंते चितानं, चित्त सुभानं, जग्ग इसानं ईसानं ॥

कवित्त

चितं ईस चहुंआन । चढ्यौ हय सज्जि सु आवध ॥
बोलि सूर सामंत । बान सज्जे सुवान जुध ॥
जय हर ! जंपे राज्ञ । चल्यौ थप्परि है कंधं ॥
जै मन्निय है राव । करी कसि मुष ऊरद्धं ॥
षुदंत धरा षुरषुर विहर । करिय लोह दंतै क्रसक ॥
नाचंत तेन पैरव सुथल । धरनि ध्यंम धुज्जिय धसकि ॥
गयौ राज चहुआंन । साह डेरा हुस्सेनह ॥
सुनी षवरि बर बीर । सज्जि आयौ सथ्थैं सह ॥
करि गोसल्ल पवित्र । होइ चिंते रहमानं ॥
बंधि सिलह है मंगि । बीर बज्जे नीसांनं ॥
चढ़ि वाह सज्जि सथ्थिय सयन । सीस नम्मि सलमां किय ॥
देषे सुबीर विकसे सुमना । बर सनमान अतिंत किय ॥

गीता मालची

चढ़ि चल्यो राजं सेन साजं । बीर बाजं बज्जए ॥
नद्दं निसानं सजे बानं । गोम गानं गज्जए ॥
फौजें हलक्की बीर बक्की । सूर जक्की जंभर ॥
बिरदैत बीरं जुद्ध धीरं । आय भीरं धर धरं ॥
असमंस हासं सांइ आसं । उच्च भासं अजरं ॥
लीकं सुबच्छं सुद्ध कच्छं । हूअ गच्छं धीढरं ॥
सजि वान पथ्थं दन्त अथ्थं । राज सथ्थं संमिलं ॥
चल्लै सबल्लं, ढाल ढल्लं । गज्ज मल्लं भुम्भिभ्भयं ॥
घंटा सुघोरं भेरिरोरं, तयं तोरं सद्दयं ॥
संषं सबद्दं नीर नद्दं, सूरं बद्दं बद्दयं ॥

घर पाइ धक्की है षुरक्की, गैग हक्की पष्षरं ॥
उड्डी सुरेनं मुंदि गैनं, आइ सेनं सद्धरं ॥
गिद्धी सुतथ्थं, चली संथ्थं सीस रथ्थं अच्छरं ॥
निरषैं सुवीरं निज्ज नीरं, अस्स हीरं मच्छरं ॥
पुट्टैं समीरं बहि सधीरं, साइ भीरं संभरं ॥
सेनं सहस्सं तेय दस्सं, झुम्झ्झं जस्सं घिद्धरं ॥
नारद्द नद्दं बीर बद्दं, गोम सद्दं तद्दयं ॥
सामंत सूरं चढे नूरं, जुद्ध भूरं जद्दयं ॥
सथ्थं सृङ्गारं मंस हारं ना उचारं जैकरं ॥
श्रोनं सभष्षी भू चरष्षी षैचरष्षी षेचरं ॥

दूहा

चरित लष्ष साहाब चर । गए पास सुरतान ॥
सजी सेन सामंत पति । आयो जोजन थान ॥

विअष्षरी

सुनि चरित्त साहाब तास चर । बोलि मीर उमराव महा भर ॥
दिय निरघात घाव नीसानं । चल्यौ सेन सज्जे सब्बानं ॥
वाजित्र वीर अनेक सुबज्जे । घर पडिहाय सुगोमह गज्जे ॥
डग्यौ सूर चढ्यौ सुरतानं । बज्जि निहाव नालगिरि वानं ॥
फौज सुपंच सजी साहाबं । उलट्यो सेन समुद्रह आवं ॥
दच्छिन दिसा सज्जि तत्तारं । दिसि बांई षुरसान सुधारं ॥
हाजिय राजिय गाजिय षानं । सनमुष सेन सजी सुरतानं ॥
मीर जमांम षांन कंमानं । महबति मीर पुट्ठि सजि तामं ॥
षान मरुस्तम रूस्तम षानं । मद्धि फौज रज्जे सुरतानं ॥
सहते वीस वीस सजि फौजं । तुंश्रा पंच रचे अहहौजं ॥
चिहुपष्षां गज घूमहि डंमर । हथ्थ नारि गिर बांन असंबर ॥
रिन रन तूर घोर नीसानं । भेरी शृंग गरुड थन थानं ॥
नफ्फेरी त्रिय विध सुर डंडं । जोमष पट्ट वजे घन दंडं ॥
आवत झुम्झ्झ डहक्क डहक्किय । है वर हींस दरक्क गहक्किय ॥

गज चिक्कार फिकार सबद्दं । तंदुल तबल मृदंग रबद्दं ।।
जंगी वीर गुंडीर अनेकं । बाजित्र अनेक गने को बेगं ।।
फौज पंच साजी साहावं । मीर अनेक गने को नावं ।।
देस देस मिलि भाष अनंतं । तर्वायन नाम अनेक गनंतं ।।
फौज पंच सजि चल्यौ जु साहं । गज्जैं धरनि गैंन पुर गाहं ।।
सारुंडै सज्ज्यो दिसि वामं । पद्धर सद्धर उत्तिम ठामं ।।

दूहा

उत्तिम पंथरु पुद्धि जल । लष्षी जीय सुथान ।।
सारुंडौ दिसि वांमदै । सजि ठाढौ सुरतान ।।
उड्डि रेन डंबर अमर । दिष्यौ सेन चहुआंन ।।
सुनिगज्जंन वाजित्र त्रहक । सजे सीस असमान ।।

कवित्त

देखि सेंन सुरतांन । नैन चहुआंन महाभर ।।
सज्जि फौज हुस्सेन । सेन सब मीर बीर बर ।।
रूमी षां कंमांम । बेग हुस्सेन समथ्थं ।।
षां दलेल दिषिनीय । जुद्ध करि करै अकथ्थं ।।
कासिम्म षांन करीम षां । षोजा कासिम काज सुध ।।
सिल है सुसब्त्र लिय समथ सजि । करि सलांम किय सीस उध ।।
कहै साह हुस्सेन । सुनौ चहुआंन जुभ्भ बत ।।
आज सीस तुम कज्ज । सेन साहाबं षंडौं षत ।।
मो कज्जै साहस्स । करिग प्रथिराज सरन भ्रम ।।
हौं उज उंसू अज्ज । करौं राजन अकथ क्रम ।।
जंपै सुराज प्रथिराज तब । कहा अचिज्ज जंपौ तुमह ।।
अप्पौं सु छत्र गज्जन पुरह । सद्धि सेन साहाब गह ।।
करि सलाम हुस्सेन । अनी बंधी दिसि बाईं ।।
सजरा बंधे कंठ । सहं सजे थन थाईं ।।
बोलि राज प्रथिराज । बीर जद्दव जामामी ।।
महन सीह परिहार । सूर गज्जर रामानी ।।

तीकंम बोलि तारंन भर । बगारीय देवह सुग्रन ।।
मँडलीक बोलिप रसंग सुग्र । जीहराज जपै सुगुन ।।
चवै राज चहुग्रान । तुम सामंत सूर बर ।।
बर कुलीन कुल लज्ज । जुद्ध ग्रन भंग ग्रंग भर ।।
तुम सहाइ हुस्सेन । सेन सज्जौ दिषि वाईं ।।
तुम ग्रंत बल तेज । देव बर कंठ सुहाईं ।।
साहाब दीन सुरतांन सौं । भिरौं चाल बंधन बिहसि ।।
मनैं सुचले निज सेन सजि । नाइ सीस रजि वीर रस ।।
दिसि दच्छिन कैमास । राइ चामंड महाभर ।।
चंद्रसेन पुंडीर । सिंघ पम्मार झुझ सर ।।
गरु ग्रधाव गहिलौत । निभै पति धार भार घन ।।
तुँवर राइ परिहार । षित्त ग्रनमंग मोट मन ।।
साहस्स चार सज्जे सयन । ग्रनी बधि दच्छिन नृपति ।।
रत्तामि वस्त्र रत्ते सुभर । जै मंनी चहुग्रांन चित ।।
मद्धि ग्रनी प्रथिराज । ग्रग्ग सज्जे भर सामत ।।
गरुग्र राइ गोइंद । राज मंने साहस सत ।।
देवराइ बग्गारि । कन्ह चहुग्रान नाह नर ।।
षीची राइ प्रसंग । बीर कन कूबड गूजर ।।
सामंत सूर बिकसे सुमन । ग्ररि दल तिल मत्तह गनिय ।।

दूहा

ग्रनी बंधि प्रथिराज नृप । ग्रनी पंच सुरतान ।।
मिलि सेन दूनों निर्जरि । गज्जे गोम निसान ।।

भुजंगी

जगे गोम नीसानं इवान सेनं । धमंकै धरा गान गज्जे सुगेंनं ।।
झरं पष्षरं हार ढालैं ढलक्की । घनं सैंन संनाह दूनों चमक्की ।।
मिले मीर धीरं सुदिट्ठं दुग्रानं । पुलं एक जीवं उभैं सिंघ जानं ।।
दिसा वाइयं साद हुस्सेन ग्रंनी । तिनं भम्भ सामंत सांमत मंनी ।।
भरं जाम जद्दों सुमारू मंहनं । षलं गुज्जरं राम मंनै न मंनं ।।

सजे सेन अंनी सहस्सं चियारं । गुरं जुझ्झ भारी सुधारी करारं ॥
सनंमुष्ष तत्तार बीसं सहस्सं । घटा बंधि भद्दों बकै बीर रस्सं ॥
उड़ी सेन रेनं रुक्यौ रथ्थ सूरं । बकैं दीन दीनं भरं अप्प दूरं ॥
घनं बांन कंमान उड्डै कि जंगं । मनौं जोति षद्योत प्रस्तू निहंगं ॥
ढलक्की मिली ढाल ढालं दुसूरं । महानद्द सद्दं मनौं सिंघ पूरं ॥
बजै धार धारं सुझ्झारं करारं । परैं गज्ज मुंड ढरैं सूर भारं ॥
हकैं हक्क बज्जी सजग्गी सकत्ती । परैं रुंड मुंडं परं श्रोन रत्ती ॥
मिलैं षानं तत्तार हुस्सेन सेनं । बकैं उंच बाचं सिरं सज्जि गेनं ॥
हयं छंडि कंधं पयं मंडे कन्ने । समं संमुषं दूव सूरं समन्ने ॥
सहस्सं हयं छंडि हूसेन सथ्थं । सयं तीन ताई बियं हिंदु तथ्थं ॥
सथं षांन तत्तार सत्तं सहस्सं । हयं छंडि कांमं मनं मन्नि गस्सं ॥
भई फौज तीरं दुअं जुद्ध धीरं । दिषै अम्मलं निज्ज सामित्त बीरं ॥
उभै डारि ओडं न गज्जै गुमानं । जपैं दीन मौरं सुनषी कमानं ॥
बजैं नद्द नीसान भेरी भयंदं । गजैं शृंग रीसं मनौं मेघ नद्दं ॥
उभै हथ्थ षोले सुषग्गं करारं । परैं सुझ्झरं सुभ्भरं फूल धारं ॥
उभै आस जीवं नसा सूर छुट्टी । भरी काल संबान आयं सुघट्टी ॥
करी अप्प ईसं दुईसं दुहाई । मनौ बन्न झुंझ्झे गजं मद्दराई ॥
ढरै उत्तमंगं उडै श्रोन पूरं । मनौं काल पावक्क झालं करूरं ॥
मिले घाइ हुस्सेन तत्तार षानं । जुटे डट्ट हथ्थं उभै काल जानं ॥
तुटैं आवधं सावधं लग्गि बथ्थं । सुनी कन्न कथ्थन्न दिट्ठो अकथ्थं ॥
जमं दठ्ठ प्राहार छेदं छुलिक्का । उरा पार फुट्टै हवक्कैं कसक्का ॥
कलेवार षेतं ढरं दूअचेतं । उभै सूर झुझ्झै उभै साहि हेतं ॥
भिरैं वान रूमीय षानं दलेलं । परै पार सांई हकै सेन पेलं ॥
परे षंड षंडं निजं सामि अग्गै । नको हारि मंनै न को झूझ्झ भग्गै ॥
हकैं जांम जद्दों सुतं सिंघ बीरं । ढरैं आवधं आवधं ढारि धीरं ॥
भगी षांन तत्तार अंनी बिहालं । भिरी साहि फौजं टरी गज्ज ढालं ॥

दूहा

सहस पंच रन मीर परि । साथ सुषांन ततार ॥
परे हुसेन सुतीन सै । सै दो हिंदु सार ॥

गाथा

नंचिय तीस कमंधं । करि भोरी षांन तत्तार ॥
दिष्षिय रनसुर बद्दं । भय रस अदभुत्त भयानं ॥
भग्गिय अनी षांन तत्तारं । चंपियं जद्दव महा असवारं ॥
वज्जिय बर नीसानं । सज्जिय जुद्ध हिंदू सत्रानं ॥

त्रोटक

सजि संमुष षां षुरसान दलं । जग डंबर बंबर ढाल ढलं ॥
बजि भेरि नफेरि भयान सुरं । घननं किय घुघ्घर घंट घुरं ॥
गजघोर निसानत घुंमरयं । दिग अट्ठ धरा धर धुंमरयं ॥
मिलित्रीय अनी दुअ आवधयं । भर बंछि उभै षग्ग सावधयं ॥
झर आवध आवध झाक झरं । मटि मंडल षंडल ढारि ढरं ॥
धरि पेलहिं सेलहिं केस कसं । रस होइ भयानक रुद्द रसं ॥
असि षंड विहंडति हैवरय । गज सुंडह मुंड ढरैं धरयं ॥
धर लुट्टहि जुट्टहि रंधरयं । मिलित्रीय अनी दुअ आवधयं ॥
झरयं फिर गिद्धय रारे रुलं । घर श्रोन प्रवाहति पूर जलं ॥
करि डक्कह डक्कति बीर नचैं । सिर माल सु ईसर आनि सचै ॥
वर बीर भरैं भर अच्छरियं । सुर रोर सकत्तिय मच्छरियं ॥
हनि हक्कहि षां षुरसान रिनं । द्रिग दिष्षिय चावंड राय तिनं ॥
मिलि आवध सावध दुम्भरयं । हय घाय गुरज्जत सुभ्भरयं ॥
क्रमि चामँड संगिय झारि झरं । जुग फुट्टिय जातु हयं समरं ॥
सम षां पुरसान सहाव परं । वहि श्रृंगय श्रृंग समूर ढरं ॥
दम षान हयं तज उप्परयं । बदि जोह दुरी हति दुप्परयं ॥
पग छंडिय चामंड राइ रिनं । दिषि राज पुँडरि तज्यौ हयनं ॥
मिलि चंपिय ढारत षान धरं । तब भग्गिय फौज असुभ्भ परं ॥

दूहा

भगी अनी षुरसान षां । मिलिय जाइ सुरतान ॥
चढिय फौज कैमास तब । सज्जे सिर असमान ॥

गाथा

झोरी षां पुरसानं । परिय मोर रंन सहसेयं ॥
बढ्ढिय जैतसु राजं । भग्गिय सेन देषि सुरतानं ॥
दिसि बाईं जागानं । दिसि दाहिनी चंपियं कैमासं ॥
सनमुष चंपिय साजं । जै जै जंपि राइ चहुआनं ॥

नाराच

जयं जयंति जंपियं । चढ़े सुराज चंपियं ॥
बहंत बांन बानयं । ग्रहंत गोम छानयं ॥
करी सुफौज एकयं । बहंत ताम तेकयं ॥
बहंत वीर आवधं । करंत बीर सावधं ॥
हबक्कि संग संगयं । बहंत अंग अंगयं ॥
झटा पटा झमक्कयं । करीअ रीत टक्कयं ॥
समं भरं बगत्तरं । हुंवंत षंड षंडरं ॥
ढरंत रुंड मुंडयं । कमंत जंत तुंडयं ॥
फरं फरंत फेफरं । बुलंत ते डरं डरं ॥
कटैं सुपाइ रिंघयौ । करंत घाव धिंघयौ ॥
करंत हक्क हक्कयं । क्रमंत धक्क धक्कयं ॥
चढंत देत दंतरं । अरु अझंत अंतरं ॥
भभक्कयंत श्रोनयं । बहंत बेग कोनयं ॥
झरफ्फरंत गिद्धयौ । किलक्किलंत षिद्धयौ ॥
नच्चंत सट्ठि सारियं । करंत बीर तारियं ॥
डहक्कि डंक ईसुरं । धमं धमंत भीसुरं ॥
फिक्कारियंत फेरियं । पलं चरंत रेकियं ॥
सपूर श्रोन सक्कती । गुरं सुरंग हक्कती ॥
किलं सुकंठ षामयं । मनंत मंनि तामयं ॥
कटे सुगज्ज कंधरं । विहंड षंड षंडरं ॥
करंत गज्ज चिक्करं । फिरंत सूर फिक्करं ॥
किनक्किनंत बाजयं । जमं ग्रहंत साजयं ॥

वहंत श्रोन नद्दियं । चलंत सूर सद्दियं ॥
धरं गजं विकं टयं । हयं अनेक संठयं ॥
तरं सभ्भंड भालयं । रजंत संगि लालयं ॥
धरं परंत मच्छयौ । गजंसु सीस कच्छयौ ॥
गजं सुसुंड ग्राहयौ । सुरंजि अप्प चाहयौ ॥
रजंत बीर नम्मयं । भयं दपंति जम्मयं ॥
पलं अनंत पंकयं । कुकातरं भयंकयं ॥
सुहंत सीस अंबुजं । षटं पदं द्रिगंबुजं ॥
कचं सिवार विथ्थुरं । सुगंधि पंषि कंदुरं ॥
वहंत पूर जोरयं । करूर सद्द रोरयं ॥
सुतान पंति गोमयं । उचंत बीर सेनयं ॥
अनेक रंग चंमरी । वहंत जीन षंमरी ॥
वही अनेक साकते । कहंत चंद बाकते ॥
अनेक रथ्थ अच्छरं । वरंत सूर रुच्छरं ॥
रजोद कंठ सक्तती । रजंत श्रोन रक्तती ॥
हक्क रंत साजयं । भरंत जेम बाजयं ॥

कवित्त

बाज जेम चहुआंन । भारि सेना भर सुभभर ॥
कोउ लत्त केलत्त । गज्ज ढाहे धर सुद्धर ॥
ढेलि अनी दस पेंड । भक्क वाजंती भारी ॥
मारि मीर अनभंग । विधर जू सेभर सारी ॥
मंडलीक सूर षिभिभय सुभर । जुटे षान सु गज्जनिय ॥
मंडलीक सीस तुट्टै विलगि । हन्यौ षांन विन चंचनिय ॥
विना सीस मंडलीक । हयौ गज्जनीय षांन गुर ॥
अवर मीर चयालीस । जुभभ ढाह भर सुभभर ॥
परत सुअन पर संग । बुद रुधिरं नर बुढ्ढिय ॥
सुहथ खग्ग सब एक । वीर करि किलकि सुउट्टिय ॥

रत्तरे गात उतंग तन । उद्ध रोम झंरत असि ॥
गहिं दंत दंति धरि पुंछ हय । उड्डि संनचिय बीर हंसि ॥
भरकि सेन साहाब । डररि भगो हय गय नर ॥
घरिय एक बित्ती । बिरूर अड्डे अघास हर ॥
दिष्यि दिष्ट साहाब । राइ चामंड बीर बर ॥
चंद्रसेन पुंडीर । जाम जद्दौं भर सुब्भर ॥
कैमास दिष्टि दिष्यौ समर । क्रमे च्यारि गहनं सुबचि ॥
आए सुबीर अड्डु अकसि । रन रस आवध रीठ मचि ॥

विज्जुमाला

मचिय मत्त आवद्ध रीठ । भर हरि दैंन सुब्भर पीठ ॥
हक्कैं सूर अग्गर सार । धर-धर परैं तुट्टिय धार ॥
जंपै उभै दीन जु आंन । जुझ्झिय मत्त मत्तिय पांन ॥
वह वहरू कह कै हाक । बज्जै विषम आवध झाक ॥
परि लर थरैं उठ्ठैं एक । तम्मी उकसि झारैं नेक ॥
षट्ट षट्टी आवध सार । बाहै बीर बारं बार ॥
अंन्यो अन्य सहैं नाम । आवध ग्रहैं अप्पन ताम ॥
हं हं करैं इष्ट संभारि । उठ्ठैं विरद धारी झारि ॥
अदैभुत्त बीर भैयान । मंचिय कंक विषम कृपान ॥
नर बर बरय हंस रंभान । उठ्ठिय नेह ग्रेहति जानि ॥
तुट्टिय सेन पल तिष तीर । इन परि जुद्ध जुट्टिय धीर ॥
तरैं सांईं उप्पर भ्रत्य । सेवक उद्ध सांई कित्ति ॥
चौसठि क्रंम लोथि पथार । भर परि धरह लुब्भिय हार ॥
उप्पर भिरैं सामंत सूर । मत्तौ जुद्ध दून करूर ॥
ठेलैं एक एकै वीर । गज्जै दीन जंपै मीर ॥
चावंड राव जद्दों जामि । मारू महन गूजर राम ॥
गोविंद राव विकसिय भाल । मानौं कोंपियंते काल ॥
आवरि बीर च्यारौं बीर । धारैं षग्ग दोकर धीर ॥

हक्कैं बीर जंपे बांनि। जुट्टे इसं केहरि जानि॥
चंपे मीर तुट्टैं मार। नंचैं कमध अट्ठ उभ्भार॥
भग्गैं परैं के अगिवांन। बढी जैत राव चहुआंन॥
सतै सहस लुथ्थिय भार। परि रन मीर धीर पथार॥

कवित्त

परे मरि पथ्थार। साह हंक्कयौ रा चावंड॥
संमुह गोरी चंपि। मनौं गज सौं गज आमंड॥
चंद्र सेन पुंडीर। आइ सज्यौ दिसि वामं॥
क्रमि सनमुष कैमास। हक्कि जद्दव राजामं॥
पुंडीर राइ चामंड भर। गहें दून दूनों सुकर॥
हे हन्यौ जांम जद्दव उभ्भर। मिलि चिहु चंपियं षंड भर॥
गह्यौ षंचि सुरतान। डारि अड्डौ है चामंड॥
भगी सेन बेहाल। परे घन थान थान थड॥
ग्रहन अग्र सुरतान। परे षां न्याजी गाजी॥
मीर मान कम्मांन। परयौ आरब अरि भाजी॥
को गनै षान मीर रु अवर। सहस सत्त तुट्टे सुघर॥
नच्चै कमंध च्यालीस रस। जै लम्भी चहुआंन भर॥

दूहा

मंडलीक षीची पस्यौ। तीकम त्यार सुबंध॥
राम वाम पंमार परि। नचि सामंत कमंध॥

कवित्त

घरी एक पल पंच। सूर ऊगत सज्ज्यौ जुध॥
घरी च्यारि दिन शेष। ग्रह्यौ सुरतान पान उध॥
सहस बीस इक व्रन्न। परे रन मीर समथ्थं॥
सहस्स सत्त हैंगे। समुह षंडे घर तथ्थं॥
सय तेर परे हिंदू सयन। कोस तीन रन अद्ध परि॥
सुरतान गहिय चहुआन पहु। आयौ बज्जत बज्जत घर॥

दूहा

षेत ढूंढ़ि प्रथिराज नृप। बजे जीत रन तूर ॥
षां हुसेन घनघाय घट। उप्पारिग बर सूर ॥
पर्‌यौ हुसेन सुपाच सुनि। चिंतिय चित्त इमांन ॥
सजौं घोर हुस्सेन सथ। करौ प्रवेस अपांन ॥

कवित्त

रष्षि पंच दिन साहि। अदब आदर बहु किन्नौ ॥
सुअ हुसेन गाजी सुपूत्त। हथ्थैं ग्रहि दिन्नौ ॥
किय सलाम तिय वार। जाहु अप्पने सुथानह ॥
मति हिंदू पर साहि। सज्जि आऔ स्वथानह ॥
वैठाइ साह सुष्षासनह। लाय अप्प गाजी सुसथ ॥
संपत्त जाइ गज्जन पुरह। करो षैर उद्धार अथ ॥

दूहा

और बधाई ऊंमरा। करी आइ सुरतांन ॥
अंन्य सवन कीनी षयर। पुजिय पीर ठटांन ॥

—

जगनिक

कवि-परिचय

कहा जाता है कि आज कल आल्ह-खंड नाम से जो वीरगाथा प्रसिद्ध है, उस का रचयिता जगनिक या जगनायक नाम का भाट था। विद्वानों को इन के ऐतिहासिक पुरुष होने में संदेह है। इन का वर्णन पृथ्वीराज रासो के जिस खंड (महोबा खंड) में है उसे वह लोग प्रक्षिप्त मानते हैं। परंतु यह धारणा बहुत युक्तिसंगत नहीं जान पड़ती। यह निश्चय है कि महोबे के सिंहासन पर सन् ११६५ ई० में परमाल या परमार्दि देव नाम के एक राजा आरूढ़ हुए थे। यह भी विश्वास करने के हमारे पास पर्याप्त कारण हैं कि वह समय ऐसा था जब कि सभी राजाओं के दरबार में वीरगाथाओं की रचना करने वाले तथा अपने अपने आश्रयदाताओं के युद्ध तथा विवाहादिक के वृत्तांतों को लिपिबद्ध करने के लिये एक योग्य भाट, चारण या कवीश्वर का रखना अनिवार्य समझा जाता था। यह भाट कवि होने के साथ ही साथ बहुधा उच्च-कोटि के शूर, वीर और योद्धा भी होते थे। प्रायः सभी समय यह अपने आश्रयदाताओं के साथ रहते थे और जीवन की अनेक मुख्य-मुख्य घटनाओं को पद्यमय रचना में लिपिबद्ध करते जाते थे। प्रकृत युद्ध-स्थल में भी यह सामंतों के साथ रह कर वीररस का उद्रेक करने वाले चुभते हुए छंदों को सुना-सुनाकर योधाओं का जोश तो बढ़ाते ही रहते थे, पर समय-समय पर स्वयं भी तलवार लेकर पिल पड़ते थे। इन कामों के सिवा ये बहुधा मंत्री, राजदूत, भेदिया तथा कूटनीतिज्ञ आदि का काम भी करते थे। महाकवि चंद इसी ढंग का कवि था। जगनिक को भी हम परमाल के यहाँ का चंद कह सकते हैं। प्रस्तुत आल्हखंड के आभ्यंतरिक प्रमाणों के अनुसार यह परमाल का भांजा था। महोबे के संकटकाल में इस ने कई महत्त्वपूर्ण कार्य किए थे। जब

पृथ्वीराज ने महोबा को घेर लिया था और वहाँ के दोनों मुख्य वीर आल्हा और ऊदल माहिल के कुचक्र से महोबे से निकाले जाकर कन्नौजनरेश जयचंद के आश्रय में रहने लगे थे तब इसी जगनिक को कन्नौज भेजकर इन दोनों भाइयों को मनाकर, बुलाने के लिए भेजा गया था। इस गुरुतर कार्य का भार जगनिक ने परमाल की रानी मल्हना के आग्रह से अपने ऊपर लिया था।

इसी प्रकार बहुत अनुनय-विनय के बाद जगनिक जयचंद के नाम परमाल की सहायता भिक्षा-संबंधी चिट्ठी लेकर कन्नौज जाता है। उसने बड़ी बुद्धिमानी से आल्हा को लौटने पर तैयार किया पर जयचंद किसी तरह उन को आने नहीं देना चाहता था और संभव था कि वहीं आल्हा और जयचंद के बीच तलवार खिंच जाती; पर एक बार फिर जगनिक की बुद्धिमानी और सभाचातुरी काम दे गई। उसने जयचंद से आल्हा और ऊदल को लिवा लाने की आज्ञा ही भर नहीं बल्कि महोबे की रक्षा के लिए जयचंद के भतीजे लाखन की अधीनता में पचास हज़ार की सेना भी माँग ली।

पृथ्वीराज रासो के महोबा समय में भी जगनिक के संबंध में कुछ वृत्तांत मिलता है। यद्यपि यह आल्हा से कुछ बातों में भिन्न है पर इतना निष्कर्ष तो इससे भी निकलता है कि परमाल के दरबार में जगनिक नाम का एक मनुष्य उपस्थित था।

आल्हा तथा पृथ्वीराज रासो के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि जगनिक महाकवि चंद का समसामयिक था, अर्थात् सं० १२००-३० के आस-पास वह वर्तमान था। इस से अधिक उस के तथा उसके समय के संबंध में और कुछ भी ज्ञात नहीं है।

आल्ह-खंड

लोक में यह प्रसिद्धि बहुत दिनों से चली आ रही है कि आल्ह-खंड के रचयिता जगनिक ही हैं। परंतु इस बात का कोई दृढ़ प्रमाण कहीं से नहीं मिलता। हाँ, इस के विपरीत आल्हा तथा पृथ्वीराज रासो के वृत्तान्तों से कुछ दूसरे ही प्रकार की धारणा अवश्य होने लगती है। आल्हा और

महोवा-समय दोनों ही में जिस ढंग से जगनिक के प्रसंग आए हैं, उन से स्वभावतः यही अनुमान होता है कि अन्य पात्रों की भाँति जगनिक भी एक पात्र रहा होगा। साधारणतः कोई भी ग्रंथकार अपने को ग्रंथ के अन्य पात्रों के साथ इस रूप में नहीं रखता जिस रूप में हम जगनिक को पाते हैं।

जो हो, इन्हीं कारणों से जगनिक का प्रस्तुत आल्हखंड का रचयिता होना संदिग्ध तो है ही। पर, बात केवल इतनी ही है कि बहुधा लोक-प्रसिद्ध बातें बिलकुल निराधार नहीं हुआ करतीं। और फिर, हम उस समय के भाटों की प्रथा के अनुसार यह भी मान सकते हैं कि जगनिक ने यदि आल्हा की रचना की भी होगी तो स्वयं उसे लिपिबद्ध तो कदापि न किया होगा और उससे सुनकर मौखिक रूप में लोग इसे गाने लगे होंगे। आज भी इस प्रकार की परम्पराएँ मिलती हैं। ऐसी अवस्था में संभव है कि आज जो ग्रंथ का रूप है वह पूर्णतः परिवर्तित है। अतएव उसके आधार पर निश्चय के साथ कुछ कहना कठिन है।

इस समय आल्हखंड का जो सब से प्रामाणिक संस्करण माना जाता है उसे पहले पहल लिपिबद्ध कराने का श्रेय फरुक्खाबाद के भूत-पूर्व कलक्टर स्वर्गीय चार्ल्स ईलियट साहब को प्राप्त है। उन्हों ने तीन या चार सर्वप्रसिद्ध अल्हैतों को बुलाकर उनकी स्मरणशक्ति की सहायता से इसे सन् १८६५ के लगभग लिखवाया था। ईलियट साहब के ही आग्रह से बंगाल सिविल सर्विस के वाटरफ़ील्ड नामक एक सज्जन ने आल्हखंड के कुछ चुने हुए अंशों का अंग्रेजी में पद्यमय (बैलेड मीटर में) अनुवाद किया था। इस अनुवाद का कुछ अंश १८७५-६ की कलकत्ता रिव्यू नामक पत्रिका में 'नौलखाहार' या 'माड़ौ की लड़ाई' The Nine Lakh chain of the Maro Feud के शीर्षक से निकल भी चुका है।

आल्हखंड का सब से पहला हिंदी-संस्करण ईलियट साहब की अनुमति से मुंशी रामस्वरूप नाम के सज्जन ने छपवाया था, पर बहुत ढूँढ़ने पर भी इस की कोई प्रति नहीं मिल सकी। इस को लोग

'असली' आल्हा कहते हैं। इस के आधार पर उस समय के एक प्रसिद्ध अल्हैत पं० भोलानाथ जी ने आल्हखंड 'बड़ा' नाम से इस का एक स्वतंत्र संस्करण प्रकाशित किया। यह महोबा प्रांत के अल्हैत थे और स्वभावतः इन के संस्करण की भाषा में महोबे की बोली का प्राधान्य स्पष्ट देख पड़ता है। इसीसे प्रस्तुत अंश लिया गया है।

महोबे की लड़ाई

सुमिरन करिकै नारायण को, अरु गणपति के चरण मनाय।
देवी गैये आदि भवानी, भूले अच्छर देहु बताय॥
कोट काँगड़े की देवी को, सुमिरौं बार बार शिर नाय।
जिह्वा बैठौ मातु सारदा, जाते काम सिद्ध ह्वइ जाय॥
धौलागिरि पर्वत की देवी, निशिदिन पूजौं चरण तुम्हार।
मोती लैके बीच बीच में, गूँधौं मौरसिरी कौ हार॥
सो पहिरावौं जगदम्बे को, होउ सहाय राज दरबार।
देवी ललिता नौमिषार की, मुम्बादेवी मुंबई क्यार॥
विन्ध्याचल की विन्ध्यवासनी, हिरदै करैं ज्ञान उजियार।
देश कामरू की कामच्छा, सुमिरन करत जाहि संसार॥
मातु संकटा हैं लखीमपुर, मंदिर मातु शीतला क्यार।
सिंह सवारी देवी गरजैं, औ बैरी को करैं संहार॥
दर्शन कीन्हे श्री देवी के, जरि जरि पाप होत सब छार।
पुनि मैं सुमिरौं श्री गंगे जी, भागीरथी नाम संसार॥
जो अस्नान करै नित प्रातहि, ताको तुरत होत निस्तार।
छोंड़ि सुमिरनी अब आगे मैं, कहिहैं हाल महोबे क्यार॥
श्री गिरिजापति को बिनवौं पुनि, मैं बिनवौं गिरिजेश दुलारो।
अंजनि पुत्र बली हनुमान, तुहीं सब भाँतिन सों रखवारो॥
हर्षि हिये बिनवौं सब देवन, भक्तन कष्ट सदा निरवारो।
मैं मतिमंद यथा मतिसों, सब के हित गावत वीर पँवारो॥

जेठ दशहरा की परबी परि, गंगा जाजमऊ के घाट।
देश देश से मेला चलिभौ, बुड़की हेत गंगा की धार॥
कड़िया बोला गढ़ माड़ौ में, जो जम्बै को राजकुमार।
एक बात तुमसे कहियत हौं, ददुआ बार बार बलिजाउँ॥
जेठ दशहरा की पर्बी है, बुड़की लेउँ गंग की धार।
है अभिलाषा यह मेरे मन, ददुआ हुकुम देउ फरमाय॥
देश देश के राजा अइहैं, गंगा जाजमऊ के घाट।
हमहूँ जैहैं जाजमऊ में, करिहैं जाय गंग अस्नान॥
हम भी दान करैं विप्रन को, जासों पाप दूर ह्वै जाय।
इतनी सुनिकै जम्बै बोले, बेटा चुप्प रहौ यहि काल॥
काम तुम्हारो ना जैबे को, मानो बात कन्हैया लाल।
बारह बर्ष को पैना बाक़ी, कनउज दई न एक छदाम॥
जो सुनि पैहैं राजा जैचँद, तुमको कैद लिहैं करवाय।
वहाँ राज है नृप जैचँद को, भारी राज कनौजी राय॥
सीख हमारी मान कन्हैया, घर में बैठि रहौ अरगाय।
हाथ जोरिकै कड़िया बोलो, दादा सुनो हमारी बात॥
वैर तो तूम्हीं से जैचँद को, हे ददुआ हे मेरे तात।
तौ तो बेटा मैं तुम्हारो हूँ, बाकी माफ लऊँ करवाय॥
इतनी बात सुनी जम्बै ने, तुरते हुक्म दियो फरमाय।
करी तयारी तब कड़िया ने, फौज कटीली लई सजाय॥
आयो कड़िया रंगमहल को, जहँ पर हती बिजैसिनि रानि।
बोली बिजैसिनि तहँ कड़िया से, भैया सुनो हमारी बात॥
जो तुम जैयो जाजमऊ को, लैयो कछू निसानी मोहिं।
वहाँ से कड़िया बदलत आवै, अपने लश्कर पहुँचो आय॥
बजे नगाड़ा दुइसै जोड़ी, बाजै तुरही औ सहनाय।
कूच कराय दियो माड़ा से, पहुँचो जाजमऊ के घाट॥
बहुत दान दीन्हो विप्रन को, कीन्हो गंगा में अस्नान।
बात याद आई बहिनी की, तब उठि चला कड़िंगाराय॥

तुरतै पहुँचो सो बजार मैं, ढूंढ़त फिरै नौलखा हार।
तुम्हें हँसी को डर नाहीं है, ओ जम्बै के राजकुमार॥
यह सुन कड़िया बोलन लागो, तुम सुन लेउ महिल परिहार।
सब बजार में हम फिर आये, कहुँना मिलो नौलखा हार॥
लौट जबाब दियो माहिल ने, ओ महराज कड़िंगा राय।
बात हमारी जो तुम मानो, हम बतलावैं नौलखाहार॥
नगर महोबा एक बस्ती है, जहँ पर बसै चँदेलेराय।
तिन घर रानी इक मल्हना है, सो वह बहिनी लगै हमारि॥
हार नौलखा वह पहिरे है, चलिकै लूटि लेउ कहवाय।
टूटे फूटे पड़े चँदेला, कोई फेंट बँधैया नाहिं॥
यह मन भाय गई कड़िया के, औ महुबे की पकरी राह।
यहाँ कि बातैं तो यहँ छोड़ो, अब आगे के सुनो हवाल॥
रहिमल टोडर दस्सराज औ, चौथे बच्छराज महराज।
ये रहवैया बकसर वाले, चारों बीर बनाफर राय॥
मीरा ताला बनरसवाले, तिन नौ पूत अठारह नाति।
अली अलामलि औ दरियाखां, बेटा जान बेग मुलतान॥
मियाँ बिसारलि औ कल्लू खाँ, कल्लन वेन और कल्यान।
कारो बाना कारो निशाना, कारे घोड़न के असवार॥
शिर पर चीरा है मुग़लानी, मीरा तालन राजकुमार।
जहाँ हद्द है नृप जैचंद की, तहँ पर भयो बखेड़ा आय॥
वे फिरयादी कनउज चलिभये, राजा जयचँद के दरबार।
जो रस्ता थी महुबे हइके, वे महुबे में पहुँचे आय॥
पूँछन लागे हरिकारा पर, चारौ वीर बनाफर राय।
हम सब जैहै गढ़ कनउज कौ, रस्ता हमहिं देउ बतलाय॥
तब हरिकारा पूछन लागो, अपनो काम देउ बतलाय।
यह सुनि चारौ बोलनि लागे, सरहद भयो बखेड़ो जाय॥
हम फिरियादी कनउज जैहैं, राजा जैचँद के दरबार।
फिरि हरकारा बोलनि लागे, ठाकुर सुनो हमारी बात॥

यह बस्ती है गढ़ महुबे की, यहँ पर बसत राजा परिमाल ।
बात बड़ी है परीमाल की, मानत जिनहिं कनौंजी राय ॥
भयो बखेड़ा है धूरे पर, जो लिखि दिहैं राजा परिमाल ।
सोइ फैसला तुम्हरौ हैइहै, जाते काम सिद्ध ह्वइ जाय ॥
कही हमारी जो ना मनिहौ, तुम्हरो काम होन को नाहिं ।
बात मान लइ हरकारा की, द्वारे गये चँदेले क्यार ॥
खाली खिदरी परीमाल की, तँह टिकि रहे बनाफर राय ।
एक लँग ताला बनरसवाले, एकलँग पड़े बनाफर राय ॥
कड़िया आयो गढ़ महुबे में, वह जम्बै कौ राजकुमार ।
जँह पर फाटक चंद्रवंश को, तहँई पड़े बनाफर राय ॥
बोला कड़िया तब फाटक पर, ओ रजपूतो बात बनाव ।
खबरि सुनायो चंद्रवंश को, औ मल्हना को जाय सुनाउ ॥
हार नौलखा लै जल्दी से, मेरी नजर गुजारै आय ।
यह सुनि बोला बनरसवाला, बोले तुरत बनाफर राय ॥
तीनि रोज से गढ़ महुबे में, हम सब परे परौने आय ।
हाल हमारो ना जानो है, हम परदेश रहत महराज ॥
हुक्म दे दिया तब कड़िया ने, कछु क्षत्रिन से कह्यो सुनाय ।
बजै कुल्हाड़ा इस फाटक पर, औ धरती में देउ मिलाय ॥
महल लूटि लेउ परीमाल को, सिगरो गहनो लेउ उठाय ।
बजो कुल्हाड़ा तब फाटक पर, देखत खड़े बनाफर राय ॥
मीरा ताला और बनाफर, सो आपस में लगे बतान ।
तीन रोज से गढ़ महुबे में, खायो नमक चंदेले क्यार ॥
सुख से पानी पियो यहाँ पर, सो हाड़न में गयो समाय ।
हीनी ह्वइहै चंद्रवंश की, तौ जग ह्वइहै हँसी हमारि ॥
दाग लागि है रजपूती में, सब क्षत्रीपन जाय नशाय ।
सबहुन मिलि के यह मत कीन्हो, प्राणन को दो मोह बिसार ॥
खैंचि सिरोही यकलँग ह्वइकै, चारों वीर बनाफर राय ।
एक ओर को ताला पहुँचे, सूबा जौन बनारस क्यार ॥

बोले सैयद सब बेटन से, तुम सब सुनो हमारी बात ।
याही दिन को हम पालो है, अपने हुनर देउ दिखलाय ॥
काज पराये जो मरिजैहौ, पक्की कबर दऊँ चुनवाय ।
जंग जीति हौ जो दंगल में, हुइहै जुगन जुगन लै नाम ॥
सीधा रस्ता है जन्नत का, तुमको कौन पड़ी परवाह ।
इतनी सुनि लइ उन लड़िकन ने, अपनी खैंचिलई तलवार ॥
बादल गरजे ज्यौं भादों में, बिजली कड़कि कड़कि रहि जाय ।
ऐसे गरजैं बनरसवाले, बनता बरन करी न जाय ॥
सब मिलि झपटे उस कड़िया पर, जिन के मार मार रट लाग ।
गड़बड़ परिगौ गढ़ महुबे में, बिपता कछू कही ना जाय ॥
जहाँ भीर देखै कड़िया की, तँह घुस परैं बनाफर राय ।
मारि सिरोही चहला उठिगौ, सब दल रैन बैन ह्वइ जाय ॥
जौन रिसाला ताला बैठें, तेहि धरती में देयँ गिराय ।
ऐसे काटो दल कड़िया को, जैसे काटै खेत किसान ॥
बड़ै लड़ैया बनरसवाले, तँह पर बीत रहा घमसान ।
मुँडन के तहँ ढेर लागिगै, औ लोथिन पर लोथ दिखाय ॥
कड़िया भागि गया माड़ौ को, नाहीं मिलो नौलखा हार ।
सुनी खबर जब परीमाल ने, औ मल्हना ने सुनौ हवाल ॥
परे परौने जो द्वारे पर, तिनने राखी लाज हमारि ।
धर्म हमारो तुमने राखो, तुम्हरो जन्म धन्य संसार ॥
इतनी कहिके तब चंदेले, अपने बंगले गये लिवाय ।
खातिर करिकै उन सबहिन की, मालिक करो चँदेले राय ॥
राजपाट औ धन दौलति के, मालिक बने बनाफर राय ।
फौज के मालिक ताला सैयद, सूबा जौन बनारस क्यार ॥
मल्हना बोली परीमाल से, स्वामी सुनौ हमारी बात ।
ब्याह करावो इन ठकुरन को, लड़िका जौन बनाफर राय ॥
तौ ये बने रहैं महुबे में, नाहीं कबहुँ जायँ परदेस ।
देवै ब्रह्मा दुइ बहिनी हैं, लड़िका दस्सराज बछराज ॥

ब्याह रचावौ तिन दोनों का, तुम्हरे काम सिद्ध होइ जायँ।
इतनी सुनि कै परीमाल ने, अपनो नेगी लियो बुलाय॥
टीका मँगाय लियो जल्दी से, ओ लड़िकन को लियो बुलाय।
दस्सराज और बच्छराज को, टीका तुरतै लियो चढ़ाय॥
एकहि मड़ये में दोनों की, भाँवरि तुरत लई डरवाय।
विदा कराय लई बहुअन की, औ द्वारे पर पहुँचे आय॥
जितनी रानी चंद्रवंश की, सो द्वारे पर पहुँची जाय।
दोनों बहुवन को संग लीन्हो, राखी रंग महल में लाय॥
हार नौलखा मल्हना लैके, सो देवै को दौ पहिराय।
जौन नौलखा के लेने को, चढ़िकै आयो कडिंगाराय॥
औरौ रानी चंद्रवंश की, उन्हूँ हार दियो पहिराय।
अनँद बधैया महुवे बाजै, घर घर भयो मंगलाचार॥
फिरकै मल्हना बोलन लागी, स्वामी सुनो हमारी बात।
स्याने लड़िका औ बहुयें हैं, इनकी महल देव बनवाय॥
नहीं गुजारा इन महलन में, सो तुम समुझि लेउ मनमाहि।
इतनी सुनिकै चंदेलै ने, अपनी हुक्म दियो करवाय॥
महुवे गढ़ से आध कोस पर, दशहर पुरवा दियो बसाय।
सुन्दर महल सजे पुरवा में, तँह बसि गये बनाफर राय॥
दस्सराज की रनि दिवला से, आल्हा प्रगट भये संसार।
बच्छराज की रानी ब्रह्मा से, श्री सहदेव लीन्ह औतार॥
पांडव कुल में जो तरवरिहा, जग में प्रगट भयो मलखान।
ब्रह्मा जन्म लियो मल्हना से, ंडा अर्जुन को औतार॥
रतीभान की रनि तिलका से, पांडव नकुल केर अवतार।
लाखनि राना गढ़ कनउज में, जाको नाम प्रगट संसार॥
इसी साल के भइ अंतर में, ढेबा आनि लिया अवतार।
रही गर्भ से दिवला रानी, योधा भीमसेन औतार॥
ऊदल नामक गढ़ महुबे में, ह्वइहै प्रगट आय संसार।
बच्छराज की रनि ब्रह्मा के, आयो गर्भ माहिं सुलिखान॥

दस्सराज औ बच्छराज ये, दोनों रहैं एकही साथ।
नित-नित जावैं नगर महोवे, मानै हुक्म चँदेले क्यार ॥
दोनों भाई समरथ होइगे, निशिदिन करैं राज को काज।
धनि-धनि माया परमेश्वर की, अचरज होत देखि सब काज ॥
पाँय पनहियाँ जिनके नाहीं, तिनको प्रभू देत गजराज।
यहाँ कि बातैं तो यहिं रहगईं, अब आगे के सुनों हवाल ॥
एक दिन ताला बोलन लागे, तुम सुनि लेउ रजा परिमाल।
हाल बतावौ हमको अपनो, क्यों नहिं हाथ गहो हथियार ॥
लौट जवाब दियो राजा ने, सय्यद सुनो हमारो हाल।
नगर चँदेली के हम राजा, बहुदिन करो राज को काज ॥
भैया हमरो यक चंद्रा कर, तेहि हम सौंप दियो सब राज।
ब्याह कियो हम गढ़ महुबे में, सुनिकै सुघर मल्हनदे रानि ॥
इच्छा देखो रनि मल्हना की, तब हम रहे महोवे आय।
ससुर हमारे मालवंत थे, जिनके पुत्र महिल परिहार ॥
तिनहिं बसायो हम उरई में, महुबे कियो राज दरबार।
भरतखंड में जितने योधा, हमने जीति लिये तत्काल ॥
बावनगढ़ के राजा जीते, जीते बड़े बड़े भूपाल।
मार न खाई काहु बली की, सिगरो हालि गयो संसार ॥
रह्यो मुकाबिल ना कोई योधा, खाँड़ा सागर दिया परवार।
अमर गुरू की क़सम खायली, अब ना गहूँ हाथ हथियार ॥
बहुत वर्ष बीते महुबे में, हमने ना पकरी तलवार।
माया परम प्रबल ईश्वर की, सो प्रभु राखो धर्म सँभार ॥
तुमहिं पठायो परमेश्वर ने, तुमने राखी लाज हमार।
इतनी सुनिकै सैयद बोले, तुम सुनि लेव रजा परिमाल ॥
जहाँ पसीना गिरै तुम्हारो, तहँ दै दऊँ रक्त की धार।
ऐसे बात भई सैयद से, बहुते खुशी भयो परिमाल ॥
हाल सुनाऊँ अब आगे को, यारो सुनियो कान लगाय।
मीरा ताला बनरसवाले, बेटा नाती संग लिवाय ॥

कोइ कारजहित गये बनारस, पाई खबर महिल परिहार ।।
माहिल चलिभे तब उरई से, लिल्ली घोड़ी पर असवार ।
आठि रोज को धावा करिकै, गढ़ माड़ौ में पहुँचे जाय ।।
जहाँ कचहरी थी जंबै की; माहिल उतरि परे अलगाय ।
करी वंदगी तब जंबै को, घोड़ी थामि लई थनवार ।।
आवो आवो उरई वाले, अपनो हाल देउ बतलाय ।
माहिल बोले तब राजा से, तुम सुनि लेव बघेले राय ।।
मीरा तालन बनरस पहुँचे, खाली पड़ा महोबा गाँव ।
फैंट बँधैया तँह कोइ नाहीं, चलिके लूट लेव करवाय ।।
औसर चूके फिर पछितैहो, आवै घड़ी न बारम्बार ।
यह मन भाइ गई करिया के, औ महुबे को भयो तयार ।।
माहिल चलिभे गढ़ माड़ौ से, औ उरई में पहुँचे आय ।
राजा जंबै ने ललकारो, बेटा सुनो कड़िंगाराय ।।
काम तुम्हारो ना जैबे को, ना महुबे पर होउ तयार ।
तुमहिं लूटिबो ना सोहत है, हो राजन के राजकुमार ।।
कही न मानी वा कड़िया ने, अपनो कूच दियो करवाय ।
आठ रोज को धावा करकै, गढ़ महोबे में पहुँचो आय ।।
आधी रात के भइ अमला में, दश पुरवा में पहुँचो जाय ।
सोवत बाँधो दस्सराज को, बच्छराज को लियो बंधाय ।।
महल लूटलौ उन दोउन को, सिगरो गहनो लियो उठाय ।
हार नौलखा देवै पहिरे, सोऊ तुरतै लियो छिनाय ।।
माल खजाना चंद्रवंश को, सब लै लियो कड़िंगाराय ।
गज पचशावद दस्सराज को, सो कड़िया ने लियो खुलाय ।।
लाखा पातुर दस्सराज को, घोड़ा पपीहा लियो मँगाय ।
जौन वस्तु देखी समुहे पर, सो लै गयौ कड़िंगा राय ।।
करी वीरता क्या कड़िया ने; चोरी करी महोबे माहिं ।
लानत ऐसी रजपूती पर, तेगा बाँधन को धिरकार ।।
माल पराया जो कोउ ताकै, चोरी करै पराई आय ।

धोखा देवै जो काहू को, ताको बार बार धिक्कार ॥
पर उपकार करै दुनिया में, सब विधि करै नरनार ।
काम बनावे जो काहू का, ताको जन्म धन्य सरकार ॥
कड़िया पहुँचो गढ़ माड़ो में, जीत को डंका दियो बजाय ।
दस्सराज औ बच्छ राज को, पत्थर कोल्हू दियो पिराय ॥
शीश काटि कै दोउ भैयन को, सो बरगद में दयो टंगाय ।
हार नौलखा देवे वारो, पहिरैं नित्य विजैसिनि रानी ॥
नित उटि नाचै लाखा पातुर, राजा जम्बै के दरबार ।
गज पचशावद दस्सराज को, तापर चढ़े कडिंगाराय ॥
यहाँ की बातैं तो यहाँ रह गईं, अब महुबे को सुनो हवाल ।
राम बनावे जो बनि जावे, बिगड़ी बनत-बनत बनि जाय ॥
देवे ब्रह्मा दोनो रोवैं, हा! दैया गति कही न जाय ।
सुनी खबर जब परीमाल ने, तुरतैं गिरे धरनि मुरझाय ॥
जितनी रानी चंदेले की, सब ने छांड़ि देइ डिंडकार ।
मल्हना रानी रोवन लागी, बिपदा कछू कही न जाय ॥
दै दै हाँकै रनियाँ रोवैं, कोई धीर धरैया नाहिं ।
कछुक दिना में ताला सैयद, आए नगर महोवे माहिं ॥
सुनी हकीकत गढ़ महुवे की, सैयद गिरे मूरछा खाय ।
हाय हाय करि रोवन लागे, अब कहूँ मिले धर्म के भाय ॥
कहा बिगारो तिन कड़िया को, बिन तकसीर सतायो आय ।
धोखा दीन्हों उस कायर ने, कड़िया तेरो बुरो है जाय ॥
अब कहँ पैहैं हम भैयन को, यह दुख दियो मोहिं कर्तार ।
धावा मारौ जो माड़ौ पर, तो कछु काम बनन को नाहिं ॥
कठिन लड़ाई है माड़ौ की, कोई शूर बचन को नाहिं ।
बारह कोसन बबुरी बन है, और लोहागढ़ कोट कराल ॥
कहा हकीकति बंदूकीन की, तोप निशाना ना अनियाय ।
देवै बोली तब सैयद से, सैयद सुनौ हमारी बात ॥
अब तुम पालौ सब लड़िकन को, सिगरो दुःख देउ बिसराय ।

कबहूँ लायक लड़िका ह्वैहै, माड़ौ लिहैं बाप को दाँव ॥
तबहीं चुरिया हम तोड़ैंगी, मिटिहै तबहि पेट को दाह।
सुनि कै बातै रनि देवे की, सैयद धीर धरौ मन माहि ॥
तीन महीना के बीते पर, ऊदनि आनि धरो अवतार।
कछु दिन बीते रनि ब्रह्मा के, सुलिखे आनि लिया औतार ॥
देवे बोली तब बाँदी से, बाँदी सुनि ले बात हमार।
मुँहना देखौ या लड़िका को, जियतै याहि देव फिंकवाय ॥
हंडिया ह्वैइके बेटा जन्मों, कहिहैं सबै नगर नर नारि।
बाँदी बोली तब देवै से, रानी सुनौ हमारी बात ॥
राज पाट धन संपति मिलिहैं, लड़िका फेरि मिलन को नाहिं।
पुत्र बड़ो फल है दुनियाँ में, पालो याहि मेटि तकरार ॥
बहुतक समझाया बाँदी ने, देवे के मन नाहिं समाय।
कर्म हीन यह बालक जन्मों, याने डारो बाप मराय ॥
टारो-टारो मेरे समुहे से, औ जंगल में देहु फिकाय।
फिरि कै बाँदी बोलन लागी, रनियाँ बार-बार बलिजाउँ ॥
बिरवा सींचत सब दुनिया में, यह आगे को ऐहैं काम।
बड़े प्यार से याको पालो, माड़ो लिहैं बाप को दाँव ॥
मनै हमारे ऐसी आवे, ह्वैइहैं सबै तुम्हारे काम।
ताते तुम को समुझावति हौं, रानी मानौ बात हमार ॥
फेकन योग्य नहीं यह बालक, सो तुम समुझि लेउ मनमाँहि।
बात न मानी एक देवे ने, औ बाँदी से कह्यो सुनाय ॥
हुक्म अदूली जो तू करिहै, तेरो पेट दऊँ फड़वाय।
जल्दी ले जा या लड़िका को, औ समुहे से जाउ बराय ॥
लड़िका लीन्हों तब बाँदी ने, औ मल्हना पै पहुँची जाय।
हाथ जोरि के बाँदी बोली, रानी सुनो हमारी बात ॥
बालक जन्मौं रनि देवे ने, औ यह हम से कह्यो सुनाय।
बन में फेको या लड़िका कौ, हम को हँसिहैं सकल जहान ॥
हंडिया ह्वइके बालक जन्मौं, हमरे जीवन को धिरकार।

इतनी बात सुनी मल्हना ने , तब राजा को लियो बुलाय ।।
हाल बतायो सब देवे को , सुनतै दुखी भए परिमाल ।
केहि मति मारी है देवे की , क्या कहुँ अक्किल गई हिराय ।।
विष्णु बड़े हैं सब देवन में , वेदन सामवेद को गान ।
तैसेइ पुत्र बड़ो दुनियाँ में , जिस देही में नैन प्रधान ।।
छाती चौड़ी या लड़िका की , नैना हिरना की अनुहारि ।
ऊँचो माथो मुख सुंदर है , अच्छे लच्छण परें दिखाय ।।
शूरवीर ह्वइहैं यह बालक , रानी बचन करो परमान ।
बहुत हेत से याको पालो , मन में करो न सोच विचार ।।
बानी सुनि के मल्हना रानी , मन में बहुत खुशी ह्वइ जाय ।
लैके लड़िका मल्हना रानी , पालन करन लगी करि प्यार ।।
एक दूध को ब्रह्मा पीवे , दूजो पियै उदयसिंह राय ।
दूध पिआवे अमखुर बन से , दोनों पुत्र गोद बैठाय ।।
दिन-दिन बढ़न लाग नर ऊदनि , योधा भीमसेन औतार ।
बहुत प्यार से मल्हना पालै , अमखुर बन से दूध पिआय ।।
कछु दिन बीते चंद्रवंश में , उपजो आय पुत्र रणजीत ।
आल्हा ऊदनि मलिखे ब्रह्मा , ढेवा रणजित औ सुलिखान ।।
यहि विधि प्रकटे सातों लड़िका , शोभा कछू कही ना जाय ।
खेलत डोलैं सब आँगन में , सब को मल्हना करै दुलार ।।
आल्हा बोले रनि मल्हना से , मैं तरवरिहा पूत तुम्हार ।
बोली मल्हना तब आल्हा से , जुग-जुग जिया लड़ैते लाल ।।
सब तरवरिहा पूत हमारे , पानी पिऔं उतारि-उतारि ।
नित-नित लाड़ करै लड़िकन को , ह्वै के खुशी मल्हनदे रानि ।।
सुंदर सुंदर कपड़ा लैके , सो लड़िकन को दे पहिराय ।
कड़ा सोबरन के पहिराये , चीरा कलँगी दई बधाय ।।
ले तरवारैं छोटी छोटी , सो लड़िकन को दई गहाय ।
इन्दा नाई चन्द्रवंश को , ताको मल्हना लियो बुलाय ।।
नाई आयो जब महलन में , तब मल्हना ने कह्यो सुनाय ।

तुम लै जाओ इन लड़िकन को , जहँ दरबार चन्द्र सरदार ।
संग लैलियो उन लड़िकन को , नाई गयो राज दरबार ॥
जबही लड़िका बँगला पहुँचे , तुरतै उठे रजा परिमाल ॥
बहुत प्यार से लै लड़िकन को , अपनी छाती लियो लगाय ।
दई मिठाई सब लड़िकन को , औ महलन को दियो पठाय ॥
उठी कचहरी जब राजा की , महलन गये चँदेले राय ।
एक ललकार दई मल्हना को , रानी अक्किल गई तुम्हार ॥
वंश नशैबे को लागी हो , बँगले लड़िकन दियो पठाय ।
हाथ जोरिकै रानी बोली , स्वामी सुनो हमारी बात ॥
दूध पूत नाहीं छिपिबे को , नाहीं छिपै सम्पदा राज ।
अबहिं तो लड़िका बँगला पहुँचे, भोरहिं खेलत फिरें शिकार ॥
यह सब लड़िका समरथ होइहैं, एक दिन प्रगट होंय संसार ।
इतनी बात सुनी मल्हना की , मनमें खुशी भये महराज ॥
राम बनावै सो बनिजावै , बिगड़ी बनत बनत बनि जाय ।
कछुक दिना बीते महुवे में , आये अमरनाथ महराज ॥
खबरि पहुँचि गई रंगमहल में , आये अमर गुरू अधिराज ।
मल्हना दिवला ब्रह्मा रानी , सब मिलि आय गईं तत्काल ॥
करि परिकर्मा अमरनाथ की , सातों लड़िका करे अगार ।
लड़िका डारि दिये चरणों में , हाथ जोरिकै कह्यो सुनाय ॥
शरण तुम्हारी सब लड़िका हैं , जानौं इनहिं आपनो दास ।
दाया करिकै इन लड़िकन पर , अपनो हाथ धरौ महराज ॥
चारों ओर बसत बैरी हैं , केहि बिधि बनैं हमारे काज ।
यह सुनि बोले अमरनाथ जी , रानी सुनौ महोबे क्यार ॥
सोच त्यागि देउ तुम जियरा से, सब बिधि भला करै करतार ।
ये सब लड़िका समरथ हुइहैं , होइहैं सबै तुम्हारे काम ॥
साखा चलिहै बावनगढ़ में , जितिहैं बड़े बड़े बलवान ।
इतनी कहिकै अमर गुरू ने , लड़िकन ठाढे करे अगार ॥
सूरति देखी उन लड़िकन की , मन में खुशी भये गुरु राय ।

पीठी ठोंकी जब आल्हा की, तब यह कही गुरू महराज ॥
जग में तुम्हरो साखा चलिहै, होइहैं जीति समर के माहिं ।
पीठी ठोंकी फिर ऊदनि की, बोले अमरनाथ तत्काल ॥
बज्र कि देही या लड़का की, जामें गडै नाहि हथियार ।
हाथ फिराया नर मलिखे पर, काया सबै बज्र होइ जाय ॥
हाथ बढ़ावन लगे पाँव पर, तब ब्रह्मा ने कह्यो सुनाय ।
पाँव न छुइयो तुम चेला के, नहिं घटि जइहै धर्म हमार ।
यह सुनि बोले अमर गुरू जी, रानी सुनो बनाफर क्यार ॥
सिगरी काया भई बज्र की, याके तलुअन में है काल ।
शस्त्र लागिहैं जब तलुवा में, तब ना बचै तुम्हारो लाल ॥
फिर कर परसा ब्रह्मानंद पर, सारा देह बज्र होइ जाय ।
तुम्हरि बरोबरि को ताहर है, नहिं दूजे की बार बसाय ॥
हाथ फिराया फिर सुलिखे पर, काया बज्र रूप होइ जाय ।
तुम्हरी बरनी है धाँधू से, ना दूजे से काल तुम्हार ॥
फिर कर परसा नर ढेवा पर, औ रणजित पर फेरो हाथ ।
बज्र की काया करी गुरू ने, अपनी मढ़ी पहूँचे जाय ॥
आल्हा ऊदनि मलिखे ढेवा, ब्रह्मा रणजित औ सुलिखान ।
सातौ लड़िका दिन दिन बाढ़ैं, खेलैं राज महल के माहिं ॥
करै चौकसी रानी मल्हना, सबको देखि-देखि खुश होय ।
राम बनावैं तो बनिजावै, बिगड़ी बनत बनत बनि जाय ॥
सोई बनाई रघुनन्दन ने, समरथ भये बनाफर राय ।
ताला सैयद बनरस वाले, जो सब लड़कन के उस्ताद ॥
युक्ति बताई बस लरिबे की, दीन्हे अस्त्र शस्त्र सिखलाय ।
आल्हा मलिखे औ नर ऊदनि, चौथे ब्रह्मा राजकुमार ॥
चारों लड़िका भये जोरावर, जिनके बल को नाहि संभार ।
मलिखे ऊदनि के समुहे पर, बिरला शूर गहै हथियार ॥
जो कोइ देखै इन लड़िकन को, मन में बहुत खुशी होइ जाय ।
फिरि तदबीर करी मल्हना ने, सातौं लड़िका लिये बुलाय ॥

सात बछेड़ा बड़ी राशि के, सो मंगवाये मल्हन दे रानि।
घोड़ करि लिया बड़ी राशि को, सो आल्हा को दियो गहाय ॥
घोड़ हरनागर बड़ी राशि को, सो ब्रह्मा को दियो गहाय।
घोड़ि कबुतरी बड़ी राशि की, सो मलिखे को दई गहाय ॥
घोड़ा बेंदुला मल्हना लैकै, सो ऊदनि को दौ पकराय।
घोड़ा मनुरथा मल्हना लैके, सो ढेबा को दियो गहाय ॥
घोड़ा हिरौंजिनी मल्हना लैके, सो सुलिखे को दई गहाय।
घोड़ि हिरौंजिनी दूसरी लैके, सो रणजीत को दी पकराय ॥
फिरि हंसि बोली मल्हना रानी, लड़िकौ सुनौ हमारी बात।
भोर होत खन झाबर जैयो, बन में खेलियो जाय शिकार ॥
हिरना लहैं जो जंगल से, सो तखरिहा पूत हमार।
भोर होत ही सिगरे लड़िका, अपने घोड़न पर असवार ॥
जायके पहुँचे सब झाबर में, बन में खेलत फिरत शिकार।
तीनि पहर जंगल में होइगे, ना काहू को मिलो शिकार ॥
आल्हा मलिखे ब्रह्मा ढेबा, रणजित और बीर मलिखान।
ये सब लौटिं गये महुबे को, ठाढो ऊदनि करे विचार ॥
ना शिकार बन में हम पाई, केहि विधि जैहो नगर महोब।
तौलौं हिरना एक जंगल से, रस बेंदुल के भगौ अगार ॥
घोड़ा बेंदुला को धरि दाबो, औ हरिना को परो पिछार।
हिरना पहुँचो सो उरई में, औ बगिया में गयो समाय।
ऊदनि ढूँढै वा हिरना को, बगिया गर्द दई करवाय ॥
तब ललकारो तँह माली ने, ओ राजन के राजकुमार।
कौन देश के तुम ठाकुर हो, बगिया गर्द दई करवाय ॥
जो सुनि पैहैं माहिल ठाकुर, तुम्हरो घोड़ा लिहैं छिनाय।
इतनी सुनि कै ऊदनि तड़पे, औ माली से कह्यो सुनाय ॥
देश हमारो नगर महोबो, जहँ पर बसत रजा परिमाल।
छोटे भैया हम आल्हा के, औ ऊदनि है नाम हमार ॥
कौन सो क्षत्री है दुनियाँ में, जो मेरो घोड़ा लेय छिनाय।

इतनी कहि कै ऊदनि चलिभे, औ महुबे की पकरी राह ॥
एक पहर के तब अरसा में, गढ़ महुबे में पहुँचे आय ।
दुसरे दिन सब लड़िका चलिभै, बन में खेलन गये शिकार ॥
हिरना मारो सब ने मिलिकै, सो मल्हना के धरो अगार ।
करैं सवारी सब घोड़न पर, नित नित खेलन जायँ शिकार ॥
सुनि सुनि बातैं सब लड़िकन की, बहुतैं खुशी होय परिमाल ।
आल्हा ऊदनि मलिखे सुलिखे, माड़ौ लिहैं बाप के दाँव ॥
तौ न लड़ाई आगे लिखिहौं, यारो सुनियो कान लगाय ।
सुमिरन करिये नारायण को, जो दीनन पर रहत दयाल ॥
भोलानाथ मनाय हिये मँह, अब माड़ौ को लिखौं हवाल ।

——

केशवदास

केशवदास के जन्म एवं मृत्यु तिथि के संबंध में प्रामाणिक सामग्री के अभाव के कारण विद्वानों में बहुत मतभेद है।

कवि-परिचय

ओड़छे के प्रसिद्ध राजा मधुकरशाह के आठ पुत्रों में एक का नाम इंद्रजीत था और यही केशवदास के प्रधान आश्रयदाता थे। इन्हीं के एक भाई वीरसिंह देव थे जिन की प्रशंसा में कवि ने 'वीरसिंह देव-चरित' नामक अपना प्रसिद्ध ग्रंथ लिखा था। परंतु पहले ये बहुत दिनों तक इंद्रजीत के आश्रय में रहे और उन्हीं की प्रार्थना से इन्होंने अपना पहला ग्रंथ 'रसिकप्रिया' सं० १६४८ में पूरा किया था।

इनके जीवनकाल से संबंध रखने वाली यही पहली तिथि है जो हमें निश्चय रूप से ज्ञात है। इनके जीवन की सब परिस्थितियों पर विचार करते हुए मानना पड़ता है। कि इन की अवस्था इस समय लगभग चालीस वर्ष की रही होगी। इसी विचारधारा के अनुसार इन का जन्म सं० १६०८ के लगभग माना जाता है। कोई सं० १६१२ के लगभग इन की जन्म तिथि निश्चय करते हैं। परंतु मिश्रबंधु सं० १६०८ ही में इन का जन्म होना मानते हैं। 'सरोजकार' शिवसिंह सेंगर इन का जन्म संवत् १६२४ मानते हैं। 'की' साहब सं० १६१२ मानते हैं। 'केशव पंचरत्न' के संकलनकर्त्ता लाला भगवान दीन इन का जन्म सं० १६१८ मानते हैं।

सं० १६६८ तक के इन के रचे हुए ग्रंथ मिलते हैं। सं० १६६४ में इन्होंने 'वीरसिंह देव चरित' की रचना की थी और सं० १६६७ में इन्होंने 'विज्ञानगीता' की जो प्रायः सब के मत से इन की अंतिम रचना मानी जाती है। इस के बाद संभव है ये कुछ वर्ष और जिये हों और इन्हीं परिस्थितियों के आधार पर इन की मृत्यु तिथि सं० १६७४ के

लगभग मानी जाती है। 'की' साहब और मिश्रबंधु दोनों ही इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं।

केशवदास भारद्वाज गोत्रीय सनाढ्य ब्राह्मण थे, जिनकी उत्पत्ति केशव के अनुसार सनत्कुमारों से हुई थी। इन के पूर्वपुरुषों में जयदेव के पुत्र कोई दिनकर हुए थे जिन्हें बादशाह अलाउद्दीन बहुत मानता था। इन्हीं के प्रपौत्र एक त्रिविक्रम मिश्र हुए थे जिन के पैर गोपाचाल क़िले के राजा ने पूजे थे। और इन्हीं त्रिविक्रम के प्रपौत्र हरिहर नाथ जी हुए जो तोमरपति के यहाँ रहते थे। हरिहरनाथ के पुत्र कृष्णदत्त को ओड़छाधीश महाराज रुद्र ने पुराणवृत्ति दी थी। यही कृष्णदत्त केशव के पितामह थे। केशव के पिता का नाम काशीनाथ था। इन के तीन पुत्र थे—बलभद्र, केशवदास, और कल्याणदास। इन के बड़े भाई बलभद्र भी अच्छे कवि थे; इनका रचा हुआ 'नखसिख' हिंदीसाहित्य का एक प्रसिद्ध ग्रथ है। कवि के छोटे भाई कल्याणदास की भी कुछ फुटकर कविता मिलती है। पहले इन के पूर्वज व्रजमंडल के अंतर्गत 'डीग कुम्हरे' नामक एक गाँव में रहते थे। ओड़छे में सब से पहले इन के पितामह कृष्णदत्त जी राजा मधुकरशाह के समय में आये थे। कहा जाता है कि ओड़छा नगर के व्यासपुरा मुहल्ला में केशव के निवास-स्थान का भग्नावशेष एक पुराने खंडहर के रूप में एक पुरानी इमली के पेड़ के नीचे अब तक विद्यमान है। केशवदास के विवाह और संतति आदि के विषय में अभी तक निश्चय रूप से कुछ ज्ञान नहीं हो सका है।

केशव हिंदी के उन थोड़े से इने-गिने दो या तीन कवियों में से एक हैं जिनका राज दरबारों में बहुत बड़ा सम्मान हुआ था। इस विषय में केशव की तुलना चंद या भूषण से ही हो सकती है।

केशवदास के प्रधान आश्रयदाता ओड़छानरेश इंद्रजीत थे। इंद्रजीत के दो भाइयों—वीरसिंह देव तथा रामशाह—से भी इनका संबंध था।

इंद्रजीत के दरबार की प्रसिद्ध वेश्या रायप्रबीन के भी ये बड़े कृपा पात्र थे और अपना सर्वप्रसिद्ध ग्रंथ 'काव्यप्रिया' इन्होंने रायप्रबीन के लिए ही लिखा था। रामचंद्रिका और रसिकप्रिया इंद्रजीत के आग्रह से लिखे गये थे।

रायप्रबीन

रायप्रबीन वेश्या होते हुए भी पतिव्रता थी। एक बार अकबर ने उसे अपने यहाँ बुलवाया। यह रायप्रबीन को स्वीकार नहीं हुआ, अतः इंद्रजीत ने उसे नहीं भेजा। इससे चिढ़कर अकबर ने उस पर एक करोड़ रुपये का जुर्माना कर दिया। केशव इसे माफ़ कराने के लिए आगरे में बीरबल के यहाँ पहुँचे और उन की प्रशंसा में इन्होंने यह छंद पढ़ा।

"पावक, पंछी, पसू, नर, नाग, नदी, नद, लोक रचे दस चारी,
'केशव' देव, अदेव रचे, नरदेव रचे, रचना न निवारी।
कै बर-बीर बली बलवीर, भयो कृत कृत्य महाव्रत धारी,
दै करतापन आपन पाहि, दई करतार दुवौ करतारी।"

इस छंद का बीरबल पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने छै लाख रुपयों की हुंडियाँ जो उन की जेब में पड़ी थीं, तुरंत निकाल कर उन्हें दे दीं और दरबार में जाकर युक्ति से अकबर को समझा-बुझाकर जुर्माना भी माफ़ करा दिया। केशव दास ने निम्नलिखित छंद और पढ़ा—

"केशव दास-के भाल लिख्यौ विधि, रंक को अंक बनाय संवार्‌यौ,
छोड़े छुट्यौ नहिं धोए-धुयो, बहु तीरथ के जल जाय पखार्‌यौ।
ह्वै गयो रंक ते राउ तहीं; जब बीर बली बलबीर निहार्‌यौ,
भूलि गयो जग की रचना, चतुरानन बाय रह्यौ मुख चार्‌यौ।"

इस छंद पर बीरबल इतने मुग्ध हुए कि इन्होंने कहा—'जो इच्छा हो माँगो'। इस पर केशव ने पूर्ण संतोष दिखलाते हुए केवल यही कहा—

"यों ही कह्यौ तु बीरबल, माँगु जु माँगन होय,
माँग्यौ तुव दरबार में, मोहि न रोकै कोय।"

इन छंदों से केशव के जीवन, उनकी आर्थिक स्थिति, उनके विचार तथा सभाचातुरी आदि पर प्रकाश पड़ता है।

इंद्रजीत के सिर पर से इतनी बड़ी बला टालने के बाद से केशव उन के अत्यंत कृपापात्र और अभिन्नहृदय मित्र हो गये, और इन का मान सम्मान ओड़छे में दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इंद्रजीत के भाई वीरसिंह देव केशव के दूसरे प्रधान आश्रयदाता थे। इन्हीं की कीर्ति को अमर करने के लिए केशव ने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'वीरसिंह देव चरित' लिखा था।

रतन सेन

इंद्रजीत के बड़े भाई रतनसेन जिन का देहांत सोलह वर्ष की अवस्था में शाही सेना से लड़ते समय हुआ था, केशव के रतनबावनी ग्रंथ के नायक है। रामचंद्रिका, कविप्रिया, रसिकप्रिया, वीरसिंह देव चरित तथा रतनबावनी के अतिरिक्त केशव की जहाँगीर जस चंद्रिका, छंदमाला, शिखनख तथा विज्ञानगीता ये चार रचनाएँ और हैं।

केशव ने अपने काव्यों में यों तो यथास्थान सभी रसों का निरूपण किया है परंतु प्राधान्य उन्होंने शृङ्गार को ही दिया है। शृङ्गार को ही उन्होंने रसराज मानकर यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि अन्य रस इस के अंतर्गत हो सकते हैं। शृंगार के बाद यदि किसी रस के निरूपण में उन्हें सफलता मिली है तो वह वीर रस है। प्रस्तुत ग्रंथ में उनकी उस कविता का संग्रह है जो कि वीररस की है।

इस प्रकार की कविता केशव की रामचंद्रिका, रतनबावनी तथा वीरसिंह देव चरित पुस्तकों में मिलती है।

आगे 'रतनबावनी', 'वीरसिंह देव चरित' तथा रामचंद्रिका से कुछ अंश दिये जा रहे हैं।

रतनबावनी

मूषिक-बाहन गज-बदन एक-रतन मुद-मूल।
बंदहुँ गण-नायक-चरन शरण सदा सुख-तूल।
ओड़छेंद्र मधुशाह सुत रतनसिंघ यह नाम।
बादशाह सौं समर करि गए स्वर्ग के धाम।
तिनकौ कछु बरनत चरित जा विधि समर सु-कीन।
मारि शत्रु-भट विकट अति सैन सहित परवीन।

(युद्ध का कारण)

जिहि रिस कंपहि रूस रूम, कंपहि रन ऊ नह।
जिहि कंपहि खुरसान शान तुरकान विहूनह।
जिहि कंपहि ईरान तूर्न तूरान बलख्खह।
जिहि कंपहि बुख्खार तार तातार सलख्खह।
राजा धिराज मधुशाह नृप यह विचार उद्दित भयव।
हिंदुवान धर्म रच्छक समुझि पास अकब्बर के गयव।
दिल्लीपति दरबार जाय मधुशाह सुहायव।
जिमि तारन के माँह इंदु शोभित छवि छायव।
देख अकब्बरशाह उच्च जामा तिन केरो।
बोले बचन विचारि कहौ कारन यहि केरो।
तब कहत भयव बुंदेलमणि मम सुदेश कंटकि अवन।
करि कोप ओप बोले बचन मैं देखौं तेरौ भवन॥
सुनत बचन मधुशाह शाह के तीर समानह।
लिखिव पत्र ततकाल हाल तिहिं बचन प्रमानह॥
जुरहु जुद्ध करि क्रुद्ध जोरि सेना इक ठौरिय।
तोर तोर तन रोर शोर करिये चहु ओरिय॥
तुव भुजन भार है कुँवर यह रतन सेन शोभा लहय।
कछु दिवस गएँ गढ़ ओड़छो दिल्लीपति देखन चहय॥

सुनत पत्र मधुशाह को रतन सेन ततकाल।
करिय तयारी जुद्ध की रोस चढो जिन भाल।
साजि चमू मधुशाह-सुत हरवल दल कर अग्र।
हय गय पयदर सजि सकल छांड़ि ओड़छौ नग्र॥

कुमार उवाच

रतनसेन कह बात सूर सामंत सुनिज्जिय।
करहु पैज पनधारि मारि सामंतन लिज्जिय॥
वरिय स्वर्ग अच्छरिय हरहु रिपु गर्व सर्व अब।
जुरि करि संगर आज सूरमंडल भेदहु सब॥
मधुसाह-नंद इमि उच्चरइ खंड खंड पिंडहि करहुँ।
कट्टहुँ सुदंत हथियान के मर्दहुँ दल यह प्रन धरहुँ॥
जहँ अमान पट्ठान ठान हियवान सु उट्ठिव।
तहँ केशव काशी नरेश दल रोप्र भरिट्ठिव॥
जहँ तहँ पर जुरि जोर ओर चहुँ दुंदुभि वज्जिय।
तहाँ विकट भट सुभट छुटक घोटक तन तज्जिय॥
जहँ रतनसेन रण कहँ चलिव हल्लिय महि कंप्यो गयन।
तहँ है दयाल गोपाल तब विप्र भेव बुल्लिय वयन॥

विप्र उवाच

जुतौ भूमि तौ वेलि, वेलि लगि भूमि न हारै।
जुतौ बेलि तौ फूल, फूल लगि बेलि न जारै॥
जुतौ फूल तौ सुफल, सुफल लगि फूल न तोरै।
जो फल तौ परि पक्क, पक्क लगि फलहिं न फोरै॥
जा फल पक्क तौ काम सब, परिपक्कहिं जग मंडिये।
प्रान जुतौ पति बहु रहै, पति लगि प्रान न छंडिये॥

कुमार उवाच

गई भूमि पुनि फिरहि बेलि पुनि जमै जरे तें।
फल फूले तें लगहिं फूल फूलंत भरे तें॥

केशव विद्या विकट निकट बिसरे तैं आवै ।
बहुरि होय धन धर्म गई संपति पुनि पावै ॥
फिरि होइ स्वभाव सुशील मति जगत गति यहू गाइये ।
प्राण गएँ फिरिफिरि मिलहिं पति न गएँ पति पाइये ॥

विप्र उवाच

मातु हेत पितु तजिय, पिता के हेत सहोदर ।
सुतहिं सहोदर हेत, सखा सुत हेत तजहु बर ॥
सखा हेत तजि बंधु, बंधु हित तजहु सुजन जन ।
सुजन हेत तजि सजन, सजन हित तजहु सुखन मन ॥
कहि केशव सुख लगि घरनि तजि, घरनी हित पर खंडिये ।
सुइ छंडिय सव धर हेत पति, प्राण हेत पति छंडिये ॥

कुमार उवाच

जासु बीज हरि-नाम जम्यो सुचि सुकृति भूमि थल ।
एकादशी अनेक बिमल कोमल जाके दल ॥
द्विज चरणोदक बुंद कंद सींचत सुख बढ्ढिय ।
गोदानन के देत धर्म-तरुवर दिन चढ्ढिय ॥
सत्त फूल फुल्लिय सरस सुयश बास जग मंडिये ।
कहि केशव फलती बेर कर "पति" फल किमिकर छंडिये ॥

विप्र उवाच

दानी कहा न देय चोर पुनि कहा न हरई ।
लोभी कहा न लेय आग पुनि कहा न जरई ॥
पापी कहा न करै, कह न बेचै ब्योपारी ।
सुकबि न बरनै कहा-कहा साधू न सँचारी ॥
सुनि महाराज मधुशाह-सुव सूर कहा नहिं मंडई ।
कहि केशव घर धन आदि दै साधु कहाँ नहिं छंडई ॥

विप्र उवाच

पंच कहैं सो कहिय, पंच के कहत कहिज्जिय।
पंच लहैं सो लहिय, पंच के लहत लहिज्जिय॥
पंच रहैं तौ रहिय, पंच के दिष्षित दिष्षिय।
परमेसुर अरु पंच सबन, मिलि इक्किय लिष्षिय॥
सुनि रतनसेन मधुशाह सुव पंच सथ्थ नहि लज्जिये।
कहि केशव पंचन संग रहि, पंच भजै तहँ भज्जिये॥

विप्र उवाच

लोकपाल दिगपाल जिते भुवपाल भूमि गुनि।
दानव देव अदेव सिद्ध गंधर्व सर्व मुनि॥
किन्नर नर पशु पच्छि जच्छ रच्छस पन्नग नग।
हिंदुव तुर्क अनेक और जल थलहु जीव जग॥
सुरपुर नरपुर नागपुर सब सुनि केशव सज्जियहु।
सुनि महाराज मधुशाह सुव को न जुद्ध जुरि भज्जियहु॥

कुमार उवाच

महाराज मलखान ठान लगि प्राण न छंडिव।
गहिव तरल तरवार तुरत अरि दल बल खंडिव॥
राजकाज धरि लाज लोह लरि तुरुक विहंडिव।
खरग सैनि हनि तासु बासु बैकुंठहिं मंडिव॥
परताप रुद्र परताप करि अरि कुलबिनु तष्षत कियहु।
कहि केशव नर सह युद्ध करि इंद्रासन उद्दत लियहु॥

विप्र उवाच

द्विज माँगै सो देव विप्र कौ बचन न खंगिय।
द्विज बोलै सो करिय विप्र सौ मान न भंगिय॥
परमेस्वर अरु विप्र एक सम जानि सु लिज्जिय।
विप्र वैर नहि करिय विप्र कहं सर्वसु दिज्जिय॥

सुनि रतनसेन मधुशाहसुव विप्र बोल किन लिज्जियहु ।
कहि केशव तन मन वचने करि विप्र कहय सुइ किज्जियहु ॥

कुमार उवाच

पतिहि गए मति जाय, गएं मति मान गरै जिय ।
मान गरे गुन गरै गरे गुन लाज जरै जिय ॥
लाज जरे जस भजै भजे जस धरम जाइ सब ।
धरम गये सब करम गए पास बसै तब ॥
पाप बसे नरकन परै नरकन केशव को सहै ।
यह जान देहुँ सरबसु तुम्हैं सुपीठ दएँ पति ना रहै ॥
पति मति अति दृढ़ जानि कर सुनि सब बचन समाज ।
राम-रूप दरसन दियौ केशव त्रिभुवन राज ॥

(राम-रूप वर्णन)

हाटक जटित किरीट शीश स्यामल तनु सोहै ।
हाथ धरें धनुबाण देखि मन मथ मन मोहै ॥
जामवंत हनुमंत विभीषण भूपति भूषन ।
केशव कपि सुग्रीव संग अंगद अरि दूषन ॥
सँग सीता शेष अशेषमति गुण अशेष अंत अंगप्रति ।
जहँ रतनसेन संकट विकट प्रकट भये रघुवंश पति ॥

कुमार उवाच

बिना लरें जो चलहुँ सुखद सुंदर तव को कह ।
जो लरि चलौं सदेह लोग भागौ कहिं मोंकह ॥
तातैं जुद्धहिं जुरहुँ जुद्ध जोधन अँगवाँऊँ ।
भुवि राखौ दै बाहु सीस ईसहिं पहिराँऊँ ॥
राखहुँ शरीर खित्तहि खभरि नहिं केशव नेकहु हलौं ।
इहि भांति लोक अवलोक करि तबहिं सु तुव सथ्थहिं चलौं ॥

श्रीपरमेश्वर उवाच

प्रथम धरेहु अवतार तैं जु मेरौ व्रत किन्नव।
जोवन तनु धन मरदि तबहिं मेरौ प्रण लिन्नव॥
प्रण प्राणन कौ वाद बहुत मेरे मन भायौ।
अब केशव इहि काल अबहि हौं भलौ रिझायौ॥
सुनि महाराज मधुशाह सुव जदपि लोभ नहिं तौ हियव।
तदपि सु मंगहि मंगने हौं प्रसन्न तोंकहुँ भयव॥

कुमार उवाच

लै कर वर तब वीर सभा मंडल सन बुल्लिय।
तुम साथी समरथ्थ शत्रु कहँ सत्त न डुल्लिय॥
लाज काज धरि लाह लोह लरि लरि यश लिज्जहु।
विकट कटक मैं हटक पटक भट भुवि महँ दिज्जहु॥
यह अनूप मेरौ बचन केशव चित धरि सुनहु सब।
मरहु तौ मो सथ्थहिं चलहु भज्जहु तौ भजि जाव अब॥

साथ के लोगन कौ बचन

तुम बालक हम वृध इते पर जुद्ध न देखे।
तुम ठाकुर हम दास कहा कहिये इहि लेखे॥
कहि आवै सो कहौ कहा हम तुमरौ करिहैं।
हम आगैं तुम लरौ तु अब हम बूड़ि न मरिहैं॥
कहि केशव मंडहिं रारि रण करि राखैं खित्तहि भवन।
सुनि रतनसेन मधुशाह सुव पुनि न होइ आवागवन॥

कुमार उवाच

जानि शूर सब सथ्थ प्रगट पंचम तनु फुल्लिय।
साधु-साधु यह बचन पाय सुख सब सौं बुल्लिय॥
दै बरदान प्रसिद्ध सिद्ध कीनौ रण रुद्धहि।
अधिक सुवेश सुदेश उदित उद्दित अरु बुद्धहि॥

लखि लोकईश गुर ईश मिलि रचि कविता कविता ठई।
सुरईश ईश जगदीश मिल एक-एक उपमा दई॥

उपमा-वर्णन

किधौं सत्त की शिखा शोभा-साखा सुखदायक।
जनु कुल-दीपक जोति जुद्ध-तम मेंटन लायक॥
किधौं प्रगट पति-पुंज पुन्य कर पल्लव पिक्खिय।
किधौं कित्ति-परभात तेज मूरति करि लिक्खिय॥
कहि केशव राजत परम रतन सेन शिर शुम्भियहु।
जनु प्रलय काल फणपति कहूँ फणपति फण उद्दित कियहु॥
साजि साजि गजराज-राजि आगैं दल दीनहि।
ता पीछे पति-पुञ्ज पयदर रथ कीनहि॥
ता पीछैं असवार शूर केशव सब सोसन।
चलत भई चकचौंध बांधि बखतर बर जोशन॥
तब फटक भये दल भट्ट सब तुरत सेन दपंटत रन।
जनु बिज्जु संग मिलए कइक एकहि पवन झकोर घन॥
कोइ निबहौ पग दोय कोइ पग तीन-तीन पर
कोइ निबहौ पग चार चल्यो कोइ पांच-पांच कर॥
कोइ निबहौ पग खष्ट चलौ कोइ सात-सात-तहँ।
कोइ निबहौ पग आठ चल्यौ कोइ अग्ग अंक लह॥
दसह पाय दसहू दिसह साथी सबहि सटक्कियह।
इक मधुकरशाह-नरेन्द्र सुत लूर कटक्क अटक्कियह॥
दीठि पीठि तन फेर पीठ तन इक्क न दिक्खिय।
फिरहु फिरहु फिर फिरहु कहत दल सकल उसग्गिय॥
ठान ठान निज शान मुराक पाठान, जु धाए।
काढ़-काढ़ तरवार तरल ता छिन तठ आए॥
इक इक्क घाउ घल्लिव सबन रतन सेन रनधीर कहँ।
जनु ग्वाल बाल होरी हरषि खंडल छोर अहीर कहँ॥

रूपे शूर सामंत रण लरहिं प्रचारि-प्रचारि।
पिच्छल पग नहिं चलहिं कोउ जूझत चलहिं अगारि॥
मरण धारि मन लियौ वीर मधुकर सुत आयौ।
बिचल नृपति सब म्लेच्छ देखि दल धर्म लजायौ॥
कटु कुभष्ष सब करिय कुँवर रूप्यहु जुर जंगहि।
तिल तिल तन कट्टिइव मुरकि फेरौ नहिं अंगहि॥
कहि केशव तन बिन शीश ह्वै अतुल पराक्रम कमध किय।
सोइ रतनसेन मधुशाहसुव तब कृपाल दुहु हत्थ लिय॥
चले शूर सामंत सब धरम धारि प्रभु काम।
कोपेहु तहँ मधुशाह-सुव ज्यों रावण पर राम॥
करि श्रीपतिहि प्रणाम इष्ट अपने सब बुल्लिव।
पातशाह सुनि खबर आय बीचहि दल ढिल्लिव॥
सकल समिटि सामंत गहिव तब जाइ बाट कहि।
लहिव जुद्ध अगवान शूर सब चले सांमुहहि॥
रजपूत टुट्टि धरणी गहहि केशव रण तहँ हंकियव।
सोइ रतनसेन महाराज जू बिकट भट्ट बहु कट्टियव॥
रतनसेन हय छंडियौ उत कूदे सामंत।
नोन उबारन शीश तें कियो लरन कौ तंत॥

साथी लोगन कौ बचन

बुल्लिव छत्रिय बचन सुनहु महराज सु-कानहि।
आप जुद्ध कौं छंडि जाहु सुरपुर तिहि ठामहि॥
हम करिहैं संग्राम आज आवहि तुव काजहि।
राख धर्म तुम सुभग त्यागि आपुन परिवारहि॥
किज्जिय सुराज अरि मूल हनि केशव राखहि लाज रन।
तुव नौन उबारहि खित्त महिं यश गावहिं कबि तुम धरन॥
ह्वै वाणी आकाश सुबहु सब शूर संत यहि।
रहहुँ तुमारे साथ मनहि कर राखहुँ अग्रहि॥

राखहु पति कुल लाज आवहिं खग्गन तनु खंडहु।
जाहु मलेच्छ न इक्क सबै रण सैन विहंडहु।
कहि केशव राखहु रणभुवन जियत न पिच्छल पग धरहु।
सुइ रतनसेन कुल लाड़िलहु रिपु रण में कट्टहि करहु॥
राजा सनमुख तनु तजै करै स्वर्ग में भोग।
दुनिया में यश विस्तरै हँसै न जग कौ लोग॥
रतनसेन रण रहिव प्राण छत्रिय ध्रम राखहु।
करहु सुवचन प्रमाण शूर सुर पुर पग नाखहु॥
डेढ़ सहस असवार सहस दो पयदर रहियव।
पील पचास समेत इतिक सुरपुर मग लहियव॥
जहँ सहस चारि सैना प्रबल तिन मँह कोउ न घर गयव।
सोइ रतन सेन महाराज कौ केशव यश छंदन कहिव॥

—

अबुलफ़ज़ल और वीरसिंह देव का युद्ध

कुंडलिया

सुख पायो बैठे हते एक समै सुलतान ।
खां सरीफ तिनि बोलि लिये बीरसिंह देव सूजान ।।
वीरसिंह देव सुजान मान मन बात कही तब ।
या प्रयाग में कुँवर सौहँ करिये मोसौ अब ।।
तोसौं करौं बिचार करहि अपने मन भाए ।
अनत न कबहूँ जाउ रहहु मो संग सुख पाए ।।
पायनि पर तस्लीम करि बोल्यो बीरसिंह राज ।
हौं गरीब तुम प्रगटही सदा गरीब निवाज ।।
सदा गरीब निवाज लाज तुमहीं लघु लामी ।
बिनती करिये कहा महा प्रभु अंतरजामी ।।
लोभ मोह भय भाजि भजै हम मन बच कायनि ।
जौ राखहु मरजाद तजौं सपनेहु नहिं पायनि ।।

चौपाई

सौं हैं कीन्ही माँझ प्रयाग । बीरसिंह सुलतान सभाग ।।
तुमही मेरे दोई नैन । तुम हौ बुधिबल भुज सुखदैन ।।
तुमहीं आगे पीछे चित्त । तुमहीं मंत्री तुमहीं मित्त ।।
मात पिता तुम पर्‍यो पान । तुम लगि छाड़ौं अपनें प्रान ।।

वीरसिंह उवाच

इक साहिब अरू कीजतु प्रीति । सब दिन चलन कहत इहि रीति ।।
तुम्हैं छोड़ि मन आवै आन । तौ भूलो सब धर्म विधान ।।
यह सुनि साहि लह्यो सब सुख्ख । लाग्यो कहन आपनौं दुःख ।।
जितनो कुल आलम परवीन । थावर जंगम दोई दीन ।।

तामें एकै बैरी लेख। अब्बुल फजल कहावै सेख॥
वह सालतु है मेरे चित्त। काढ़ि सके तो काढ़हि मित्त॥
जितने कुल उमरावनि जानि। ते सब करत हमारी कानि॥
आगे पीछे मन आपने। वह न मोहिं तिनुका करि गने॥
हजरत को मन मोहित भयो। याके पारे अंतर पर्यो॥
सत्वर साहि बुलायो राज। दक्खिन ते मेरे हीं काज॥
हजरत सों जो मिलिहैं आनि। तो तुम जानहु मेरी हानि॥
बेगि जाउ तुम राजकुमार। बीचहि वासो कीजै रारि॥
पकरि लेहु कै डारो मारि। यह मन निहचै करहु बिचारि॥
होहि काम यह तेरै हाथ। सब साहिबी तुम्हारे साथ॥
ऐसो हुकुम साहि जब कियौ। मानि सबैं सिर ऊपर लियौ॥
राजनीति गुनि भय भ्रम तोरि। विनयो वीरसिंह कर जोरि॥
वह गुलाम तू साहिब ईस। तासौं इतनी कीजहि रीस॥
प्रभु सेवक की भूल विचारि। प्रभुता इहै जु लेइ सम्हारि॥
सुनियतु है हजरत को चित्त। मंत्री लोग कहत है मित्त॥
तो लगि साहि करै जब रोष। कहिये यो किहि लागै दोष॥
जन की जुवती कैसी रीति। सब तजि साहिब ही सों प्रीति॥
ताते वाहि न लागै दोष। छांड़ि रोष कीजै संतोष॥

दोहा

सहसा कछु नहिँ कीजई, कीजै सबै विचारि।
सहसा करैं ते घटि परैं, अरु आवै जग गारि॥

साह सलीम उवाच

बरन्यो मति मते को सार। प्रभु जन को सब यहै विचार॥
जौ लगि यह जीवतु है सेख। तौं लगि मोहि मुओ ही लेख॥
सबैं विचार दूरि करि चित्त। बिदा होहु तुम अबही मित्त॥
कसि तुरतहि बखतर तन बेगि। लै बांधी कटि अपने तेग॥
घोरौ दै सिर पाग पिन्हाई। कीनी बिदा तुरत सुख पाई॥
दरखाने ते राजकुमार। चलत भई यह सोभा सार॥

रवि मंड़ल तें आनँद कंद । निकसि चल्यौ जनु पूरनचंद ।।
सैद मुजफ्फर लीनों साथ । चलै न जानै कोऊ गाथ ।।
बीच न एकौ कियौ मोकाम । देख्यो आनि आपनो ग्राम ।।
आनंदे जनपद सुख पाइ । नीलकंठ जनु मेघहि पाइ ।।
पठये चर नीके नर नाथ । आवत चले सेख के साथ ।।
चारन कही कुँवर सो आइ । आये नरवर सेख मिलाइ ।।
यह कहि भये सिंध के पार । पल पल लखैं सेख की सार ।।
आये सेख मोच के लिये । पुर पराइछे डेरा किये ।।
आबुलफज़ल वड़ेही भोर । चले कूंच कैं अपने जोर ।।
आगे दोनी रसद चलाइ । पीछे आपुनु चले बजाइ ।।
बीरसिंह दौरे अरि लेखि । ज्यों हरि मत्त गयंदनि देखि ।।
सुनतहि बीरसिंह को नाउँ । फिरि ठाढौ भयो सेख सुभाउ ।।
परम सरोष सों सेख बखानि । जस अपर नृसिंहहिं जानि ।।
दौरत सेख जानि बड़ भाग । एक पठान गही तब बाग ।।

पठान उवाच

नहीं नवाब पसर को ठौरु । भूलिन सत्रुहि सामुहूँ दौरु ।।
चलु चलु ज्यौं क्यौंहूँ चलि जाहि । तेहि पाइ सुख पावै साहि ।।
पुनि अपने मनमें करि नेम । जैवो चढ़ि तहँ साह सलेम ।।

सेख उवाच

जूझत सुभट ठाँवहीं ठाँव । कहियो अब कैसे चलि जाँव ।।
आनि लियो उन आलसतोग । भाजे लाज मरैगो लोग ।।

पठान उवाच

सुभटन को तो यहऊ काम । आप मरे पहुचावहि राम ।।
जो तू बहुतै आलस तोग । जौत बाचि है रचिहैं लोग ।।

सेख उवाच

मैं बल लीनौं दक्खिन देस । जीत्यौ मैं दक्खिनी नरेस ।।
साहि मुरादि स्वर्ग जब गये । मैं भुवभार आपु सिर लये ।।

मेरो साहि भरोसो करै। भाजि जाँउ मैं कैसै धरै॥
कह, यौं आलम तोग गँवाइ। कहिहौं कहा साहि सौं जाइ॥
देखत लियो नगारो आइ। कहा बजाऊँ हौं घर जाइ॥
घर को मेरे पाइन परै। मेरे आगे हिंदू लरै॥

पठान उवाच

सेख विचारि चित मँह देखु। काजु अकाजु साहि कौ लेखु॥
सुनु नवाब तू जूझहि तहां। अकबर साहि बिलौकै जहां॥

सेख उवाच

प्रभु पैं जाइ जमातिहि जोर। सोक समुद्र सलीमहि बोर॥
तू जु कहत चलि जैये भाजि। उठे चहूँ दिसि बैरी गाजि॥
भाजे जातु मरनु जौ होइ। मोकौ कहा कहैं सब कोइ॥
जौं भजि ये लरिये गुन देखि। दुहूँ भाँति सरिबोई लेखि॥
भाजौ जौ तौ भाजौ जाइ। क्यों करि दै है मोहि भजाइ॥
पति कौ बैरी पाइ निहारु। सिर पर साहि भया कौ भारु॥
लाज रही अँग अँग लपटाइ। कहु कैसे कै भाज्यो जाइ॥
छाँड़ि दई तिहि बाग बिचारि। दौर्‌यौ सेख काढ़ि तरवारि॥
सेख होइ जितही जित जबै। भर भराइ भागैं भट तबै॥
काढ़े तेग सोह यों सेख। जनु तनु धरे धूमधुज[1] देख॥
दंड धरै जनु आपुन काल। मृत्यु सहित जम मनहु कराल॥
मारै जाहि खंड द्वै होइ। ताके सम्मुख रहै न कोइ॥
गाजत गज हींसत हय ठारे। बिनु सूंडनि बिनु पायनि कारे॥
नारि कमान तीर असरार। चहुँ दिसि गोला चले अपार॥
परम भयानक यह रन भयौ। सेखहि उर गोला लगि गयौ॥
जूझि सेख भूतल पर परे। नैकु न पग पाछे को धरे॥

---

१ धूमधुज—धूमध्वज, अग्नि।

सोरठा

अवधि धर्म को लेख द्विज प्रतिपाल तै ॥
रन में जूझे सेख अपनी पति लै साहि की ॥

जब खुरखेट निपट मिटि गई रन देखन की इच्छा भई ॥
कहुँ तोग[1] कहुँ डारे तास । कहुँ सिंदूख पताक प्रकास ॥
कहुँ डारे रेजा तरवारि । कहुँ तरकस कहुँ तीर निहारि ॥
कहूँ रूंड कहूँ डारे मुंड । कहूँ चौर झुंडनि के झुंड ॥
हिलत लुढ़त कहुँ सुभट अपार । टूटिनि टिकिटिकि उठत तुषार ॥
देषत कुँवर गये तब तहाँ । अब्बुलफ़जल सेख है जहाँ ॥
परम सुगंध गंध तन मर्‌यौ । सोनित सहित धूरि धूसरयौ ॥
कछु सुख कछु दुख व्यापत भये । लै सिर कुँवर बड़ौ नहिं गये ॥

---

१ तोग—नगाड़ा ।

रामचंद्रिका

लंका कांड

रामचमू-वर्णन

कुंतल ललित नील भ्रकुटी धनुष नैन, कुमुद कटाक्ष बाण सबल सदाई है।
सुग्रीव सहित तार अंगदादि भूषण, मध्य देश केशरी सुगजगति भाई है ।।
विग्रहानुकूल सब लक्षलक्ष ऋक्षबल, ऋक्षराज मुखो मुख केशोदास गाई है।
रामचंद्र जू की चमूराज्यश्री विभीषण की, रावण की मीचु दरकूच चलि आई है ।।

चंचला छंद

ताम्रकोट लोहकोट स्वर्णकोट आस पास ।
देव की पुरी घिरी कि पर्वतारि के विलास ।।
बीच बीच हैं कपीश बीच बीच ऋक्ष जाल ।
लंका कन्या गरे कि पीत नील कंठ माल ।।

मेघनाद युद्ध

दोहा—मरकत मणि से शोभि जै सबै कँगूरा चारु ।
आइ गयो जनु घात को पातक को परिवारु ।।

कुसुमविचित्रा छंद

तब निकसो रावण-सुत सूरो । जेहि रन जीत्यो हरि बल पूरो ।।
तपबल माया तम उपजायो । कपिदल के मन संभ्रम छायो ।।

दोधक छंद

काहु न देखि परै वह योधा । यद्यपि हैं सिगरे बुधिबोधा ।।
सायक सो अहि नायक सांध्यो । सोदर स्यों रघुनायक बांध्यो ।।
रामहिं बाँधि गयो जब लंका । रावण की सिगरी गइ शंका ।।
देखि बँधे तब सोदर दोऊ । यूथप यूथ त्रसे सब कोऊ ।।

स्वागता छंद

इंद्रजीत तेहि लै उर लायो। आजु काम सब भो मन भायो ॥
कै विमान अधिरूढ़ित धाये। जानकीहि रघुनाथ दिखाये ॥
दो०—कालसर्प के कवल ते छोरत जिनको नाम।
बंधे ते ब्राह्मण बचन वश माया सर्पहि राम ॥

स्वागता छंद

पन्नगारि तबहीं तहँ आए। व्याल जाल सब मारि भगाए ॥
लंक माँझ तबही गइ सीता। शुभ्र देह अवलोकि सुगीता ॥

वंशस्थ छंद

महाबली जूझत ही प्रहस्त को। चढ़यो तहीं रावण मीडि हस्त को ॥
अनेक भेरी बहु दुंदुभी बजें। गयंद क्रोधांध जहाँ तहाँ गजैं ॥

सवैया

देखि विभीषण को रण रावण शक्ति गही कर रोष रई है।
छूटत ही हनुमंत सों बीचहिं पूँछ लपेटि के डारि दई है ॥
दूसरी ब्रह्म की शक्ति अमोघ चलावत ही हाइ हाइ भई है।
राख्यो भले शरणागत लक्ष्मण फूलि कै फूल सी ओड़ि लई है ॥

दोधक छंद

यद्यपि हैं अति निर्गुणताई। मानुषदेह धरे रघुराई ॥
लक्ष्मण राम जहीं अवलोक्यो। नैनन तें न रह्यो जल रोक्यो ॥

षटपदी

राम—करि आदित्य अदृष्ट नष्ट यम करौं अष्ट बसु।
रुद्रन बोरि समुद्र करौं गंधर्व सर्व पसु ॥
बलित अबेर कुबेर बलिहि गहि देउं इंद्र अब।
बिद्याधरन अविद्य करौं बिन सिद्ध सिद्धि सब ॥
निजु होहु दासि दिति की अदिति, अनिल अनल मिटिजाइ जल।
सुनि सूरज! सूरज उदित ही करौं असुर संसार बल ॥

हनुमंत पैज

भुजंगप्रयात छंद

हन्यो विघ्नकारी बली वीर वामैं। गयो शीघ्रगामी गए एक यामैं ॥
चल्यो लै सबै पर्वतै कै प्रणामैं। न जान्यो शिल्यौषधी कौन तामैं ॥

द्रोणगिरि आनयन

लसैं औषधी चारु भो व्योमचारी। कहैं देखि यों देव देवाधिकारी ॥
पुरी भौम की सी लिये शीश राजै। महामंगलार्थी हनूमंत गाजै ॥
लगी शक्ति रामानुजै राम साथी। जड़ै ह्वै गये ज्यों गिरै हेम हाथी ॥
जिन्हैं ज्याइबे को सुनो प्रेम पाली। चल्यो ज्वाल मालीहि लै कीर्तिमाली ॥
किधौं प्रात ही काल जी में विचार्यो। चल्यो अंशु लै अंशुमाली सँहार्यो ॥
किधौं जात ज्वालामुखी जोर लीन्हें। महामृत्यु जामें मिटै होम कीन्हें ॥
बिनापत्र हैं यत्र पालाश फूलै। रमैं कोकिलाली भ्रमैं भौर भूलै ॥
सखानंद रामैं महनंद को लै। हनूनंत आये बसंते मनो लै ॥

मोठनक छंद

ठाढ़े भए लक्ष्मण मूरि छिए। दूनी शुभ शोभ शरीर लिए ॥
कोदंड लिये यह बात ररै। लंकेश न जीवत जाइ घरै ॥
श्री राम तहीं उर लाइ लियो। सूँघ्यो शिर आशिष कोटि दियो ॥
कोलाहल यूथप यूथ कियो। लंका हहली दशकंठ हियो ॥

कुंभकरण युद्ध

कुंभकर्ण रावणैं प्रदच्छिणासु दै चल्यो।
हाइ हाइ ह्वै रह्यो अकाश आशुही हल्यो ॥
मध्य क्षुद्रघंटिका किरीट शीश शोभनो ॥
लक्ष पक्ष सों कलिंद्र इंद्र पै चढ़्यो मनों ॥

नाराच छंद

उड़ैं दिशा दिशा कपीश कोटि कोटि श्वासहीं।
चपैं चपेट बाहु जानु जंघ सो जहीं तहीं ॥

लिये लपेटि ऐंचि ऐंचि वीर बाहु बातहीं ।
भखे ते अंतरिक्ष रिक्ष लक्ष लक्ष जातहीं ।।

भुजंगप्रयात छंद

कुंभकरण—नहीं ताड़का हौं सुबाहै न मानौं । नही शंभु को दंड साँची बखानौं ।।
न हौं ताल वाली खरै जाहि मारो । न हौं दूषणो सिंधु सूधौ निहारो ।।
सुरी आसुरी सुंदरी भोग करणैं । महाकाल को काल हौ कुंभकरणैं ।।
सुनौ राम संग्राम को तोहिं बोलौं । बढ़यो गर्व लंकाहि आये सो खोलौं।।
उठ्यो केशरी केशरी जोर छायो । बली बालि को पूत लै नील धायो।।
हनूमंत सुग्रीव सोभैं सभागे । डसैं डाँस से अंग मातंग लागे ।।
दशग्रीव को बंधु सुग्रीव पायो । चल्यों लंक में लै भले लंक लायो ।।
हनूमंत लातैं रत्यो देह भूल्यो । छुट्यो कर्ण नाशाहि लै इंद्र फूल्यो।।
संभार्यो घरी एक दू में मरू कै । फिर्यो राम हीं सामुहैं सो गदा लै ।।
हनूमंत सो पूंछ सों लाइ लीन्हौं । न जान्यों कवै सिंधु में डारि दीन्हौं ।।
जहीं काल के केतु सों ताल लीनों। करयौ राम जू हस्त पादादि हीनां ।।
चल्यो लौटते बाइ बक्रै कुचाली । उड्यौं मुंड लै बाण ज्यों मुंड माली ।।
तहीं स्वर्ग के दुंदुभी दीह बाजैं । कर्यो पुष्प की बृष्टि जै देव गाजैं ।।
दशग्रीव शोक ग्रस्यो लोक हारो । भयो लंक के मध्य आतंक भारी ।।

मेघनाद बध

चंचरी छंद

रामचंद्र बिदा कर्यो तब बेगि लक्ष्मण बीर को ।
त्यों विभीषण जामवंतहि संग अंगद धीर को ।।
नील लै नल केशरी हनुमंत अंतक ज्यों चले ।
बेगि जाय निकुंभिला थल यज्ञ के सिगरे दले ।।
जामवंतहिं मारि द्वै शर तीनि अंगद छेदियो ।
चारि मारि बिभीषणै हनुमंत पंच सुबेधियो ।।
एक एक अनेक बानर जाइ लक्ष्मण सों भिर्यो ।
अंध अंधक युद्ध ज्यों भव सों जुर्यो भव ही हर्यो ।।

हरिगीतिका छंद

रण इंद्रजीत अजीत लक्ष्मण अस्त्र शस्त्रनि संहरैं।
शर एक एक अनेक मारत बुंद मंदर ज्यों परैं॥
तब कोपि राघव शत्रु को शिर बाण तीक्षण उद्धर्यो।
दशकंध सन्ध्या करत हो शिर जाइ अंजुलि में पर्यो॥
रण मारि लक्ष्मण मेघनादहि स्वच्छ शङ्ख बजाइयो।
कहि साधु साधु समेत इंद्रहि देवता सब आइयो॥
कछु मांगिये वर वीर सत्वर भक्ति श्री रघुनाथ की।
पहिराइ माल विशाल अर्चहि कै गए शुभ गाथ की॥

कलहंस छंद

हति इंद्रजीत कहँ लक्ष्मण आए। हंसि रामचंद्र बहुधा उर लाए॥
सुनि मित्र पुत्र शुभ सोदर मेरे। कहि कौन कौन सुमिरौं गुण तेरे॥
दो०—नींद भूख अरु काम को जो न साधते वीर।
सीतहि क्यों हम पावते सुनु लक्ष्मण रणधीर॥

रावण-विलाप

रावण—आजु आदित्य जल पवन पावक प्रबल।
चंद आनंद मय त्रास जग को हरौ॥
गान किन्नर करहु नृत्य गंधर्व कुल।
यक्ष विधि लक्ष उर यक्षकर्दम भरौ॥
ब्रह्म रुद्रादि दै देव त्रैलोक के।
राज को जाय अभिषेक इंद्रहि करौ॥
आजु सिय राम दै लंक कुल दूषणहि।
यज्ञ को जाय सर्वज्ञ विप्रन बरौ॥

मकराक्ष-बध

भुजंगप्रयात छंद

महाराज लंका सदा राज कीजै। करौं युद्ध मेरी विदा वेगि कीजै॥
हतों राम स्यों बंधु सुग्रीव मारौं। अयोध्याहि ले राजधानी सुधारौं॥

वसंततिलका छंद

विभीषण—कोदंड हाथ रघुनाथ सँभारि लीजै।
भागे सबै समर यूथप दृष्टि दीजै॥
बेटा बलिष्ठ खर को मकराक्ष आयो।
संहार काल जनु काल कराल धायो॥
सुग्रीव अंगद बली हनुमंत रोक्यो।
रोक्यो रह्यो न रघुवीर जहीं बिलोक्यो॥
मार्यो विभीषण गदा उर जोर ठेली।
काली समान भुज लक्ष्मण कंठ मेली॥
गाढ़े गहे प्रबल अंगनि अंग भारे।
काटे कटैं न बहु भाँतिन काटि हारे॥
ब्रह्मा दियो वरहि अस्त्र न शस्त्र लागै।
लै ही चल्यौ समर सिंहहि जोर जागै॥
गाढ़ांधकार दिवि भूतल लीलि लीन्हों।
ग्रस्तास्त मानहुँ शशी कहुँ राहु कीन्हों॥
हाहादि शब्द सब लोग जहीं पुकारे।
बाढ़े अशेष अँग राक्षस के बिदारे॥
श्रीरामचंद्र पग लागत चित्त हर्षे।
देवाधिदेव मिलि सिद्धन पुष्प बर्षे॥

रावण-यज्ञविध्वंस

चामर छंद

प्रौढ़रूढ़िको समूढ़ गूढ़ गेह में गयो।
शुक्रमंत्र शोधि शोधि होमि को जहीं भयो॥
वायुपुत्र बालिपुत्र जामवंत धाइयो।
लंक में निशंक अंक लंकनाथ पाइयो॥
मत्त दंति पंक्ति वाजिराजि छोरि कै दई।
भाँति भाँति पक्षि राजि भाजि भाजि कै गई॥

आसने बिछावने बितान तान तूरियो ।
यत्रतत्र छत्र चारु चौंर चारु चूरियो ॥

भुजंगप्रयात छंद

भगीं देखि कै शंकि लंकेश बाला ।
दुरी दौरि मंदोदरी चित्रशाला ॥
तहाँ दौरिगौ बालि को पूत फूल्यो ।
सबैं चित्र की पुत्रिका देखि भूल्यो ॥
गहै दौरि जाको तजै तादिसा को ।
भली कै निहारी सबै चित्रसारी ॥
लहै सुन्दरी क्यों दरी को बिहारी ।
तजै देखि कै चित्र की श्रेष्ठ कन्या ॥
हँसी एक ताको तहीं देवकन्या ।
तहीं हास सों देव कन्या दिखाई ॥
गही शंकि कै लंकरानी बताई ।
सुश्रानी गहे केश लंकेश रानी । तमश्री मनों सूर शोभा निसानी ॥
गहे बांह ऐचे चहूँ ओर ताको । मनों हंस लीन्हें मृणाली लता को ॥
छुटी कंठमाला लुरैं हार टूटे । खसैं फूल फूलै लसैं केश छूटे ॥
फटी कंचुकी किंकणी चारु छुटी । पुरी काम की सी मनों रुद्र लूटी ॥
सुनी लंक रानीन की दीन बानी । तहीं छांड़ि दीन्हों महा मौन मानी ॥
उठ्यो सो गदा लैं यदा लंकवासी । गये भागि कै सर्व शाखा बिलासी ॥

राम-रावण युद्ध

चामर छंद

रावणै चले चले ते धाम धाम ते सबै ।
साजि साजि साज सूर गाजि गाजिकै तबै ॥
दीह दुदुंभी अपार भाँति भाँति बाजहीं ।
युद्ध भूमि मध्य क्रुद्ध मत्त दन्ति गाजहीं ॥

चंचरी छंद

इंद्र श्री रघुनाथ को रथहीन भूतल देखिके।
वेगि सारथि सो कह्यो रथ जाहि लै सुविशेषि के॥
तूण अक्षय बाण स्वच्छ अभेद ले तनत्राण को।
आइयो रणभूमि में करि अप्रमेय प्रणाम को॥
कोटि भाँतिन पौन ते मन ते महा लघुता लसै।
बैठिकै ध्वज अग्र श्री हनुमंत अंतक ज्यौं हँसे॥
रामचन्द्र प्रदक्षिणा करि दक्ष ह्वै जबही चढ़े।
पुष्प वर्षि बजाय दुंदुभि देवता बहुधा बढ़े॥
राम को रथ मध्य देखत क्रोध रावण के बढ़्यो।
बीस बाहुन की शरावलि व्योम भूतल सों मढ़्यो॥
शैल ह्वै सिकता गई सब दृष्टि के बल संहरे।
ऋक्ष बानर भेदि तत्क्षण लक्षधा छतना करे॥

मोदक छंद

बाणन साथ बिधे सब बानर। जाय परे मलयाचय की धर॥
सूरज मण्डल में एक रोवत। एक अकाशनदी मुख धोवत॥
एक गये यमलोक सहे दुख। एक कहें भव भूतन सों रुख॥
एकते सागर मांझ परे मरि। एक गये बड़वानल में जरि॥

मोटनक छंद

श्रीलक्ष्मण कोप कर्यो जबहीं। छोड़्यौ शर पावक को तबहीं॥
जार्यो शर पंजर छार कर्यो। नैऋत्यन को अति चित्त डर्यो॥
दौरे हनुमंत बली बल सों। लै अंगद संग सबै दल सों॥
मानों गिरिराज तजे डर को। घेरैं चहुँ ओर पुरंदर को॥

हीर छंद

अंगद रणअंगन सब अंगन मुरझाइ कै।
ऋक्षिपतहिं अक्षरिपुहिं लक्षगति रिझाइ कै॥

बानर गण बारन सन केशव सबहीं मुर्‌यो ।
रावण दुखदावन जगपावन समुहें जुर्‌यों ।।

चंचला छंद

इंद्रजीत जीति आनि रोकियो सुबाण तानि ।
छाँड़िदीन वीरबानि कान के प्रमान आनि ।।
स्यां पताक काटि चाप चर्म वर्म मर्म छेदि ।
जात भो रसातलै अशेष कंठमाल भेदि ।।

दंडक छंद

सूरज मुसल नील पट्टिश परिघ नल । जामवंत असि हनू तोमर प्रहारे हैं ।।
परसा सुखेन कुंत केशरी गवय शूल । विभीषण गदा गज भिंदिपाल तारे हैं ।।
मोगरा द्विविद तीर कटरा कुमुद नेजा । अंगद शिला गवाक्ष विटप विदारे हैं ।।
अंकुश शरभ चक्र दधिमुख शेष शक्ति । बाण तिन रावण श्री रामचंद्र मारे हैं ।।

दो०—द्वैभुज श्रीरघुनाथ को बिरचे युद्ध विलास ।
बाहु अठारह यूथपनि मारे केशवदास ।।

गंगोदक छंद

युद्ध जोई जहाँ भाँति जैसी करै । ताहि ताही दिशा रोकि राखै तहीं ।।
अस्त्र आपने लै शस्त्र काटै सबै । ताहि केहूँ केहूँ घाव लागै नहीं ।।
दौरि सो मित्र लै बाण को दंड ज्यों । खंड खंडी ध्वजा धीर छत्रावली ।।
शैल शृङ्गावली छोड़ि मानों उड़ी । एक ही बेर कै हंस वंशावली ।।

त्रिभंगी छंद

लक्ष्मण शुभ लक्ष्मण बुद्धि बिचक्षण रावण सों रिस छोड़ दई ।
बहु बाँणनि छंडै जै सिर खंडे ते फिर मंडै शोभ नई ।।
यद्यपि रणपंडित गुण गण मंडित रिपुबल खंडित भूल रहे ।
तजि मन बच कायक सूर सहायक रघुनायक सों बचन कहे ।।
ठाढ़ौ रण गाजत केहुँ न भाजत तन मन लाजत सब लायक ।
सुनि श्रीरघुनंदन मुनिजन बंधन दुष्ट निकंदन सुखदायक ।।

अब टरै न टार्यो मरै न मार्यौ हौ हठि हार्यों धरि शायक ।
रावण नहिं मारत देव पुकारत ह्वै अति आरत जगनायक ॥

रावण-बध

छप्पै

राम––जेहि शर मधु मद मरदि महासुर मर्दन कीन्हेंउं ।
मारेहु कर्कश नर्क शंखहति शंख हु लीन्हेंउं ॥
. निष्कंटक सुर कटक कर्यों कैटभ बपु खंड्यो ।
खर दूषण त्रिशिरा कबंध तरु खंड बिहंड्यो ॥
कुंभकरण जेहि संहर्यो पल न प्रतिज्ञा ते टरों ।
तेहि बाण प्राण दशकंठ के कंठ दशौं खंडित करौं ॥

दो०—रघुपति पठयो आसुही असुहर बुद्धिनिधान ।
दशशिर दशहू दिशन को बलि दै आयो बान ॥

सुन्दरी सवैया

भुव भारहिं संयुत राकस को गण जाइ रसातल में अनुराग्यो ।
जग में जय शब्द समेतिहि केशव राज विभीषण के सिर जाग्यो ॥
मय दानव नंदिनि के सुख सों मिलि के सिय के हिय को दुख भाग्यो ।
सुर दुदुंभी सीस गजा शर राम को रावण के शिर साथहिं लाग्यो ॥

———

मान

कवि-परिचय

मान कवि के विषय में इससे अधिक अभी तक पता नहीं चला है कि ये राजपुताने के एक कवि थे। इनका एक मात्र ग्रंथ, जिसका कि हिंदी संसार को पता है, 'राजविलास' है, और उसमें सिवाय इनके नाम के और कुछ भी व्यक्तिगत परिचय नहीं मिलता। राजपुताने के किस प्रांत या किस राजदर्बार के ये कवि थे, यह भी जानने का कोई उपाय नहीं है।

राजविलास का रचना काल सं० १७३४ से आरंभ होता है। इस ग्रंथ में सं० १७३७ तक की घटनाओं का वर्णन मिलता है, और ग्रंथ के अंतिम अंशों को देखने से स्पष्ट प्रतीत हो जाता है कि कवि किसी प्रकार शीघ्र ग्रंथ को समाप्त करना चाहता है। इस का कारण यही हो सकता है कि सं० १७३७ में ही ग्रंथ के चरितनायक—महाराणा राजसिंह—का शरीरपतन हुआ, और इस घटना के साथ ही कवि ने ग्रंथ समाप्त कर देना उचित समझा।

राजविलास

राजविलास—अठारह विलासों (अध्यायों) में समाप्त हुआ है। आरंभ के कई विलासों में सिसोदिया वंश का इतिहास है। मुख्य कथा महाराणा राजसिंह के उदयपुर के सिंहासन पर बैठने के बाद से आरंभ होती है। सिंहासनारूढ़ होते ही 'टीकादारी' की प्रथा के अनुसार यह दिग्विजय को निकले और 'मालपुर' नामक मुग़ल राज्य के एक गाँव को लूटकर औरंगज़ेब से शत्रुता ठान ली। औरंगज़ेब पहले ही से राजसिंह को पद्दलित करने का अवसर ढूँढ़ रहा था, इस घटना से वह अवसर इसे मिल गया। इसके साथ ही एक घटना और ऐसी हो गई जिससे मुग़ल सम्राट की क्रोधाग्नि भयानक रूप से प्रज्वलित हो उठी। मारवाड़ राज-वंश की एक शाखा का प्रभुत्व रूपनगर पर था, और उन दिनों

राठौर राजा मानसिंह वहाँ की गद्दी पर विराजमान थे। उनकी पुत्री रूपकुमारी (प्रभावती) रूप और गुण में अद्वितीय समझी जाती थी, और यह समाचार बादशाह को भी मिला। उसने रूपकुमारी को अपने शाही ज़नानख़ाने की शोभा बढ़ाने के योग्य समझ कर मानसिंह के पास दो हज़ार घुड़सवार सेना, एक मनसबदार की अधीनता में इस हुक्मनामें के साथ भेज दी कि रूपकुमारी उस के साथ कर दी जाय, और बादशाह बड़ी ख़ुशी से उसे अपनी बेगम बनाना चाहते हैं। मानसिंह को तो कुछ विशेष आपत्ति न जान पड़ी, परंतु स्वयं रूपकुमारी ने ही या तो इस अपमानसूचक प्रस्ताव से क्षुब्ध हो कर या राजसिंह की वीरता पर मुग्ध हो कर, और उन्हीं के साहस पर भरोसा कर बड़े तिरस्कार से इस शाही संबंध को अस्वीकार कर दिया। इस तिरस्कार के साथ उसने एक पत्र द्वारा राजसिंह को आत्म-समर्पण किया और अपनी लाज रखने की प्रार्थना करती हुई यह संदेशा भेजा—"क्या हंसिनी कभी बगुले की सहचरी हो सकती है? क्या एक पवित्र कुल की राजपूतनी उस बँदरमुहें म्लेच्छ की पत्नी बनेगी?' मूलग्रंथ में यह आशय इस प्रकार वर्णित है—

"जिन आनन रूप लँगूर जिसो, पलसर्व भर्षे सुर सों युग सौं।
जिन नाम मलेच्छ पिशाच जनो, सुर ही रिपु होन न स्याम मनों॥
गिरि श्रृङ्ग उतंगनि तें यु गिरौं, कुल कज्ज हलाहल पान करौं।
जरतें झर पावक कुंड जरौं, बरिहौं सुर, आसुर हौं न बरौं॥"

संदेशा पाते ही राजसिंह ने कुछ चुने हुए निक सैौंको साथ लेकर शाही फौज को तहस-नहस कर डाला और रूपकुमारी को अपने यहाँ ले जाकर उससे विवाह किया।

इसके अतिरिक्त राजसिंह ने बादशाह की क्रोधाग्नि भड़काने के लिए एक काम और किया। औरंगज़ेब ने जो 'जज़िया' नामक एक विशेष कर हिंदू प्रजामात्र पर लगाया था, उस का राजसिंह ने एक पत्रद्वारा घोर विरोध किया। फलस्वरूप औरंगज़ेब और राजसिंह में संग्राम छिड़ गया और बहुत दिनों तक चलता रहा, इस युद्ध में राजस्थान के

प्रायः सभी वीर, सरदार-सामंत राजसिंह के झंडे के नीचे आ गये थे।

प्रधान युद्ध में बादशाह ने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। शाही फ़ौज में ५०,००० सैनिक थे और उस का नायक शाहज़ादा अकबर था। राजसिंह के पुत्र जयसिंह ने अकबर का मुक़ाबिला किया और उसे बुरी तरह हरा कर जन-धन की अपार क्षति के साथ भगा दिया।

राठौर वीर दुर्गादास ने भी, जो बहुत दिनों से औरंगज़ेब के अत्याचार से खिन्न होकर उसे नीचा दिखाने की चिंता में थे; जी खोल कर राजसिंह का साथ दिया। अंत में शाही फ़ौज की गहरी हार हुई और राजपूतों के हाथ विजयलक्ष्मी के अतिरिक्त लूट का माल भी बहुत आया।

इस ग्रंथ की भाषा राजस्थानी होते हुए भी 'डिंगल' भाषा से इतना सादृश्य नहीं रखती जितना की वीसलदेव रासो या पृथ्वीराज रासो की भाषा। इस में माधुर्य गुण उक्त दोनों ग्रंथों की अपेक्षा कहीं अधिक है। इस का मुख्य कारण यह है कि कवि ने कर्णकटु शब्द, जिन में डकारादि मूर्धन्य वर्णों और संयुक्ताक्षरों का प्राधान्य रहता है, यथाशक्ति नहीं आने दिये हैं। इन का पदविन्यास अपेक्षाकृत कोमल है और अनुप्रासों का प्रयोग सहजसुंदर रूप से बराबर देखने में आता है।

मान के राजविलास का प्रधान रस वीर है, यद्यपि शृंगार और शांत रस की अवतारणा में ये अपेक्षाकृत अधिक सफल रहे हैं।

यहाँ जयसिंह और अकबर का युद्ध दिया गया है।

जयसिंह और अकबर का युद्ध

कवित्त

प्रथम सुहोत निसाय चढ़ति बजी चावद्दिशि।
हय गय पक्खरि भर सनाह पहिरिय सुबंधि असि॥
दुतिय निसान सुहोत हसम घमसान घनारँभ।
मिले सबल सामंत सूर ज्यों समुद सलित अँभ॥
बाज्यो सु तृतिय निसान जब तब जयसिंह चढ़े सुहय।

चामर ढुरंत उज्जल उभय आतपत्र नग रूप मय ॥
चंद्रसैन झाला नरिंद गजगाह वंध गुरु ।
चढ़े राव चहुआन सिंह ज्यों सबर सिंह बरु ॥
बैरी सल्ल पँवार राय बीराधिबीर रण ।
सगताउत रावत सु सज्जि केहरि केहरि गुन ॥
रावत चोंडाउत रतन सी महुकम रावत बड़ सुमति ।
चहुवान केहरी सी चढ़ै चपल तुरंगम चंड गति ॥
महाराय भगवंत सिंह रूषमांगद रावत ।
षीची राव सुरेण षेंग चढ़ि षुरिय नषावत ॥
मानसिंह रावत सुमंत मुहकम सिंघ रावत ।
गंगदास कूँअर अभंग केहरि चोड़ाउत ॥
माधव सुसिंह चोंडा मरद कन्हा सगताउत सुकर ।
जसवंत जैत झाला प्रमुख सजे सकल सामंत भर ॥

दोहा

सबल एह सामंत भर, अनि उमराव अपार ।
सेन कुँअर जयसिंह की, करन असुर संहार ॥

छन्द गीतिमालती

गंगगढ़ धौंकि निसान धों करि भद्र भंभा भरहरे ।
झननंकि ताल कँसाल झननन द्रनन दुरबरि डंबरे ॥
सहनाइ पूरि सँपूरि सिंधुअ ठनन तूर ठनंकियं ।
ढम ढमकि ढोल ढमंढमं फुनि फुनि नफेरि भनंकियं ॥
संचले दल मुख सबर सिंधुर गात अंजम गिरिवरा ।
संत्तग भूमि लगंत सुंदर झरत गिरि ज्यों मदझरा ॥
सिंदूर तेल सुरंग शीशहिं मुत्ति माल मनोहरं ।
संढुरत उग्रल चोर सिरि श्रवसिंह सो बन श्रीभरं ॥
मुह संड दण्ड गदण्ड मंडित तरुन तरु उनमूरते ।
दृढ़ दिग्घ दंत सभार शशि दुति सकल सोभ सँपूरते ॥

महकंत दाँत कपोल मूलहिं गुंज रव अलिगन भ्रमें ।।
ठनकंत घंट सुघंट कंठहिं चरन घुग्घर घमंघमें ।
सुसनद्ध बद्ध सनाह संकर तदपि प्रग गति पग धरे ।।
गरजंत ज्यौं घन गुहिर जलधर भीम ऋतु भद्दव भरे ।
सुपताक हरित सुरत्त पीतनि चिन्ह हरि रवि चंडियं ।।
कर कनक अंकुसि धत्त धत्तह पीलवाननि तंडियं ।
चर चलत अग्गरु पच्छ चरषी पून तदपि परे परे ।।
वहु विरद वंके वंदि वोले भूमि तव इक पय भरे ।
कहर अग्ग करिनी केक करिवर शुद्ध चित्त तव संचरे ।।
पर दलनि पेलन पील दलपति विकट कोटनि जे अरे ।
ढलकंत ढाल सवास ढंकित डोल वर किन पर कसें ।।
गुरु नाहि गोर जँबूर किन पर लोह कण्टक किन लसें ।
किन पिट्ठि नद्द निसान नौवत कनक के सुम्भर तरे ।।
गजराज गुरु सुर राज के से स्याम घन जनु संचरे ।
एराक आरव देश उतपति कासमीर कलिंग के ।।
कांवोज कोंकणि कच्छि कविले हय उतंग सु अंग के ।
पय पंथ सिंधग्र पवन पथ के तरणि रथ के से तुरी ।।
वहु विविध रंग सुरंग सजनसु पंग वर करते घुरी ।
हंसिले हरडें हरी किरडे रंग लाखिय लीलड़े ।।
गोभीय सिंहलि भेर अँव रस वोर ससकी दग वड़े ।
संजाव तुरजे ताजि तुरकी किलकिले अरु कातिले ।
सुकुमेत गंगाजल किहाडे गरुड गुल रँग गुण निले ।।
जिगमिगति नग युत स्वर्ण साकति वेनि वर पंचे वनी ।
सुजवादि मंडि रु पाट पँचरँग गुँथी मधि मौक्तिक मनी ।।
फवि विविधि फुंदावली रेसम लुंव भुंव वषानियें ।
वढ़ि हेष हेष सघाण वजत जोर सोर सुजानियें ।।
नच्चंत धृत ततताम नट ज्यों थाल मध्यथलं गने ।
सकुनीन पूजतु मग्ग संगहिं गिरि उतंगहिं ना गिने ।।

पर करे नप सिप्र सजर पर कर समर योग सराहिये ।
मनु मरुत मित्र कि चित्र चित्रित चाल चंचल चाहिये ॥
रग चढ़े तिन पर राव रावत अन्य गुरु लहु उम्मरा ।
वर वीर धीर समीर नृप भर सिलह पूर सडंबरा ॥
घन घाघ रट थट सुघट अवघट घाट की जत दल घने ।
बड़ि छोह जोह सकोह कंदल क्रूर वर देखे बने ॥
रथ भरति के घन कनक रूब अधुर्य जिन जोरा धुरा ।
गुरुनारि गंत्रिन सोर गोरिय तीर तरकस तोमरा ॥
धनु कवच त्राण कृपाण भगवति कुंत कत्ती किलकिला ।
सुसँवारि सार छत्तीस आयुध करण पल दल कंदला ॥
पयदल प्रचंड उदंड संडति सनध बद्ध समायुधा ।
सिर रोस जोस सुरत्त लोयन सद्दवेधी संयुधा ॥
पति भक्त पर दल पूर पैरत पाइ नन पच्छे परें ।
धसमसहिं धरनि न चरन घसकनि धकनि कोटति धरहरें ॥
दल मध्य दिनपति सरिस तनुद्युति कुंअर श्री जयसिंह हैं ।
आरुहे दंस सुबंस हयवर सकल चक्खु समीह हैं ॥
उतमांग चौर दुरंत उज्वल आतपत्र जराव को ।
कवि वृंद छंद वदंत कीरति देवद्रुम सदभाव को ॥
दिशि विदिशि दलदल ज्यो जलधिजल अचलचलचल ह्वै चले ।
पल ग्रहनि पल भलकुंत कलकल सलिल शंशति सलसले ॥
कल कलिय कच्छप पिट्ठि कसमस धींग धसमस धावहीं ।
घुरतार तार प्रतार वज्रत जानि विश्व जगावहीं ॥
शिव संक सकबक इंद अकबक धीर धाता धकपके ।
सुर सकल सटपट चंद चटपट अरुण अटपट हकबके ॥
झलझलिय निधि रवि परिय झंपर पह उझंसर पिक्खए ।
सरसलित सलिल समूह सकुरि वर प्रयान विसिक्खए ॥
करिग पयान सकोप चमू सज्जीव चतुरंगनि ।
अरक बिंब आवरिय रेणु भरि गेण सोर भनि ॥

उलटि जानि जल उदधि कटक भट विकट उपट थट।
सकित मग्ग सर मुकित चकित चहुँ ओर ऊंटपट ॥
उरजंत कुरंग बराह बर हरि घर बन पुर असम सम।
जयसिंह कुँअर सुकरन जय चढ़िदल बद्दल गम अगम ॥
एक अग्ग अनुसरत एक धावंत वग्र तजि।
एक कुदावत तुरग इक्क रहवाल चाल सजि ॥
हयनि हेष नासानिनाद प्रति साद गैंन गजि।
पर निज सुद्धि न परति भीति धरि रिप्पुन बन भजि ॥
उन्नत पताक पँच रँग प्रवर तिन उरझत रवि तुरगपय।
तिनतें श्रवंत मुगतानि कन जानि राज्यश्री श्रवति जय ॥
अडग डगति डगमगति अद्रि परहरति अष्टकुल।
चंड चक्खु चकचकति उघरि यल गति मुद्रित पल ॥
अचल चलति पल भलति झलकि झलझलति जलधि सर।
अढर ढरति ढरि परति धरनि धरहरति हयनि खुर ॥
अकबकति इंद हकबकति हर धकपकि धाता धीरनन।
जयसिंहसेन सचि चढ़त जब तब त्रिभुवन संकत सुमन ॥

दोहा

प्रबल पयान दिसान प्रति, नाद पूरि रज पूरि।
बन गिरि तुट्टि संघुट्टि बन, भय पर जन पद भूरि ॥
आलम के दल उप्परहिं, तत्ते किए तुषार।
आऐ तबही गढ़ उररि, श्री जयसिंह कुअांर ॥
दिए मलीदा मैंगलनि, रावत हयनि रसाल।
सलिल प्याइ छंटेव मुंह, बरत्यो समय बियाल ॥
बीरा सव्य कपूर बर, लहु एलची लवंग।
नवल जायफल नागरस, रंजे सुभट सुरंग।
सिंधू गोरी बजत सुर, सूरति बढ़त सुछोह।
तृन ज्यों तन धन तिनतजे, मानिनि माया मोह ॥

पलक ज़ात रजनी परि, बिथुर्‌यो तम सुबिसाल।
तुरकानी दल पर तुरी, तेल न लगे भुवाल॥
तबही बग्ग गहें तुरिंत, सकल सूर सामंत।
करें बीनती कुंवर सों, शीतल भाष सुमंत॥

अथ झाला चंद्रसेन जी की अरदास

प्रभु हम प्राक्रम पेखियहि, धरहु आप मन धीर।
प्रथम पदाति युधंत जुधि, तदनु सांइ बरबीर॥

अथ चहुवान राव सबलसिंघ जी की अरदास

हम समान सेवक सहस, निपजें बहुरि नवीन।
साईं सेवक लक्खकनि, पोषन को प्रभु कीन॥

अथ पवांर राव बैरीसाल जी की अरदास

साईं इहि सेना सकल, हय गय सुभट ससाज।
समर समय ही को सजे, कहा और हम काज॥

अथ सगताउत रावत केसरी सिंघ जी की अरदास।

साईं काम सेवक सरे, तो तित स्वर्गहिं ठौर।
साईं पंखे संकरें, तिनहिं नरग नहिं और॥

अथ चोंडाउत रावत रतनसिंघ जी की अरदास

साईं रक्खे सीस पर, सेवक लरे सुभाइ।
अब सेवक साहस बढ़े, तहँ प्रभु करे सहाइ॥

अथ सगताउत रावत महुकम सिंघ जी की अरदास

मनिधर ज्यों थिर थप्पि मनि, आप तास सुप्रकास।
चेजा करत सचेत चित, त्यों हम लरन उल्हास॥

अथ राव केसरी सिंघ जी की अरदास

साईं सिरजे हुकम को, हुकम दिपाउनहार।
हुकमी साईं के बहुत, जंगवार जोधार॥

तदनंतर महाराजा भगवत सिंघ जी की अरदास

तोरि पताका तुरक के, नोबति लेई निसान।
आवै तो उमराव तुम्ह, प्रभु हम बचन प्रमान॥

तदनु चहुवान रुषमगिद रावत की बिनती

साईं पचारत सेवकनि, हाँ भल बोलि हुस्यार।
तव मन दूनों बल बढ़ें, शत्रुनि करत संहार॥

तदनु षीची राव रतन की अरदास

इह तन इह मन इह सुधन, इह सुव्र गेह सयान।
हैं साईं ही के सकल, परिकर संयुत प्रान॥

अथ रावत मानसिंघ जी की अरदास

राखि पीठि मुरारि रिन, पंडव पंच प्रधान।
कौरव दल तिल तिल कियो, हम मन एह मंडान॥

अथ सगताउत रावत महुकम जी की अरदास

सांइ भरोसे रक्खिए, हम अभंग रन हिंदु।
कहर काल करवाल गहि, मारहिं मीर मसंद॥

अथ सगताउत गंगदास कुंवर की अरदास

विमल वंश जन के विदित, मात पिता प्रभु एक।
ते साईं के काम ते, टरे न इह तिन टेक॥

अथ चोंडाउत रावत केसरी सिंघ की अरज

देषत चंदहि दूरितें, चुनत कसानु चकोर।
त्यों सांई निरखत सुभट, रण मुमचावहिं रोर॥

अथ माधोसिंघ चोंडाउत की अरदास

साइँ सुखते हम सुखी, सकल सूर सामंत।
ज्यों तरु सींच्यो पेड़ तेँ, पात पात पसरंत॥

अथ कन्ह सगताउत की अरदास

साईं सकल सयान हो गुरु बंधे गजगाह।
एक तमासो अनुग को, देष्हु दंदहु वाह ॥
करयुग जोरि सुललित करि, करि निज निज अरदास।
करि प्रसन्न जैसिंघ मन, बग्ग थंभि बरहास ॥
सहस सुभट हय बर सहस, प्रभु रक्खे निय पास।
समर धँसे हय सहस दस, सुभट सहस दस भास ॥

कवित्त

सकल सूर सामंत अरज वित्ती सु अद्ध निशि।
वरषागम वद्दल वियाल द्रग चाल बंध दिशि ॥
झेले भय भारत सुभीम पतिसाहि सेन पर।
त्रटकि जानि घन तरित झटकि चित चक्कित असुरभर ॥
वे चूक चूक कविला वकत जानि किसान लुनंत कृषि।
वज्जी सुझाक झर षग्ग झट संयुग प्रलय समीर शिषि ॥

छन्द मुकुंदडामर

झननंकिय षग्ग सुबज्जिज झटाझटि धाइ धसंमस धींग धसैं।
कर कुंत सकंति रुकंति कटारिय लोह झलंमल झांइ लसैं ॥
जरि जोधनि जोध जनों जम जोरिय टोप कटक्कि करी करकैं।
झटकंत सनाह कृपान झनंकति हड्ड कटक्कि बजें जरकैं ॥
मिलि कंकनि कंक सुधार पिरंतह अग्गि झरंत कि बिज्जु झला।
तिन होत उदोत तकै उतमंगहिं कोपित सूर अनंत कला ॥
मच्चि कँदल मीर गँभीर कटे मधि माझिय जेइ मसंद महा।
तनु भार सँभारिय वँध भुजा तिन भार पराक्रम षग्ग वहा ॥
बहि वज्र प्रहार गदा गुरु मुग्गर पक्खर भार सुढार ढरैं।
टुटि टोपनि टूक फटैं फुनि टट्टर सैद बिकैद से सून फिरैं ॥
लरि लुंब पठान छके छिलि लोहनि पंड विहंड बितंड भए।
प्रहनंत न अप्पन आन पिछानत जानि सुठाए के पंभ गए ॥

दुहुँ ओर दुबाह उछाह उमाहिय आपने ईश को आन बदै।
तजि नेह सुदेह सुगेह सुमानिनि सांइय काम सुहाम रुदै॥
करि ताक सँभारि सँभारि सुहक्कत बेधत बान अभंग बली।
तनु त्रान संधान सुआन स प्रानहिं बेधत आनहिं होत रली॥
सर सोक बजंत सुढंकिय अंबर डंबर जानि कि मेघ श्रवै।
बहि रँग प्रबाह सराह प्रबालिय चोल रँगे जनु चेल चुवै॥
फरसी हर हुल्ल गुपत्ति फुरंतह धीरज केइक धीर धरै।
भननंकिय गोर सुसोर भटक्किय गेन गजैं गिर शृङ्ग गिरैं॥
धर पिट्ठि धसक्कि धसक्कि धराधर कायर जानि कुरंग भगे।
घन घोष सुत्रंबक सिंधु घुरंतह ज्यों बर बीरनि बीर जगे॥
कुननंत किते कविला कलहंगनि रूम्मि रूहिल्ल गोहल्ल रुरैं।
मचि मारहु मार सुमार मुषं मुष भारिय भारत भूप भिरैं॥
उत्तमांग पतंत कहैं केइ अल्लह के रसना तें रसूल ररैं।
घन घायल घाउ लगे घट घूमत झूमत ही धर धंसि परैं॥
हबसी उजबक्क बलोच्चिय भंभर गक्खरि भक्खरि कोन गिनैं।
परि सत्थर वित्थर चेरि रिनंगन बायक कैसे कहंत बनैं॥
कटि कंध कमंध सुअंध गहैं असि नच्चत रूप बिरूप लगैं।
उबरंत परंत गिरंत कि गिंदुक जिंदु अटट्टहास जगैं॥
गज बाजि फिरंत रिनंगन गाहत भंजि कर कनि भूक करैं।
तरफैं अधतंग तुटे नर आसुर ज्यों जलहीन सुमीन रुरैं॥
कर षग्ग कढ़ैं शिर षंध लटक्कत आन झटक्कत झुंझि भरैं।
मुष मार बकंत हकंत हुस्यारिय झार प्रनार सुरंग झरैं॥
नट ज्यों भटकैं किन बल्ल निपट्ट उलट्ट पलट्ट कुलट्ट नच्चैं।
अनतुंग अनोकुह अंत अलुज्झत मांस रू श्रोनित पंक मच्चैं॥
किन अश्व कटंब धयंत सुधाइन पाइ झरंत सुकुंत बरैं।
रहि ठट्ट सुगट्ट कुधंत इकैं करपार बदंतन छोनि परैं॥
बिन हत्थ किते धषि मारत मुंडहिं ज्यों वृष मेष महीष भिरैं।
बढ़ि सत्थ लथब्बथ के हथ बाहु सुमुट्ठिन मुट्ठि ज्यों मल्लजुरैं॥

भभकें करि सुंड विहंड भसुंडह चच्चर रत्त प्रबाह जलें ।
उछरें अरि षंड सुजानि अजग्गर जंगल केलि करंत जलें ।।
उड़ि श्रोनितछिंछि उतंग अयासहिं संझ समान सुवान बढ़्यो ।
बलि लेन बिताल रु बीर बिनोदिय चौंसठि युग्गिनि रंग चढ़्यो ।।
लगि लुत्थिन लच्छि उलच्छि पलच्छिय हत्थिन हत्थिय व्यूह अरे ।
हय सत्य किते हय ग्रीवह बस्सिय बाढ़ विहस्सिय भूमि ढरे ।।
टुटि टोप रु त्रान कृपान सरासन तीर तरक्कस कुंत तुटें ।
वर वेरष बंबरि झंड उझझूरी तेज रु नारि अराब फटें ।।
बहु रूप बिलास प्रहास समीहित इशर अंबुज माल गुहें ।
सब केक हकारि बकारि सुउड्डहिं गिद्धनि तुंडनि मुंड गहें ।।
प्रहनंत दुहूँ पष बीर पचारत बाहि समाहि बदंत बली ।
तिन सद्द सुनंत सुनारद तुंबर रक्खस जक्ख सुहोत रली ।।
अरि मुंड किते हय गय पय ठिप्पर चोट चोगान की दोट भये ।
रन रंग रलत्तल रत्त महीतल चक्क चलंचल चंड जुए ।।
रस भैरव भूत पिचास महोरग दैतरु दानव दंद चहैं ।
सुर इंद सबै मिलि सूर सराहत हो हिंदुवान की जैति कहैं ।।
रुरि रुंड रु सुंडनि नार मलेछनि सेन सुषंड बिहंड भई ।
प्रहरेक प्रमान महा झर मंडिय भारथ उद्धम भाँति ठई ।।
बरें हूर समूर सँपूर सुसूर सनेह गरें बर माल ठवें ।
जयकार करंति बधाइ समुत्तिन मङ्गल गाय प्रसून श्रवें ।।

कवित्त

प्रमुदित श्रवति प्रसून गीत रंभागन गावत ।
बरत सु बर वर मीर बिवल मोतीन बधावत ।।
गरहिं घल्लि वर माल साष्नि दे सकल सूर सुर ।
पंकजनैनी पढ़त बर्यों मैं प्रगट एह बर ।।
बेताल फाल बिकराल बपु हास अट्ट हरषत हसत ।
असि झरझरंत तुट्टत असुर धीर वीर रिण धर धसत ।।
असि अपार अकरार धार रिपुमार धपंतिय ।

जंगवार जोधार मार करतार सुमंयित ॥
झलमलंति झनकंति खिज्जि पल मत्थ विपंतिय ।
सौदामिनि-सोदरा समल जन अजय जयंतिय ॥
रँगी सुरँग रलतल रुहिर सकल सत्रु संहारती ।
हिंदुवान थान रक्खन सुहृद भगवति प्रगटी भारती ॥
विफुरि हिंदु वर वीर दान असुरान ढँढोरत ।
हय गय नर संहार झार घन झंड झकोरत ॥
लुट्टत लच्छि अलेप क्रूद्द फुट्टी अकरारिय ।
सोवति सुंदरि सत्थ साहिजादा भय भारिय ॥
सु पलतिय कुल सकल अकल विकल हिय हरवरत ।
पलभलिय भग्गो सभीत गिरि वन गहन निसि अंधियारी अरवरत ॥
हिय हहरंति हुरम्म हार तुट्टत मोतिन गन ।
परत हीर परवाल लाल श्रम भाल स्वेद कन ॥
निघटि स्वास निस्वास भरति लोचन मृगलोचनि ।
यूथभ्रष्ट मृग बधु समान चक्रित रस रोचनि ॥
धावंत उमग्गनि मग्ग तजि एकाकिनि गिरि गृह सजति ।
ए ए प्रताप जयसिंघ तुम अरिन वाम नर वन व्रजति ॥
लुट्टि पजान असान लुट्टि हय गय सुविहानिय ।
साहिगंज ढंढोरि तोरि तंबू तुरकानिय ॥
नौबति लेइ निसान भार रिपु थान सुभज्यौ ।
जानो सकल जिहान सकल सज्जन मन रंज्यौ ॥
बहुरे निसंक जय करि बहुत मिल्यौ म्लेछ तिन मारयौ ।
महाराण सुभट सामंत सजि बहु असुरान बिडारयौ ॥

दोहा

भगो साहिजादा गयौ गढ़ अजमेर अनिष्ट ।
रहे न आसुर और रन नृपत बाघ सब नष्ट ॥
करैं सुमुजरो कुँअर सों सकल सूर सामंत ।
छवि छिलते रन छोड़ले बहु सुप पाय अनंत ॥

लहे सु जिन जिन लुट्टि के हय वर हच्छी हेम।
कुँअर अग्गते भेट करि पोषिय प्रवर सुप्रेम ॥
रक्खन जोगे रक्खि के सनमाने सब सूर।
ग्राम ग्राम तिन देइ गुरु सज शिरपाव सनूर ॥
आए निज ग्रह जीति अरि करि बहु कंदल काम।
उथपि थान असुरेश को हृदय सु पूरिय हाम ॥
इहि परि रक्खें निज अवनि राजसिंघ महाराण।
और हिंदु सेवे असुर षल षंडन षूमान ॥

अथ कलस कवित्त

अजमेरह अग्गारो काध दिल्ली धर धुज्जै।
रिनथंभह रलतले लच्छि लाहौर लुटिज्जै ॥
षुरासान षंधार थटा मुलतान थरक्कै।
चंदेरी चलचलय भीति ऊज्जैनि भरक्कै ॥
मंडवह धार धरनी मिलय डुलय देस गुजरात डर।
औ दकै साहि औरंग अति राण सबल राजेश वर ॥
अचल युद्ध धर अकल अखल अज्जेज अभंगह।
अद्भुत अनम अनंत आदि अवनीस सु अंगह ॥
कालकिन केदार पापि कज्जे प्रयाग पहु।
महि सु गगन मदवान विरुद इहिं भाँति जास बहु ॥
जगतेश राण सुअ जगत जस अच्छि देत बिलसंति अति।
कहि मान राण राजेश यौं छत्रीपन रक्खंत षिति ॥
सज्जन सों सनमान दंड भरि थक्के दुज्जन।
जसकारक जाचकनि देत हय हच्छि दिनं दिन ॥
न्याउ बेद वर नीति दूध कौ दूध जलं जल।
अजा सिंह थल इक्क सलिल ढुक्कत बिन संकल ॥
ध्रुवर अजास जौं लौं धरा प्रगट बिरुद जिन हिंदु पति।
कहिमान राण राजेश यों छत्रीपन रक्खंत षिति ॥

इंद्र रूप ऐश्वर्य्य दान जलधर ज्यौं दिज्जै।
राज तेज रवि रूप क्रोध रिपुकाल कहिज्जै॥
लीला ज्यौं लच्छीस न्याय श्री राम निरंतर।
अर्जुन ज्यौं सर अचल बिक्रमादित्य बचन वर॥
कलियुग कलंक कप्पन विरुद मलन असुरपति विमल मति[1]।
ऍं उत्तम आचार निबल आधार सबल नृप॥
सुरहिं संत जन सरन जग्य घन दान होम जप।
विस्तारन विधि वेद ईश प्रसाद उद्धरन॥
असुरायन उत्थपन सु कवि घन बित्त समप्पन।
दिन दिनहिं सदा व्रत षट दरस भुँजाई यदुनाथ भति॥
कहि मान राण राजेश यों छत्रीपन रक्खंत षिति।

---

[1]इस छंद का अंतिम चरण हस्त-लिखित पुस्तक में नहीं लिखा है, परंतु अनुमान से जान पड़ता है कि इसका भी अंतिम चरण वही होगा जो इसके पहिले और पीछे वाले छंदों का है अर्थात् "कहि मान राण राजेश यों छत्रीपन रक्खंत षिति॥"

जोधराज

जोधराज का व्यक्तिगत परिचय बहुत संक्षिप्त रूप से उनके हम्मीर रासो में ही मिलता है और उसकी प्रामाणिकता में संदेह करने का कोई कारण भी नहीं देख पड़ता। इस ग्रंथ के अनुसार जोधराज, पृथ्वीराज के एक वंशधर चंद्रभानु नामक एक राजा (राठपति साह) के आश्रित थे। यह चंद्रभान निंबराणा (नीमराणा) नामक एक गाँव का जागीरदार था। इसने एक बार अपने दरबारी कवि जोधराज से हम्मीर की कथा कहने को कहा था और उसके आज्ञानुसार कवि ने इस काव्य ग्रंथ की रचना की। ग्रंथ के आरंभ में वंदना के बाद कवि ने अपना परिचय दिया है जिससे मालूम हो जाता है कि जोधराज आदि गौड़ कुलोत्पन्न अत्रि गोत्रीय ब्राह्मण थे, और इनके पिता का नाम बालकृष्ण था। ये अपने समय के प्रसिद्ध कवि होने के अतिरिक्त एक अच्छे ज्योतिषी भी थे, और विद्वानों में 'डिंडवरिया राव' के नाम से प्रसिद्ध थे। यह भारतवर्ष के अंतिम हिंदू सम्राट् महाराज पृथ्वीराज कुलोत्पन्न नीमराण के अधीश चन्द्रभानु के आश्रित थे और उन्हीं के कहने से इन्होंने हम्मीर की कथा रची थी। इन के जन्म या मरण-काल का निश्चय करने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। यों हम्मीर रासो की रचना सं० १७८५ में हुई थी, अतः इसके आस-पास जोधराज का कविताकाल माना जा सकता है।

कवि-परिचय

इस कवि का रचा हुआ केवल एक ग्रंथ 'हम्मीर-रासो' मिलता है। यह एक वीररसप्रधान काव्यग्रंथ है और लगभग १,००० छंदों में समाप्त हुआ है। संक्षेप में हम्मीर रासो की कथा इस प्रकार है—

हम्मीर रासो

दिल्ली का बादशाह अलाउद्दीन ख़िलजी एक बार शिकार खेलने

निकला। उसके साथ उसकी ख़ास बेगम रूपविचित्रा भी थी। जिस समय बादशाह अपने साथियों के साथ शिकार की टोह में कुछ दूर निकल गया था, उस समय रूपविचित्रा अपनी सहेलियों के साथ एक सरोवर में जलक्रीड़ा कर रही थी। इस समय बड़े ज़ोर का तूफ़ान उठा। ऐसे ज़ोर की आँधी चली कि सब लोग तितर-बितर हो गए। पानी भी आया। जिसे जिधर सूझा भाग चला। रानी रूपविचित्रा अकेली पड़ गई और भागते-भागते थक कर जंगल में एक पेड़ के नीचे बैठ गई। भीगी हुई तो वह थी ही, ठंडी हवा भी बड़े ज़ोरों से बहने लगी। और वह एक साथ ही सर्दी और भय से विह्वल हो उठी। ठीक इसी समय अलाउद्दीन का प्रधान मुग़ल सरदार मीर महिमा शाह भटकता हुआ उधर आ पहुँचा, और रानी का परिचय पाने पर उसे अपने घोड़े पर बिठा कर शाही ख़ेमें में पहुँचा देने को कहा, पर रानी ने उससे उसी समय अपने साथ भोग-विलास करने की इच्छा प्रगट की। महिमा शाह किसी तरह इस बात पर राज़ी नहीं होता था पर अंत में उसे रानी की प्रबल वासना के सामने सिर झुकाना पड़ा। इसके थोड़ी ही देर बाद वहाँ अकस्मात् एक शेर आ पहुँचा पर महिमा शाह ने आनन-फानन उसे एक ही तीर से मार गिराया। इसके बाद वह रानी को सकुशल खीमे में पहुँचा आया।

इस घटना के कुछ दिन बाद जब रानी रूपविचित्रा के महल में अलाउद्दीन आराम कर रहा था, यकायक एक चूहा निकल पड़ा और उसे देखते ही पहले तो बादशाह सलामत एक दम घबरा उठे; पर अंत में उन्होंने उसे मार ही डाला और इस पर अपनी डींग भी हाँकने लगे। रानी ने इसपर मुस्करा कर कहा कि यह तो क्या, ऐसे भी लोग हैं जो ऐसी ही परिस्थिति में शेर को भी बिना विचलित हुए मार डालते हैं और कभी भी डींग नहीं हाँकते। बादशाह यह सुनकर बड़े आग्रह से उसका नाम जानने का आग्रह करने लगा और रानी ने भी पहले इस बात का बचन लेकर कि उस मनुष्य को किसी प्रकार की हानि न होने पावेगी, अपने और महिमा शाह के संबंध की उस दिन की सारी बातें

जोश में आकर कह डाली। बादशाह यह सुन कर आग बबूला हो गया, और महिमा शाह को बुलवा कर उसी समय सदा के लिए अपने राज्य से निकल जाने की आज्ञा दी।

महिमा शाह बहुत दिनों तक इधर-उधर भटकता फिरा। कोई भी उसे आश्रय देकर अलाउद्दीन से दुश्मनी मोल लेने की हिम्मत नहीं कर सकता था। अंत में वह रन्थंभोर के राजा हम्मीर देव चौहान की शरण में पहुँचा जिन्होंने अलाउद्दीन की तनिक भी परवाह न कर महिमा शाह को अपने यहां आश्रय दिया और आजीवन प्राण देकर भी उसकी रक्षा करने का वचन दिया। अलाउद्दीन ने यह खबर पाते ही हम्मीर को उसी समय महिमा शाह को अपने यहां भेज देने को कहा पर हम्मीर ने इस संबंध में अपनी अटल प्रतिज्ञा की सूचना बादशाह को दे दी। बादशाह ने पहले तो छल बल से महिमा शाह को अपने हाथ में करने की कोशिश की पर अपनी इन चालों को असफल होते देख कर अंत में उसे युद्ध घोषणा करनी पड़ी। कहते हैं कि यह लड़ाई बारह साल तक होती रही और प्रायः सब में शाही फौज को नीचा देखना पड़ा था। बीच-बीच में प्रायः अलाउद्दीन इस आशय का प्रस्ताव हम्मीर के पास भेज दिया करता था कि " हम तुम्हारी बहादुरी और अपनी बात पर अटल रहने पर बहुत खुश हैं और बेहतर होगा कि मीर महिमा को अब तुम हमारे हवाले कर दो और यह व्यर्थ का खून-खराबा बंद कर दिया जाय। " पर ऐसे प्रस्तावों के बड़े कड़े जवाब उधर से मिलते थे। अंतिम युद्ध में जब हम्मीर बादशाह को गहरी हार देकर उसके झंडों को विजय चिह्न की भाँति आगे कर रन्थंभोर को लौट रहा था तो रानियों ने दूर से शत्रु के झंडों को आगे देख कर यह समझा कि शाही फौज सब को परास्त कर किले के अंदर घुसने आ रही है। यह सोचकर सब एक साथ ही चिता बना कर भस्म हो गईं। हम्मीर ने लौटकर जब यह हृदयविदारक दृश्य देखा तो उसे इतना क्षोभ हुआ कि उसने अपनी आत्म-हत्या कर डाली। अंत में यह कहा है कि अलाउद्दीन जब वहाँ

पहुँचा तो राजा के कटे सिर ने उससे कहा कि तुम भी जाकर जल में अपना प्राण दो और उसने ऐसा ही किया भी।

इस काव्य के आरंभ में रन्थंभोर दुर्ग के बनने के संबंध में एक बड़ी रोचक कथा दी गई है। उसका सारांश यह है कि चहुवान क्षत्रियों के आदि-पुरुष जैतराव जी ने एक पद्म ऋषि की आज्ञा से इस रन्थंभोर गढ़ को बनवाया और बन जाने पर पद्म ऋषि ने तप करने के लिए उस गढ़ को राजा से माँग लिया था। कालांतर में जब उन की उग्र तपस्या के प्रभाव से इंद्र का आसन डाँवाँडोल होने लगा तो उसने अप्सराओं को भेज कर पद्म ऋषि का तपोभंग करा दिया और वे कुछ दिन तक विषय-भोग का सुख लूटते रहे। पर अंत में जब उनकी मोह-निद्रा टूटी तो उन्हें ऐसी ग्लानि हुई कि उन्होंने अपना शरीर ही त्याग दिया और उनके सिर से अलाउद्दीन, वक्षस्थल से हम्मीर, दोनों भुजाओं से मीर बंधु महिमा और गबरू शाह, और चरणों से उर्वसी की अवतार रूपविचित्रा बेगम जो कि इस काव्य की नायिका है, उत्पन्न हुई, और अंत में साथ ही सब की मृत्यु भी हुई, और तब सब जाकर स्वर्ग में मिल गए।

जोधराज की कविता बड़ी सरस है। भाषा में व्रजभाषा का पुट अधिक है। इन के शब्द सदा सरल और सुप्रयुक्त होते हैं। कवि को वीर और शृंगार दोनों ही रसों पर अच्छा अधिकार है।

यहाँ हम्मीर रासो से हम्मीर और अलाउद्दीन का युद्धवाला अंश दिया जा रहा है।

हम्मीर और अलाउद्दीन का युद्ध-वर्णन

भुजंगप्रयात छंद

चढ़े बीर कोपे दुहूँ ओर धाये। मानो काल के दूत अद्भुत्त आये॥
इतै राव हम्मीर के बीर छुट्टे। उतै भीर धीरं गहीर सु जुट्टै॥
उड़ी रैन सैनं न दीखंत भानं। दुहूँ ओर घोरं सु बज्जे निसानं॥
छुटै तोप बानं दुहूँ ओर जोरं। धरा अम्मरं बीच मच्चे सु शोरं॥
उठी ज्वाल माला धरा वै उपट्टै। धुवाँ घोर घोरं सुजोरं प्रगट्टै॥

मनो दोय सिंधू तजैं आय वेला । प्रलै काल के काल कीनो समेला ॥
दूहूँ ओर घोरं सुगोलं वरष्षैं । मनो मेघ ओला अतोलं करष्षैं ॥
उड़ै अग्रपब्बय दहैं गढ्ढ कोटं । परै गज्ज बाजं धरा धूरि लोटं ॥
प्रलै पावकं जानि उट्ठी लपट्टैं । बरं उभकरं सूभरं यों भपट्टैं ॥
लगै गोल में गोल गोला सु गज्जै । भए वारपारं उपम्मा सु रज्जै ॥
मनो स्याम कै वास है वारपारं । चहूँ ओर राजंत है चारु वारं ॥
रहे गिद्ध तामें घने वैठि अद्धं । करै ध्यान वैठे गुफा में मुनिद्धं ॥
उड़े साथि गोलान के बीर ऐसैं । मनों फाटिका तै उड़ै नट्ट जैसे ॥
चलैं तोप जोरं करैं सोर भारी । परै बिज्जुरी सी घने एक बारी ॥
छुटै एक बारै घनी चादरं यों । मनो भार भूंजै वनै यों घनै यों ॥
वँदूकैं हज़ारं चलै एमि राजै । मनो मेघ गोला परै भूमि गाजै ॥
चलै बान वेगं मचै सोर भारी । मनो आतसैं बाज खेलंतकारी ॥
छुटैं बान कम्मान ज्यों मेघ धारा । लगैं बाज गज्जं हुवै वार पारा ॥
मनो नाग छौना उड़ैं होड़ मंडी । उसै अंग अंगं करैं सेन खंडी ॥
बहै तोमरं सेल औ सक्ति ऐनं । करै वार पारं वहै उच्च वैनं ॥
बहै खड्ग वेहद्द देखंत सूरं । करै दोय टूकं सडुक्कै समूरं ॥
बहै तेग कंधं परै गज्ज राजं । लगै आयुधं यों डरं सब्ब साजं ॥
कहैं कंगलं अंग आजीन बाजी । तबै सूर रीभै करे माल साजी ॥
कटारी बहै वार पारं निहारै । मनों स्याम उर माँभ कौस्तुभ सम्हारै ॥
कहूँ पंजरं पिंजरं वेगि फारं । मनो हाथ वाला अहारो निकारं ॥
छुरी हत्थ जोरं करै सूर हाँकैं । कहूँ मल्लयुद्धं करैं बीर खाँकैं ॥
परै सीस भूमै उठै रुंड घोरं । दुहूँ सेन देखंत कौतुक्क जोरं ॥
किती अंत उरभंत लटकंत भूमै । किते घायलं घात्र लग्गे सुभूमैं ॥
भरै योगिनी पत्र पीवंत पूरं । परैं ज्यों मलेच्छं वरैं आय हूरं ॥
किलक्कै जो कालो हसैं बार बारं । करैं भैरवं घोर सोरं अपारं ॥
भगी साह की सेन देखंत दोई । कहै वैन कोपं वकं सोस सोई ॥
कितै भागि जैहो अरे मूढ़ आजं । जिते वीर चहुवान हम्मीर गाजं ॥
भम्यो साह संगं तज्यो जंग भारी । कहै साह उज्जीर सो जो हँकारी ॥

दोहरा छंद

कहा राव हम्मीर के, सूर वीर बलवान।
सबै सुखाय हमारिये, जंग समय प्रिय पान॥

छप्पय छंद

कहै साह उज्जीर सुनो। आपन मन लाई॥
जितै राव के वीर। सबै छत्री प्रन पाई॥
लरत भिरत नहिं टरत। करत अद्भुत रस सीतो॥
करत जंग अन भंग। अंग छिन भंग है नीतो॥
नहि सहत सार ओपन सपन। सबै मीर उमराव भर॥
किज्जे सु कौन मत तंत अब। कहो बुद्धि आपन समर॥
कहि उजीर कर जोरि। सुनो हज़रत यह किज्जे॥
च्यारि सेन चतुरंग। संग नामी कर दिज्जे॥
एक सेन दिवान्न। एक बक्सी मड बंके॥
एक गोल मोहि जानि। आप एकन कर हंके॥
यह भाँति सेन चतुरंग के। अनी च्यारि करि जुट्टिये॥
हम्मीर राव चहुवान तें। फते आप लहि हट्टिये॥

दोहरा छंद

करि-करि मंत्र उजीर तब, चढ़े संग ले मीर।
च्यारि अनी करि साहि दल, ज़ुरे जंग सब मीर॥

त्रिभंगी छंद

करि मंत्र असेसं सूर सु देसं। बंके वेसं सज्जायं॥
हय गय चढ़ि वीरं फिरे सु मीरं। धरि-धरि धीरं लज्जायं॥
गजराजन सज्जै अग्गों रज्जै। वीरं गज्जै लखि लज्जै॥
नीसान फरक्कै धीर धरक्कै। हर हर बक्कै गल गज्जै॥
दोउ ओर उमग्गै समर सु रड्डे। बढ़ि-बढ़ि तड्डै नख खड्डै॥
बहु तोपन छुट्टै वीर अहुट्टैं। फिरि फिरि जुट्टै बल चड्डैं॥
बाजे बहु बज्जैं जनु घनु गज्जै। सूर समज्जैं बल रज्जैं॥

पद रुथ्थ पतालं अरि उर सालं। उद्दत भालं रण सज्जैं ॥
छुट्टैं बहु बानं सन्धि कमानं। अरि उरि प्रानं बहु कढ्ढैं ॥
लग्गैं उर सेलं अरि दल पेलं। विग्रह भलं बल ठढ्ढैं ॥
किरवान दुधारं हय गय पारं। सूर सँहारं उर फारं ॥
करि जोर कुठारं बहुत करारं। भिरत जुझारं रन भारं ॥
गिद्धय पल भष्षैं रत बल चष्षैं। जंबू अष्षैं हिय हर्षैं ॥
बहु एत्र भरावैं सिलि मिलि गावैं। धरि धरि धावैं मन भावैं ॥
पल अस्ति चचोरैं बसन निचोरैं। लुथ्थि टटोरैं गुन गावैं ॥

दोहरा छंद

यहि विधि दुहु दल आहुरे। भिरे दोउ दल ऐन ॥
रहे अहल चहुआन हू। खान सकल हठि सैन ॥
अबदल मीर जु साहिके। परे खेत में धाय ॥
पकरै राव हमीर को। पकरै अस पति पाय ॥
ल्याऊँ गहि हम्मीर को। रीझ दिज्जिये मोहिं ॥
जितनो हिन्दू को वतन। पाऊँ अब कर जोहि ॥
बीस सहस अब दल पिले। इत हमीर के बीर ॥
आप आप जै स्वामि की। चाहत मङ्गल धीर ॥

छंद रसावल

नीर पिल्ले तवै, बीर अबदुल जवै। कहै बैन बाहं, सुनो आप साहं ॥
गहूँ राव ल्याऊं, रणत्थंभ पाऊं। कमानस्सुग्रीवं, गरै डरि जीवं ॥
लगूँ साह पग्गै, उठै कोप जग्गै। हजूरं सु बीसं, नमाये सु सीसं ॥
गजं साज तीसं, करै जीव रीसं। उतैं राव कोपे, पिले बीर ओपे ॥
उठी बंक मुच्छं, लगी जाय चच्छं। मनों बीर मग्गै, अकासं सुलग्गै ॥
मिले बीर दोऊ, करें जोर सोऊ। भिरे गज्जि गज्जं, बजे बीर बज्जं ॥
तुरंगं तुरंगं मचै जोर जंगे। पयद्दं पयद्दं बकै कोप वद्दं ॥
भभक्कंत बानं उड़ै, लग्गि त्रानं। लगै तेग सीसं, उभै फाँक दीसं ॥
लगै जम्म दढ्ढं, करै पान गढ्ढं। परी लुत्थि जुत्थं, करी जो अकत्थं ॥

करी जूह लौटें पवै जानि कौटे। तुरंगं धरन्नी, सु लढ्ढै बरन्नी ॥
नचै रुंड वीरं धरंती सरीरं। सिरं हक्क मारै, धरैं अत्र धारैं ॥
उरम्भ़्फंत अंतं, मनो ग्राह तंतं। गहैं अंतचिल्ली, अकासं समिल्ली ॥
मनों बाल मंडी, उड़ावंत गुड्डी। उड़ैं श्रोण छिच्छं फुवारे सु अच्छं ॥
बहैं श्रोण नद्दं, मनों नीर भद्दं। भरैं पग्ग अथ्थं, तरबूज्ज मथ्थं ॥
पलक्की चमच्ची, उठै वीर नच्ची। कियो अट्टहासं, सुकाली प्रकासं ॥
जहां चेत्रपालं, गुहै शंभु मालं। भपै गिद्ध बोटी, फटै तासु फोटी ॥
षटं सहस सूरं, परे जाय हूरं। गजं तीस पारे, पहारं करारे ॥
सतं दोये बाजी, परे खेत साजी। तहाँ पद्म सैनं, रहै देखि नैनं ॥
तबै सेख सीसं, नवाये सरीसं। हमीरं सुरावं, कहै बैन चावं ॥
दुहूं सैन मध्ये, महिम्मा सु बध्ये। कहै उच्च वाचं, सुनो राव साचं ॥
लखो हथ्थ मेरे, बदे बैन टेरे। सुनो साहि बैनं, लखो अप्प नैनं ॥
खरो मैं जुखूनी, रहे क्यों जमूनी। गहो क्यों न अब्बं, कहै बैन तब्बं ॥
यहीं सेस सीसं, रह्यो मैं जु दीसं। करो सत्य बाचं, ततो आप साचं ॥
तबै पातसाहं, खुरासान नाहं। करे कोप पिल्लं, तहां सेख मिल्लं ॥
कहै साह बैनं, सुनो सर्व सैनं। गहै सेख ल्यावै, इतो हश्म पावै ॥
जु बारा हजारं, मनं सब्ब भारं। नोबति निसानं, अरू तेग मानं ॥
सुने बैन ऐसे, खुरासान रैसे। हजारं सतीसं, निवाये सु सीसं ॥
सदक्कीज बानं, पिले सेख पानं। तबै सेख धाये, राव को सीस नाये ॥

दोहरा छंद

करि सल्लाम हमीर को, सेख लई बड़ बग्ग।
दुहूँ सेन देखत नयन, रिस करि कढ्ढे खग्ग ॥

चौपाई छंद

कहे साहि सुनि सद की बैनं। यह कुट्टम को गहो सु ऐनं ॥
जीवत पकरि याहि अब लीजै। मन सब द्वादस सहस करीजै ॥
सद्दकि संग मीर खुरसानी। तीस सहस चढ़ि चले अमानी ॥
गहन सेख महिमा के काज़ै। कुप्पिय मीर खेत चढ़ि बाजै ॥

इतै सुसेख राव पद बंदे। गहै तेग मन माँहि अनंदे ॥
इतै सेख सदंकी उत आए। आप आप जय सद्द सुनाये ॥
कहै सदकि सुनि साह सुजानं। ढठा भप्पर वसि करिये पानं ॥
कहा सेख हम्मीर सु रावं। उठे उद्ध कों करि जिय चावं ॥

छप्पय छंद

जुटे वीर दुहु जंग। अंग अनभंग महाबल ॥
चढ़े जान अम्मान। वढ़े निस्सान बरदल ॥
करि कसान करि पान। कान लो करिखह रष्षे ॥
धरि नराच गुन राखि। धाव करि बेगि बरष्षे ॥
निज संग वीर सत पंच जुत। सेख भेखरौ यह धरिव ॥
उत खुरासान खट सहस लै। सदकी सद हाँकी करिव ॥
तेग वेग बहु कढ़ी। मनो पावक्क लपट्टी ॥
करी बाज रन जुज्ज। कटे सिर पाँव डपट्टी ॥
परै धरनि धर नचै। उदर कटि अंत भभक्कै ॥
चली रक्त धर धार। लुत्थ पर लुत्थ धधक्कै ॥
षट सहस खिसे षुरसान दल। लिय निसान बानै सुवर ॥
किए नजर राव हम्मीर के। फखी फते महिमा समर ॥
आइ सेख सिर नाय। राव कूँ बचन सुनाए ॥
धनि छत्री चहुवान। सरन पन जग जस छाए ॥
तेज राज धन धाम। तात तिय हठ नहिं छंडै ॥
राखि धर्म दृढ़ सत्य। कीर्ति जस जुग जुग मंडै ॥
भरि नीर नैन महिमा कहै। अब जननी कब जन्म दे ॥
जब मिलो राव हम्मीर तुम। बहुरि समैं व्है है कदे ॥
कहै राव हम्मीर। धीर नहिं हीन उचारो ॥
सूर न करैं सनेह। देह छिन भंग विचारो ॥
विछुरन मिलन संजोग। आदि ऐसी चलि आई ॥
ज्यों जीवन ज्यों मरन। सकल बेदन यह गाई ॥
कीजे न भर्म अनभंग चित। मिलैं सूर के लोक सब ॥

हम तुम जु साह बहुरों तिया । ह्वैहिं एक तन तजि सु अब ॥
तज्जिय स्वारथ लोभ । मोह काहू नहि करिये ॥
देह धरे पर वान । स्वामी को कारज सरिये ॥
को इतसौं लै जात । कहा उत सौं लै आयौ ॥
रहै अमर कीरत्ति । पाप नर देह सु गायो ॥
सुनि सेख देखि थिर नाहिं कछु । तन मिट्टी मिलि जाइये ॥
का सोच मरन जीवन तणो । यह लाभ सुजस सौं पाइये ॥
सुनि हमीर के बचन । साह पर सनमुख धाये ॥
मीर गाभरू बीर । आनि तिन सीस नवाये ॥
अलादीन पतिसाह । इते सिर ऊपरि राजै ॥
तुम सिर राव हमीर । स्वामि आपन कुल लाजै ।
नन तजौ नोन की सरत दोउ । यह तन तिल तिल खंडिये ॥
मिलिये जु भिस्त में जाय अब । धर्म न अपनौ छंडिये ॥
हँसि अलावदी साह । शेख कौं बचन सुनाये ॥
दिली छांड़ि करि सीस । बहुरि मुझको नहि नाये ॥
मिलो मुझे तजि रोस । हुरम मैं तुम को दीनी ॥
अर गोरखपुर देश । देहु तुम कौ सत चीन्हीं ॥
मुसकाय साहि महिमा कहै । बचन यादि वे किज्जिये ॥
जननी न जन्म फिर आनि भुव । जबै मिलन गन लिज्जिये ॥

दोहरा छंद

जब जननी जनमै बहुरि । धरूँ देह कहुँ आनि ॥
तऊ न तजौं हमीर सँग । सत्य बचन मम जानि ॥
तब सु राव हम्मीर सुनि । कीनी मदति सु सेख ॥
हजरति महिमा साह को । बात लगावत देखि ॥
कह हमीर यह बचन पर । गही साह सौं तेग ॥
लोभ न करिये जीव को । गहै साह सौं बेग ॥

चौपाई छंद

कहै मीर गभरू ये बातैं। गहै सार नहि करिये घातैं ॥
हुक्म धनी के कौ प्रतिपालौ। आई अदलि सीस पर चालौ ॥
सुनि गभरू के बचन सुभाये। महिमा फूल खेत में आये ॥
सनमुख सार सम्हाय सु बढ्ढै। माया मोह त्यागि खग कढ्ढै ॥

दोहरा छंद

दोऊ बँधु रिसाय कै। लई बाग इम संग ॥
उतरि खेत में मिलि उभै। कीनौं हरष उमंग ॥
मीर गाभरू पाँय परि। हुकुम माँगि करि जोरि ॥
स्वामि काज तन खंडिये। लग्गौ तनक न खोरि ॥

हनूफाल छंद

मिले बंधु दोउ धाय। बहु हरख कीन सुभाय ॥
अब स्वामि धर्म सुधारि। दोउ उठे बीर हँकारि ॥
असमान लग्गिय सीस। मनौं उभै काल सदीस ॥
इत कोप महिमा कीन्ह। हम्मीर नौन सु चीन्ह ॥
उत मीर गभरू आय। मिलि सेख के परि पाँय ॥
कर तेग बेग समाहिं। रहि दुहूँ सेन सचाहि ॥
कम्मान लीन सु हत्थ। जनु सार कार सुपत्थ ॥
धरि स्वामि काज समत्थ। दोउ उभै जुद्ध स पत्थ ॥
दुहुँ द्वंद जुद्ध सुकीन। मनु जुटे मल्ल नवीन ॥
तरवारि बज्जिय ताय। मनु लगी ग्रीषम लाय ॥
कटि चरण सीसरू हत्थ। परि लुत्थ जुत्थ सुतत्थ ॥
घमसान थान सु धीर। धर धरनि खेलत बीर ॥
गंजराज लुट्टत भुम्मि। बहु तुरँग परत सु झुम्मि ॥
बिय वीर बज्जिय सार। तरवारि बरसहु धार ॥
दोऊ भ्रात स्वामि सकाम। जग में किये अति नाम ॥
दोहुँ बीर देखत हूर। चढ़ि गये मुख अति नूर ॥
दल दोय दिप्पत बीर। पहुँचे बिहस्त गहीर ॥

दोहरा छंद

तिल तिल भे अँग दुहुन के । हनै बाजि गजराज ॥
हजरत राव हमीर के । सबै सँवारे काज ॥
मुसलमान हिन्दवान को । चले सेख सिर नाय ॥
चढ़ि विमान दोऊ तहाँ । भिस्तहि पहुँचे जाय ॥

छप्पय छंद

कहै साह मुख वचन । सुनौ हम्मीर महाबल ॥
अब न गहो तुम सार । फिरैं हम सकल दिली दल ॥
तुम्हैं माफ तकसीर । राज रणथंभ करो थिर ॥
हम तुम बीच कुरान । मुहिम नहिं करो दिलीसुर ॥
परगने पाँच दीने अवर । रणत भँवर भुगतो सदा ॥
जब लग सुराज हमरौ रहै । तुम सुराज राजौ तदा ॥

चौपाई छंद

कहै राव हम्मीर सु बानी । सुनि दिल्लीस सत्य जिय जानी ॥
जाकी अदलि होय किमि मिट्टै । नर तैं होनहार किम घट्टै ॥
तुम्हरौ दयो राज किन पायौ । तुम्ह को राज कहो किन ध्यायो ॥
बेर बेर कह मुखै उचारौ । कोटि स्यानपन क्यों न विचारौ ॥
कीरति अमर अमर नहिं कोई । दुर्जोधन दसकंध सुजोई ॥
काको गढ़ काकी यह दिल्ली । हरि की दई हमै तुम मिल्ली ॥
हम तुम अंश एक उपजाये । आदि पदम रिषि अंग उपाये ॥
देव दोय उर धर भये न्यारे । हम हिन्दू तुम यवन हँकारे ॥
तजिये भोग भूमि के सबही । चलिए सुर पुर बसिए अबही ॥
संग हमारो पहुँच्यो जाई । हम तुम रहै सबहिं पहुँचाई ॥
गहो हथियार राज सब छंडौ । राषो जस तन षंडि विहंडौ ॥
अबै चालि सुरपुर सुष मंडौ । मृत्यु लोक के भोग सु छंडौ ॥

छंद त्रोटक

यह बात कही चहुवान तबै । सुनि साह सबै भर पेलि जबै ॥
करि साज सबै रण मंडि महा । तिन भारत पारथ जुद्ध सुहा ॥

दल संग चढ़े सब सूर असी । सब तोप सु बान कमान कसी ॥
गजराज अनेक बनाय धनै । मनौ पावस बद्दल मेघ तनै ॥
हय कंद अमंद सु पौन मनौ । बहु दामनि सार चंमकि भनौ ॥
घन गौर सदायन देखतयं । ध्वज बैरख मंडल लूरतयं ॥
बिरदावत वृंद कविंद घनै । मनौ चत्रक मोर अनंद बनै ॥
बगपंति सुदंति अनंत रजे । धुरवा फिर सुंड छुटे भरजे ॥
बह धार अपार जुधार बहीं । घन घोर सु नौवति नाद वही ॥
कर सोर समोर नकवि चलै । यहि भाँति दोउ दिसि वीर मिलै ॥
करिये हङ्कार सु वीर चलै । ... ...
कहि मीर सिकंदर नेम कियं । सिर नाय सुभाय हुकुम्म लियं ॥
पहलै पुर जाय सु बीर भगं । रणथंभ कहा हजरत्ति अगं ॥
तुम सेर कर्‌यो वह आप जथा । अब देखहु मोर सुहाथ जथा ॥
सु जमीति पदार लई सबही । अरु मीर सिकंदर आय सही ॥
करि कोप सिकंदर मीर चढ़े । तब राव हमीर के भील कढ़े ॥
तब भोज कही अब मोहि कहौ । इतने अब हत्थ हमार लहौ ॥
तब राव कही रणथंभ अगै । दुइ जैत अगै सिर भील तगै ॥
अर जैत सरंति सुराखि तबै । करि कौन करै तुम्हरी जु अबै ॥
तुम संग रतन्न चीतोर गढ़ं । चढ़ि जाउ हमार सुकाज बढ़ं ॥
सुनि भोज इसे कहि बैन तबै । यह सीस तुम्हार निमित्त अबै ॥
रणथंभहि हेत जु सीस दिवै । अब और कहा बिन राव जिवै ॥
यह अवसर फेरि बनै कबही । हजरत्ति हमीर मिले जबही ॥
कहि बत्त इती जु सलाम करी । अपनी सब लीन जमीन खरी ॥
सब भील कसे हथियार जबै । निकसे कढ़ि भोज अमान तबै ॥
कमठा कर तीर सम्हार उठे । उत मीर सिकंदर आय जुटे ॥
बजि घोर निसान प्रमान मिले । दल कोप करे बहु तोप चले ॥
घमसान जुबान कियो तबहीं । दुहु सैन सुऐन बने जबहीं ॥
गजराज हरौल करे बलयं । उत सार अपार कढ़ें दलयं ॥
सजि भालि अनी सुघनी हलकौ । कसि गातिय कोप कियो बलकौ ॥

कमठा कर धार अपार बलं । तब भोज मिल्यो तहँ साह दलं ।।
नट कूदत जानि सुढोल सुरं । बहै तीर अमीर सुजानि छुरं ।।
करि कोप तबै गजदंत कढ़े । मुरि मूरिय धूरि उपारि बढ़े ।।
सब भीलन मत्त सुकोप कियं । जनु भाल वली मुख लंक लियं ।।
जनु मार अपार कटार चलैं । बहु मीर अमीर रु भील मिलैं ।।
हजरत्ति सराहत भोज बलं । जनु मानव रिच्छ भिरत्त दलं ।।
दोउ भोज सिकंदर भील जुटे । सुख बानिय मीर अमीर रटे ।।
जब भोज कहै करिवार तुहीं । कहै मीर सिकंदर बूढ़ तुहीं ।।
अब तो पर वार कहा करिये । सब लोक अलोक महा भरिये ।।
तब भोज़ सकोप कियो रण में । करि कोप कटार दियो तन में ।।
तन कंगल भेदि धरंति पर्‍यो । फिर बान चलाय समीर हर्‍यो ।।
सर भोज पर्‍यो धरनी तिल में । धर धावत रुंड लरै बल में ।।
उत मीर सिकंदर भूमि परे । वह हूर सुदूर सुआनि परे ।।
परि खेत सधार अपार सबै । बिन सीस पराक्रम भोज अबै ।।
भजि साह अनी तजि खेत तबै । परि भोज समाज सबीर सबै ।।
कसमीर अमीर सहस्र पची । सुमिली धरि धार सची सुअची ।।
तहाँ भोज ससाथि हजार भले । बरि बाल सबै सुरलोक चलै ।।

दोहरा छंद

तब हमीर हर ध्यान करि । हर हर हर उच्चारि ।।
गज निज सनमुख पेलिकैं । जुरे साह सों रारि ।।

त्रोटक छंद

गजराज हमीर सु पेलि बरं । मुख तै उचरंत सु भाव हरं ।।
किरवान कढ़ी बलवान हथं । सनमुक्ख सुसाहि सु बोलि जथं ।।
सुनिये सु अलावदि बैन अथं । करि द्वंद्व सु उद्ध सु जुद्ध धयं ।।
सब सेन कहा करिहै सु सुधं । हम आपन इक्क करैं सु ज़ुधं ।।
दुहुँ ओर उछाह अथाह सजे । हजरत्ति सु कोप अकथ्थ रजे ।।
सनमुक्ख हमीर सु आए जुटे । सब सथ्थ जथारथ बेग हटे ।।
तिहिं खेत खरे चहुवान नरं । पति साह सबै दल भंजि भरं ।।

रहि मीर उजरि कछूक तवै। चहुवानन के दल देख जवै॥
पतिसाह कही यह कौन वनी। सब सैन बड़ी चहुवान तनी॥
तब मंत्र वजीर सु एमि कह्यो। तुम मित्र सदा गुन जानि लह्यो॥
अब विग्रह छाड़ि सु संधि करो। चहुवानन सांहित जानि डरो॥
अपराध हमैं सब दूरि करौ। तुम दोहु अभै हम कूच धरौ॥
नृप सो चर जाय कही तबही। सुनि राव चहै सुख बत्त कही॥
अब खेत चडे कछु संधि नहीं। यह बत्त हमारि सुजानि सही॥
रिपु तैं विनती सुइ कातरता। अब बृत्त कहै छल चातुरता॥
अब जाहु यहां हम सेन सजी। बिन साह को जुद्ध करंत लजी॥

त्रोटक छंद

कछु जंत्र न तोपन कंत नहीं। तजि चापन चक्रन बान जिहीं॥
किरवान लई करि बाजि चढ़े। चहुवान अमानि सु खेत चढ़े॥
उत मीर वजीर रु साहि निजं। करि कोप तवै पति साह सजं॥
तरवारि अपार दुधार बहै। सब साहि सु सैन समूह दहै॥
कटि ग्रीव भुजा धर सो विफरे। मनु काटि करे रस कृत्त हरे॥
उड़ि मथ्थ परे धर रुंड उठै। चहुवान धरासह धार उठै॥
सिर मारत हाक परे धर में। धर जुज्झत जुद्ध करै अरमैं॥
कर जोर कटार सु अंग वहैं। बहु खंजर पंजर देह दहैं॥
बहु रंचक मुष्ट कवथ्थ परैं। मल जुद्ध समुद्ध सु वीर करैं॥
पचरङ्ग अनग्गिय खेत बन्यौ। बकसी तब साह सो बैन भन्यो॥
भयभीत सु साह की फौज भगी। घमसान मसान सुज्योति जगी॥
परियो बकसी लखि नैन तवै। उलटो गज कीन सु साह जवै॥
इक संग उजीर न और नरं। फिरि रोकिय साह अनंत भरं॥
चहुवान धरम्म सु जानि कहै। यह भारत साहि सु पाप अहै॥
अंभिषेक ललाट कियो इन कै। महि ईस कहावत है तिनकै॥
धरि अग्र सु साह को पील जवै। जहँ राव हमीर सु लाये पगै॥
अब साहि सु राव कही तबहीं। तुम जाहु दिली न डरो अबहीं॥
लखि साह को लोग मुरक्कि चल्यौ। नृप आप हमीर सु खेत भिल्यौ॥

पद्धरी छंद

भगि साह सेन जुत उलटि आय। तजि विविधि भाँति बाना जु ताहि ॥
सब साह हसम लीनो छिनाय। नृप सकल खेत सोधो कराय ॥
बजि दुंदुभि जय जय धुनि सु आय। सब घायल नृप लीने उठाय ॥
करि अग्ग साह नीसान भुल्लि। लखि भूप हसम कर कह्यो फुल्लि ॥
सब राज लोक तिय जिती जानि। सब सार परस्पर हरी आनि ॥
चहुवान दुग्ग किन्नो प्रवेस। यह सुनिय राव तिय मरन सेस ॥
चहुवान आनि देख्यो सु गेह। शिव वचन यादि कीनो सु येह॥
नृप सकल संग को सीख दीन। राव्व्त राण मंत्री प्रवीन ॥
तुम जाहु जहाँ रतनेस आय। किज्जे न सोच नृपता बनाय ॥
चहुवान राय हम्मीर आय। हर मंदिर मँह प्रविसंत जाय ॥
करि पूजन भव गणपति मनाय। बहु धूप दीप आरति बनाय ॥
हो गिरजा गणपति सु मम देव। तुम जानत हो मम सकल भेव ॥
अपवर्ग देहु तुम नाथ सिद्धि। तन छत्र धर्म्म दीजे प्रसिद्धि ॥
करि ध्यान शंभु निज सीस हथ्थ। नृप तोरि कमल ज्यों किय अकथ्थ॥
यह सुनिय साह निज श्रवण बात। चलि हर मंदिर कों साह आत॥
जलधार नैन लखि राव कर्म्म। कहि साहि मोहि दीनो न मर्म ॥
कछु दियो हमें उपदेश नाहिं। तुम चले आप बैकुंठ माहिं ॥
तुम अभय बाँह दीनी जु शेष। जुग जुग नाम राख्यौ विशेष ॥
अरु महा दानि तुम भये भूप। इच्छा सदान दीने अनूप ॥
जगदेव मोरध्वज तैं विशेष। जस लयो लोक तुम रक्खि सेख॥

दोहरा छंद

साह कहत हम्मीर सों। लेहु मोहि अब संग ॥
धर्म रीति जानो सु तुम। सूर उदार अभंग ॥

पद्धरी छंद

मुसकाय सीस बोल्यो सु बानि। तुम करो साह मम बचन कानि॥
हम तुम सु एक जानो न और। तजि मोह देह त्यागो सु तौर ॥

लीजे सुभ्फाँफ सागर सु जाय । तब मिलै आप अप्पै सु आय।।
यह कहिस सीस सुख मूँदि होत । तब साहि ग्यान हृद भो उदोत।।
उठि साह सीस बंदन सु कीन । करिप्रणाम संभु को ध्यान लीन ।।
हजरत्त आय डेरै सु तव्व । उज्जीर मीर बोले सु सव्व ।।
तुम जाहु सकल दिल्ली सथान । अलवृतहि राज दीजे सु आन ।।
नहिं करो मोर अज्ञाँ सु भंग । सेवक्क धर्म्म यह है अभंग ।।

दोहरा छंद

आयसु पाय सु साह को । चढ़े सकल सजि सैन ।।
महरम खाँ उज्जीर तब । आये दिली सु ऐन ।।
दयौ राज सिर छत्र धरि । अलावृत्त तिहि काल ।।
घर घर अति आनंद जुत । यह विधि प्रजा सुपाल ।।
रणत भँवर के खेत को । कीनो सकल प्रमान ।।
प्रथम हने रणधीर ने । बहुरि सेन परिवान ।।
दोय लक्ख रूमीं परे । दोऊ कुँवर उदार ।।
सेन आरबी की जिती । हनी जु असी हजार ।।
हने मीर द्वै सन सतरि । और सिकंदर साह ।।
अट्ठ लक्ख पंधार के । हने मीर निज आह ।।
सवा सहस गजराज परि । दो लष बाजि प्रसिद्ध ।।
द्वादस लख सेना प्रबल । हनी हमीर सुसिद्ध ।।
मस्तक राव हमीर को किय सुमेर हर आप ।
मुक्ति द्वार सबई खुले बिद्या बर्ष सुथाप ।।

छप्पय छंद

विदा कीन उज्जीर । कूँच दिल्ली को कीनो ।।
तब सुसाह तजि संग । बचन हजरत को लीनो ।।
सेतबंद घर जाय । पूजि रामेश्वर नीकै ।।
परे सिंधु में जाय । करे मन भाते जीके ।।
उर्वसी साह हम्मीर नृप । सेख मीर सब नाक गय ।।
करि लोकपाल आदर अखिल । जय जय जय हम्मीर किय ।।

मिले स्वर्ग में जाय। साह हम्मीर हरष्षे॥
महिमा मीर रुबाल। विबिधि मिलि सुमन बरष्षे॥
जय जय जय हमीर। सकल देवन मुख गाये॥
लोक अमर कीरत्ति। मुक्ति परलोक सुपाये॥
माणिक्क राव चहुवान कुल। दैन खङ्ग दोऊ धरत॥
कहि जोधराज यह वंश में। ननकारो नाहिन करत॥

दोहरा छंद

सुनत राव हम्मीर जस। प्रीति सहित नृप चंद॥
मनसा वाचा कर्मना। हरे जोध के द्वंद्व॥
चन्द्रनाग वसु पंच गिनि। संवत माधव मास॥
शुक्ल सुत्रतिया जीव जुत। ता दिन ग्रंथ प्रकास॥
भूपति नीवागढ़ प्रगट। चंद्रभान चहुवान॥
साम दाम अरु भेद जुत। दंडहि करत खलान॥

—

गोरेलाल (लाल कवि)

गोरेलाल उपनाम 'लाल' कवि ने अपने संबंध में कुछ भी नहीं कहा है। इनके कुल, निवासस्थान आदि के विषय में अभी तक जो कुछ सूचनाएँ मिल सकी हैं, वह सब बाह्य प्रमाणों पर आधारित हैं। इनके जीवन से संबंध रखनेवाली इस प्रकार की सूचनाओं में सबसे अधिक प्रामाणिक बीकानेर-निवासी भट्ट उत्तमलाल गोस्वामी से मिश्रबन्धुओं को प्राप्त हुई है। यह महाशय गोरेलाल के प्रपौत्र के प्रपौत्र अर्थात् सातवें वंशधर है, अतः कवि के संबंध में इनकी बातें माननीय हैं। इनके अनुसार गोरेलाल का जन्म सं० १७१५ के लगभग हुआ था। इनके पूर्वज आंध्र-देश में राज महेंद्री जिले के नृसिंह क्षेत्र धर्मपुरी में रहते थे। यह मुद्गल गोत्रीय भट्ट तैलंग ब्राह्मण थे। इनके कोई पूर्वज भट्ट काशीनाथ थे, जिनकी एक कन्या महाप्रभु वल्लभाचार्य को ब्याही गई थी। भट्ट काशीनाथ के पुत्र जगन्नाथ हुए जिनके छै पुत्र थे और इनको बादशाह बहलोल लोधी ने छै गाँव दिये थे। (प्रत्येक को एक-एक) कालांतर में ये छहो भाई इन गाँवों के नामों से ही प्रसिद्ध हुए, इनके असली नाम लोग भूल गए। इन गाँवों के नाम गिट्टा, लंबुक, जोगिया, तिघरा, गिरधन तथा भरस थे। इनमें श्री गिट्टा के नागनाथ नाम के पुत्र हुए। इन्हीं नागनाथ की दसवीं पीढ़ी में गोरेलाल उपनाम 'लाल' कवि का जन्म हुआ। अभी तक इन गिट्टा आदि छै भाइयों के वंशधर 'छवैया' अर्थात् छ--भैया कहलाते हैं।

कवि का परिचय

प्रसिद्ध दाक्षिणात्य विद्वान् गङ्गाधर शास्त्री तैलंग के पुत्र कृष्ण शास्त्री के 'वल्लभ-दिग्विजय' में दिए हुए अपने परिचय से भी गोरेलाल के वंश विषयक उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है।

वह्क् मौद्गल्य गोत्रे प्रथिततरयशा नागनाथान्वयेभूत् ।
बुंदेलाधीश पूज्यः कविकुलतिलको गोरिलालाख्य भट्टः ॥

शास्त्री गंगाधरस्तत्कुलजनिरभवत् तत्कुले शास्त्रि कृष्णः।
तेनेदं लिख्यते श्री गुरुवरचरितं स्रग्धराणां मतेन ॥

इस श्लोक की प्रथम दो पंक्तियों का सारांश यह है कि मुद्गल गोत्रोत्पन्न यशस्वी नागनाथ के वंश में कविकुल तिलक गोरेलाल भट्ट हुए, जिन्हें बुंदेलखण्ड के अधीश्वर बड़ी पूज्य दृष्टि से देखते थे। यह भी प्रसिद्ध है कि सं० १५३५ में बुन्देलखंड की रानी दुर्गावती ने नागनाथ को दमोह के पास 'सकालि' नाम का कोई गाँव दिया था। तभी से ये तथा इनके वंशधर बुँदेलखंड में आये। इन्हीं नागनाथ के वंश में जैसा कि ऊपर के श्लोक में कहा गया है, गोरेलाल उत्पन्न हुए। महाराज छत्रसाल ने लाल को बढ़ई, पठारा, अभानगंज, सगेरा और दग्धा नाम के पाँच गाँव दिये थे और ये दग्धा में रहने लगे। इनके वंशज आज भी वहाँ मिलते हैं।

इनकी मृत्यु कब हुई इसका कुछ ठीक पता नहीं है। छत्र-प्रकाश में सं० १७६४ तक की घटनाओं का वर्णन मिलता है; इसके पीछे ग्रंथ अपूर्ण जान पड़ता है, और अंतिम अंश पढ़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि ग्रंथ यकायक यहाँ समाप्त हो गया है। महाराज छत्रसाल का स्वर्गवास सं० १७९० में हुआ था। इससे एक यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सं० १७६४ या ६५ के आस-पास गोरेलाल की मृत्यु हो गई होगी या कोई ऐसी बात हो गई होगी जिससे आगे लिखना उनके लिए असम्भव हो गया हो।

लाल के ग्रंथ

लाल के लिखे १० ग्रंथ प्रसिद्ध हैं—(१) छत्र-प्रशस्ति, (२) छत्र-छाया, (३) छत्र-कीर्ति, (४) छत्र-छंद, (५) छत्रसाल-शतक, (६) छत्र-हज़ारा (७) छत्र-दंड, (८) छत्र-प्रकाश, (९) राजविनोद तथा (१०) विष्णु-विलास।

छत्र-प्रकाश के अतिरिक्त 'विष्णु-विलास' और 'राजविनोद' इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। ये सभी ग्रंथ उन्होंने महाराज छत्रसाल के लिए ही बनाये थे। इनके ग्रंथों में से कुछ शृङ्गार और भक्ति अथवा शांतरस-प्रधान भी हैं। राजविनोद में विविध छंदों में व्रजवासी कृष्ण का वर्णन

है और यह ग्रंथ उन्होंने छत्रसाल के मनोरंजन के लिए ही लिखा था। इस ग्रन्थ का कुछ भाग नागरी प्रचारिणी-सभा की प्रथम त्रैमासिक रिपोर्ट में छप चुका है। इनके दूसरे प्रसिद्ध ग्रंथ विष्णु-विलास के संबंध में मिश्र-बंधुओं का कहना है कि उसकी रचना बरवै छंदों में हुई है और उसमें नायिका भेद का वर्णन है और उसकी कविता भी साधारण है, पर यह ग्रंथ हमारे देखने में नहीं आया है।

छत्र-प्रकाश

प्रस्तुत संग्रह में केवल छत्र-प्रकाश से उद्धरण लिये गये हैं। इस ग्रंथ में छत्रसाल का संक्षिप्त जीवन-चरित्र तो है ही, साथ ही बुँदेलखंड के इतिहास के संबंध में भी बहुत-सी घटनाएँ वर्णित हैं, और छत्रसाल के मुख्य-मुख्य पूर्वपुरुषों के विषय में भी कुछ सूचना दे दी गई है।

गोरेलाल की कविता

लाल ने केवल दोहे चौपाइयों में ही कविता की है, और प्रायः डेढ़ सौ पृष्ठों के इस ग्रंथ में किसी भी अन्य छंद का प्रयोग नहीं किया गया है। दोहे-चौपाई में काव्य रचना करने में तुलसी और जायसी के बाद इन्हीं का स्थान है।

भाषा

भाषा इनकी मिश्रित है। दोहा चौपाई में रचना करनेवाले पहले के सभी कवियों ने एक मत से अवधी भाषा का ही प्रयोग किया है पर गोरेलाल की भाषा कुछ पंच मेल सी है। इसमें व्रजभाषा, बुँदेलखंडी और अवधी तीनों का अपूर्व सम्मिश्रण देख पड़ता है। इनकी भाषा में प्रसाद गुण का प्राधान्य है। इनके भावों या शब्दों में दुरूहता कहीं भी नहीं आने पाई है। हिंदी का साधारण ज्ञान रखने वालों को भी इनकी कविता समझने में कुछ विशेष कठिनाई न प्रतीत होगी। इसका यह तात्पर्य न लगाना चाहिए कि इनकी कविता में अर्थगौरव या भावगांभीर्य नहीं है। बात यह है कि इन्होंने अपनी रचना में एक विशेष सीमा तक सरलता और प्रसाद गुण को अक्षुण्ण रखते हुए भी गम्भीर भावों और अर्थों

का समावेश करने की असफल चेष्टा नहीं की है। उदाहरण के लिए दो एक छंद देखियेः—

सुनि बाइस उमराइ उमंडे। थाने छोड़ ओड़छे मंडे।
बिरम्यौ चंपतिराइ बुँदेला। फौजन पर दीन्हों बगमेला॥
जबै कमान कुंडलित कीहीं। कठिन मार तीरनि की दीन्हीं।
तीछन तीर बज्ज से छूटे। बखतर पोस पान से फूटे॥

इत्यादि

इन चौपाइयों में संभवतः कोई भी शब्द ऐसा नहीं है जिसका अर्थ देखते ही समझ में न आ जाय पर साथ ही इसकी उक्ति में अनूठापन भी है। अब 'बगमेला' शब्द को ही लीजिये। 'मेल' देना बुँदेलखंडी में छोड़ देने, डाल देने, या मिला देने को कहते हैं और 'बाग़' कहते हैं लगाम को। इस तरह फ़ौजों पर बगमेला किया का अर्थ यह हुआ कि घोड़ों को सरपट छोड़ कर शाही फ़ौज पर भीषण आक्रमण किया। क्या इस उक्ति में चमत्कार नहीं है? इसी प्रकार अंतिम पंक्ति में—'बखतर पोस पान से फूटे' में कितनी सुखद भावना है। महोबे के पुराने पान में किसी नुकीली चीज़ से खाँचा मारने पर आप देखेंगे कि उसके रेशे-रेशे छितरा जायँगे। उसी तरह यहाँ कवि का तात्पर्य है कि बज्र की भाँति कठोर बाणों के आघात से बख्तर-पोशों के बख्तर जोड़-जोड़ से अलग हो जाते थे। इससे बाणों के वेग से छूटने और उनके बहुत तीक्ष्ण होने की ध्वनि भी निकलती है। अलंकारों के फेर में गोरे लाल कभी नहीं पड़ते थे। अर्थालंकारों में कभी-कभी उपमा, उत्प्रेक्षा या रूपक आदि के उदाहरण मिल जाते हैं पर उन्हें देखने से यह भी ज्ञात हो जाता है कि कवि ने उनको लाने के लिए जान बूझ कर कोई चेष्टा नहीं की थी। शब्दालंकारों के विषय में भी यही कहा जा सकता है। कहीं-कहीं अनुप्रासों की छटा देखने में आ जाती है पर ऐसा जान पड़ता है कि वे स्वाभाविक रूप से ही आ गए हैं, कवि ने इनको लाने के लिये कोई प्रयत्न नहीं किया और पद्माकर की भाँति अनुप्रास या नाद-साम्य या शाब्दिक इंद्रजाल को कविता का प्रधान सौंदर्य मान कर भाव

या अर्थ की अवहेलना करने की बात तो कदाचित् उन्होंने स्वप्न में भी न सोची होगी।

इनका ग्रंथ छत्र-प्रकाश वीररसप्रधान है, और इस रस के लेखक अन्य कवियों में यह प्रधान प्रवृति साधारण रूप से देखने में आती है कि वे इसके उद्रेक करने में प्रायः नाद से अधिक सहायता लेते हैं। टकार, डकार, रेफ आदि लोमहर्षण वर्णों से श्लिष्ट संयुक्ताक्षर पूर्ण शब्दों से युक्त वाक्यों के प्रयोग से ही वीर रस का उद्रेक संभव है, ऐसा उनका विश्वास-सा प्रतीत होता है। पर लाल इस विचार के कवियों में अपवाद स्वरूप कहे जा सकते हैं। इन्होंने इस प्रकार के शब्दों से कहीं भी सहायता नहीं ली है। दूसरे शब्दों में, 'भड़ाभड़', 'धड़ाधड़', 'विघट्ट घट्ट सुघट्ट' ऐसे बीहड़ शब्दों से वीर, भयानक, या रौद्र रस का संचार करने की कुचेष्टा इन्होंने कभी नहीं की। पर तब भी इन रसों का समावेश इनकी कविता में हुआ ही है, और सो भी बहुतों से उत्तम। बस, यही गोरे लाल की कला की विशेषता है।

वर्णन की सजीवता की दृष्टि से भी लाल कवि एक विशेष स्थान रखते हैं। इसका मुख्य कारण यह तो है ही कि यह युद्धस्थल में स्वयं उपस्थित रहते थे क्योंकि यह कवि होने के साथ ही साथ योद्धा भी थे और इसलिए वर्णन कपोल-कल्पित नहीं बरन् आँखों देखी घटनाओं के होते थे, फिर उनमें सजीवता क्यों न आवे ? इसके अतिरिक्त इनकी कविता वाह्याडंबर और कृत्रिमता से शून्य रहती है और इसी से स्वाभाविकता का परिमाण इनकी कविता में बहुत अधिक होता है। आधुनिक समालोचक को कविता में वाह्याडंबरों, शब्दालंकारों तथा ऐसी ही अन्य बनावटीपन के गुणों से अरुचि या चिढ़ हो गई है और सभी बातों में उसे स्वाभाविकता और सरलता से नैसर्गिक प्रेम सा हो गया है। ऐसा होना उचित भी है। इस दृष्टि से गोरे लाल की कविता आधुनिक समालोचना की कसौटी पर बहुत कुछ खरी उतरती है, कम से कम इसी श्रेणी के अन्य ग्रंथों से कहीं अधिक खरी।

'लाल' कवि रचित

छत्र-प्रकाश (पाँचवाँ अध्याय)

छंद

एक जीभ हौं कहा गनाऊँ। कछू कथा संक्षेप सुनाऊँ ॥
एक समै दिल्लीपति कोप्यौ। पग न जुझार सिंह नै रोप्यौ ॥
अरब खरब लौं हुते खजाने। सो न जानियै कहाँ बिलानै ॥
साठि हजार सुभट दल फूट्यौ। कोऊ कहूँ न मारिउ छूट्यो ॥
साहि जहान देश सब लीनौ। कियौ बुँदेलखंड बलहीनौ ॥

दोहा

हीनौ देखि बुँदेल बल, दीन प्रजन के काज।
चंपत राइ सुजान मिलि, कियौ मंत्र तिहि राज ॥

छंद

कछू कालगति जानि न जाई। सब तैं कठिन कालगति गाई ॥
रीति भरी भरे ढरकावै। जो मनु करै तो फेर भरावै ॥
कीजै कहा नृपति नहिं बूझै। काल ख्याल काहू नहिं सूझै ॥
साठि हजार सुभट लै भागे। काहू के न जगाये जागे ॥
फिरै मुल्क में मुगल गदेले। सिंहन की सुथरी गज खेले ॥
जाकौ बैरी करै बचाई। सो काहे कौ जनम्यौ भाई ॥
अब उठि कै यह मंत्र विचारो। मुलकु उजार लक्ष संहारो ॥
ज्ञान गनंता पौरुष हारे। सो जीते जो पहिले मारे ॥

दोहा

यहै मंत्र ठहराइ कै, उमड़े दोऊ बीर ॥
दीनों मुलकु उजारि कै, ऐसे अति रनधीर ॥

छंद

लाये मुलक उठाये थाने। सुनि सुनि साहि बहुत मुरझाने ॥
नौसेरी सूबा पहिरायौ। पीठल गौर सहाइक आयौ ॥

सुनि आइस उमराइ उमंडे । थाने छोड़ ओंछड़े मंडे ॥
विरझ्यौ चंपतिराइ बुँदेला । फौजन पर कीन्हौ बगमेला ॥
जबै कमान कुँडलित कीन्ही । कठिन मार तीरन की दीन्ही ॥
तीछन तीर बज्ज से छूटे । बखतरपोस पान से फूटें ॥
फौज फारि चंपति रन जीत्यौ । अरिपर प्रलय काल सम बीत्यौ ॥
मोर गौर की फौज हराई । मुगल सँहारि करी मन भाई ॥

दोहा

मार्‌यौ ठिल सहिबाजखाँ, दियौ ओंड़छौ वारि ॥
फते फतेखाँ सो लई, बाकी खान संहारि ॥

छंद

मारि लूट सब फौज हराई । सूबा दिल में दहसत खाई ॥
चहुँ ओर तैं सूबा घेरौ । दिसनि अलात चक्र सौ फेरौ ॥
जरी सिरौंज भेलसा भाग्यौ । धर उज्जेन धरधरा लाग्यौ ॥
ह्वाँ तै धमकि धमौनी मारी । गोपाचल में खलभल पारी ॥
सकल मुलक नहिं जात गनाये । चामिल तै रेवा लौं लाये ॥
पजरे सहर साहि के बाँके । धूम धूम में दिन कर ढाँके ॥
सब उमराइन चौथ चुकाई । ओड़ै कौ चंपत की धाई ॥
लिखी खबर बाकिन ठिठकाई । पातशाह कौ बाँच सुनाई ॥

दोहा

चंपति के परताप तै, पानिप गयौ ससाइ ।
पौसेरी भरि रहि गयौ, नौसेरी उमराइ ॥

छंद

सुनत साहि फिरि भेजी फौजें । उमड़ी दरिया कै सी मौजें ॥
खान जहाँ सूबा चढ़ि आयौ । त्योंही सैदमहम्मद धायौ ॥
बली बहादुरखान हँकायौ । अरु अब्दुल्लहखाँ पग धायौ ॥
और संग उमराइ घनेरे । आये उमड़ि काल के पेरे ॥
डंका आइ देश में कीनो । मुगल पठान ज़ुद्ध रस भीनो ॥
छाइ छाइ रबिमंडल लीन्हौं । नौसेरीखाँ कौं बल दीन्हौं ॥

बल कौं पाइ मुगल दल गाजे । पिले बजाइ जुद्ध के बाजे ॥
बड़ी फौज लखि चंपति फूले । श्रीपति सगुन भये अनुकूले ॥

दोहा

सगुन भये अनुकूल सब , फूले चंपतिराइ ।
अति अद्भुति बिक्रम रच्यो , कासों बरनौ जाइ ।

छंद

कबहूँ प्रगटि जुद्ध में हाँके । मुगलन मारि पुहुमि तल ढाके ॥
बानानि बरषि गयंदनि फोरे । तुरकनि तमकि तेग तर तोरे ॥
कबहूँ जुरे फौज सौं आछे । लेइ लगाइ चालु दे पाछे ॥
बाँके ठौर ठौर रन मंडे । हाहा करे डाडु लै छण्डै ॥
कबहूँ उमड़ि अचानक आवै । घन से उमड़ि लोह बरषावै ॥
कबहूँ हाँकि हरौलनि कूटै । कबहूँ चाँपि चदालनि लूटै ॥
कबहूँ देस दौरि कैं लावै । रसद कहूँ की कढ़न न पावै ॥
चौकी कहै कहाँ है जैहौं । जिन देखौं तति चंपति है हौं ॥

दोहा

चौंकि चौंकि चौकी उठौ , दौकि दौकि उमराइ ॥
फाके लसकर में परे ' थाके सबै उपाइ ॥

छंद

जब उपाइ सूबनि के थाके । सुनि सुनि साहि सबनि की ताके ।
अब कीजै कैसो मनसूबा । हैं हैरान सीगरे सूबा ॥
तब मंत्रिन मिलि मंत्र विचार्यौ । चंपति डर नहिंये सब हार्यौ ॥
जो अनेक जुद्धन कौं जीतै । सौ फल पावै जो चित चीतै ॥
तासौं भूल विरोध न कीजै । जो कीजै तौ तन धन छीजै ॥
चंपति कै चित की हम जानैं । औरन बैठ न पावै थानै ॥
राज ओंड़छे कौ सुनि लीजै । प्रबल पहारसिंह को दीजै ॥

दोहा

पायौ राज पहार नृप , चली चाह सब ठाइ ।
गई भूमि भुजदंड बल , फेरी चंपतिराइ ॥

छंद

गई भूमि चंपति फिर फेरी। मेटी फिकिर दाहिनी डेरी॥
नगर ओंड़छे बजी बधाई। भई देस के मन की भाई॥
मेड बुँदेलखंड की राखी। रही मेड अपनी अभिलाषी॥
नृपति पहारसिंह सुख पायौ। चंपतिराय मिलनि कौ आयौ॥
तब नृप कलस पाँवड़े कीनौ। आदर करि आगैसर लीनै॥
भुजा पसारि मिले छबि छाये। उमगि अंगननि गंडल गाये॥
मुकताहलन अतुल भुज पूजे। चंपति के सबही जस कूजे॥
धन चंपति फिरि भूमि बहोरी। भुजन पातसाही झकझोरी॥

दोहा

प्रलय पयोधि उमंड में, ज्यों गोकुल जदुराइ।
त्यौं बूड़त बुँदेल कुल, राख्यौ चंपतिराइ॥

छंद

राज पहारसिंह को राख्यौ। उन उर दोष धर्‌यौ गुन नाख्यौ॥
सब जग चंपत के जस गावै। सुनि सुनि अनख भूप उर आवै॥
बढ़ी ईरषा उर में ऐसी। कथा भीम दुरजोधन कै सी॥
उर में छई कपट कुटलाई। करन लगे अपनी मन भाई॥
नृप मन में यह मन्त्र बिचार्‌यौ। इन चंपति अरि कौ दल झार्‌यौ॥
इनकौ मन तबही ते बाढ्यौ। त्यौंही सुजसु जगत मुख काढ्यौ॥
अब जौ लौं इनके जस फैले। तब लौं बदन हमारे मैले॥
अरु जौ कहूँ फिसाद उठावै। तौ हम पै दिल्लीस रुठावै॥

दोहा

तातैं जौ चढ़ि मारियौ, तौ अपजसु बिस्तारु॥
न्यौति गुपित कछु दीजियै, यहै मंत्र है सारु॥

छंद

सार मन्त्र ऐसौ ठहरायौ। पाप पहारसिंह उर आयौ॥
बिसर गई जो करी निकाई। उगल्यौ गरल दूध की थाई॥

एक समय न्यौते सब भाई । आदर सौं ज्यौंनार बनाई ॥
उमग भरे सब बंधु बुलाये । चंपतिराय सहित सब आये ॥
जथा उचित हित सौं बैठारे । परसन लगे विसद पनवारे ॥
तहाँ भूप जे कुल के माने । ते हित में काहू नहि जाने ॥
पनवारी चंपति को आनौ । देखि सुवा सारो किररानौ ॥
लोचन मूँदि चकोर डेराने । जानि गये जे चतुर सयाने ॥

दोहा

जानन हारे जानियौ, भोजन के आरंभ ।
भिम बुंदेला कौं भयौ, प्रगट भूप कौ दंभ ॥

छंद

भिम दंभ भूपति को जान्यौ । अपनौ प्रान त्याग उर आन्यौ ॥
चंपति कौ पनवारौ लीनौं । अपनौ बदल चंपतिह दीनौं ॥
भोजन करि डेरन को आये । गुपति मंत्र काहू न जनाये ॥
लगी भिम कौं अतुल दिनाई । तुरत ही मीच समै बिन आई ॥
भिम लोक आनँद में पायौ । बंधु हेतु निज प्रान गँवायौ ॥
गुपित हती नृप की कुटिलाई । प्रगट भिम की मीच बताई ॥
कोऊ करौ किती चतुराई । पाप रीत नहिं छिपै छिपाई ॥
जो विधि रची होत है सोई । जस अपजसै लेहु किनि कोई ॥

दोहा

यह उपाइ निरफल भयौ, नृप पहिराई चोर ॥
चटक चपट पट में चढै, दयै वीर पर बोर ॥

छंद

नृपति पहार चोर पहिराये । चंपति के मारन कौं आए ॥
जबही रैन अँधेरी आई । चले करन तसकर मन भाई ॥
स्याम रंग कुलही सिर दीन्हे । स्याम रंग कछनी कछ लीन्हे ॥
वाढ़ि धरै बगुदा कटि बाँधे । स्याम कमान स्याम सर साँधे ॥
होत न आहट मौ पग धारे । बिन घंटन ज्यौं गज मतवारे ॥
स्याम रंग तन माँह समाने । चौकीदारन जान न जाने ॥

चोर पैठि महलन में आये । तहां व्यौंत हैं बने बनाये ॥
और भौन में दीपक दीन्हौं । निज घर को चंपति घर कीन्हौं ॥

दोहा

और दीप परगास में, लख्यौ छांह तें चोर ।
तानि कनपटी में हन्यौ, कढ्यौ बान उहि ओर ॥

छंद

गिर्‌यो चोर चंपति को मार्‌यौ । औरनि लियो उठाइ निहार्‌यौ ॥
चले चोर सब लोग जगाये । सोरसार करि दूर भगाये ॥
सदा प्रबुद्ध बुद्ध है जाकी । तासौं कैसे चलै कजाकी ॥
यह सुनिकै चंपति की माता । दानविधान ज्ञान गुन ज्ञाता ॥
निकट आपने पुत्र बुलाये । सुखद मंत्र के बचन सुनाये ॥
तुम कीन्ही नृप को हित ऐंडे । अब नृप पर्‌यौ तुम्हारे पैंडे ॥
तातें अब यह मंत्र विचारो । दिल्लीपति मिलबो अखत्यारो ॥
मिलै दिलीस बहुत सुख पैहै । मन मान्यौ मनसब कर दैहै ॥

दोहा

ऐसे मंत्र विचारिकै, पठयौ दिली उकील ।
सुनत साहि उमग्यौ हियो, कब देखौं वह डील ॥

छंद

सुनत साहि चंपति चित चाहे । देखन के उर लगे उमाहे ॥
पहुँच्यौ चंपतिराइ बुँदेला । मानी साहि धन्य वह बेला ॥
दै मन सब खंधार पठाये । दारा की ताबीन लगाये ॥
गढ़ खंधार जाइ कै घेर्‌यौ । मुलकिन हुकुम साहिकौ फेर्‌यौ ॥
जब उमराइ घेरि गढ़ लागे । चंपति राइ युद्ध रस पागे ॥
गढ़ के निकट मोरचा रोपे । सब उमराइन के जस लोपे ॥
ढिकल करी सबतैं अधिकाई । ओड़िन गुरु गोलिन की धाई ॥
डाले हलनि हलाइ गढ़ोई । अरि के हिय की हिम्मत खोई ॥

दोहा

दारा गढ़ खंदार की, पाई फतै अचूक।
चपति की हिम्मत लखे, उठी हिये में हूक॥

छंद

चंपति की हिम्मत उर आनै। रीझ ठौर दारा अनखानै॥
फते पाइ दिल्ली फिरि आये। मुजरा करिकै साहि मिलाये॥
सिह पहार अनषू उर आनै। ठान प्रपंचनि के उर ठानै॥
चारी करै आप चहुँ फेरा। खोज डारि चंपति के डेरा॥
खोज पाइ जग इन्हैं लगावै। निरनौ देत अनुप उर आवै॥
यहि विधि डौर भेद के डारै। चतुरन हूँ नहिं परत निहारै॥
कपट प्रपंच जो है करि आवै। झूठि ठौरि ते साँच बतावै॥
लिखै चितेर्यौ ज्यों जल बीची। सम कागद में ऊँची नीची॥

दोहा

दुहू ओर अंतर पर्यौ, क्रम ही क्रम यह रीति।
हियै अनषु उनकै बढ्यौ, इनके धरी प्रतीति॥

छंद

दुहूँ ओर अंतर जब जान्यौ। पिसुन प्रवेस तबै उर आन्यौ॥
भूप कह्यौ दारा सौं ऐसे। सुनौ भाग चंपति को जैसे॥
तीन लाख की कौंच सुहाई। दई साहि इनकौ मन भाई॥
हाल जमा नौ लाख गनाई। बिना तफावत अबलौं खाई॥
तातैं कौंच हमें जो दीजै। तौ नौ लाख रूपैया लीजै॥
यह सुनि कै दारा सुख पायौ। पहिलौ अनषु हिये चढ़ि आयौ॥
जहाँ न गुन की बूझ बड़ाई। चुगली सुनै चित्त दै साँई॥
रीझ ठौर प्रभु खीज जनावै। तहाँ कौन गुन गुनी चलावै॥

दोहा

रीझ फूलि खंडन करै, डारि खीझ कै डौर।
ऐसो स्वामी सेइये, ताते दुःख न और॥

छंद

दारा साहि लोभ उर आन्यौ । सेवा को सिगरो फल मान्यौ ॥
चंपति को यह बात सुनाई । तू जागीर तीगुनो पाई ॥
कौंच पहारसिंह मन भाई । देता हौं मेरे मन आई ॥
तीन हुकुम दारा जो बोले । चंपतिराइ बचन त्यौं खोले ॥
कौंच जाइ चंडालनि दीजै । वृथा हमारो छोर न छीजै ॥
यह सुनि कै दारा अनखान्यौ । अरुन रंग आनन में आन्यौ ॥
चंपतिराइ समर उर ठान्यौ । दिग्गज से दोऊ ऐड़ान्यौ ॥
दिगपालन को दहसत बाढ़ी । मजलिस रही चित्रज्यौं काढ़ी ॥

दोहा

दिगपालन दहसत बढ़ी, कठिन देखि वह काल ।
तुरत आनि आड़ाभयौ, हाड़ा श्री छत्रसाल ॥

छंद

हाड़ा चंपति के ढिग आयौ । दारा कौ न भयो मन भायौ ॥
दारा अंदर को पग धारे । चपति के इत बजे नगारे ॥
डंका प्रगट बिसर के बाजे । चंपति राइ देश में गाजे ॥
छोड़ि पातसाहन की सेवा । कियो अलंकृत आइ महेवा ॥
पुत्र कलत्र मित्र सब भेटे । दिल के दुःख सबन के मेटे ॥
चहूँ चक्र फौजें फरमाई । अरि की बदन जोति मैलाई ॥
धनिकनि गढ़ि धरि रहे लुकाई । सूबन सौं हठि चौथ चुकाई ॥
दै हयवृन्द कबिन्दन गाजै । निर्मल सुजस जगत छबि छाजै ॥

दोहा

फैले चंपतिराइ के, जग में सुजस बिलंद ।
उदै भये तिहुँ लोक जनु, कैयक कोटिन चंद ॥

छंद

तिहूँ लोक चंपति जसु जाग्यौ । सुनिसुनि को न हिये अनुराग्यौ ॥
नृपति पहार करी जे घातैं । ते प्रगटी कहिबे कौ बातैं ॥

जग में करो जे न कृतु मानै । नीकी करी लटी उर आनै ॥
तिनके थल जे बनै बनाये । नृपति पहारसिंह ते पाये ॥
सदा न जग में जीवै कोई । जस अपजस कहिबे कौ होई ॥
जग जबतै अपजस जस छावै । क्रम तै अध ऊरधि गति पावै ॥
खोदे कुआँ पघारे खालै । महल उठावै ऊचै चालै ॥
इहि विधि करमन की गति गाई । वेद पुरानन सुनी सुनाई ॥

दोहा

जैसी मति उपजै हिये, तैसे मनु ठहराइ ।
होनहार जैसी कछू, तैसी मिले सहाइ ॥

छठाँ अध्याय

छंद

एक और अब सुनो कहानी । होनहार गति जान न जाई ॥
साहिजहां दिल्लीपति गायौ । जाकौ हुकुम चहूँ दिसि छायौ ॥
चारि पुत्र ताके मरदानै । दारासाह साहि मन मानै ॥
और मुरादसाह अरु सूजा । औरँगसाह समान न दूजा ॥
बत्तिस बरस साह मन भीनै । भोग पातसाही के कीनै ॥
जबै अवस्था उतरन लागी । पुत्र प्रीत मन में अनुरागी ॥
साहिजहाँ एक चित्त बिचारी । दारा कौ दीन्हीं सिरदारी ॥
दारा अपनौ हुकुम चलायौ । सब भाइन कौ हियौ हलायौ ॥

दोहा

हुकुमनु कै दिल्लीस कौ, भई और को और ।
उमड़ि साहजादिन किये, तखत लैन के डौर ॥

छंद

ब्यौत बिमल बुद्धिन के डारे । लखत लेन के चित्त बिचारे ॥
साह मुराद हियौ हुलसायौ । गज सिक्का चलिबौ फरमायौ ॥
औरँगसाह चाहि सुनि लीनी । बिलसाई बर बुद्धि प्रबीनी ॥
इच्छा प्रगट तखत की छाँड़ी । प्रीत मुरादसाह सौं माँडी ॥

चित्त दै हित के लिखे लिखाये। अति प्रबीन उमराइ पठाये ॥
कह्यौ मुरादसाह सौं ऐसौ। सरस बिचार मंत्र है जैसौ ॥
बिन ही दिली तखत लै वैसे। आन चलै गज सिक्का कैसे ॥
पेल वखत पर वैठे जोई। दिल्ली पातसाह सो होई ॥

दोहा

हमैं न इच्छा तखत की, यह जानै सब कोइ।
चलो तुम्हैं लै देहिंगे, होनी होइ सो होइ ॥

छंद

औरँगसाह मंत्र तब कीनौ। साह मुराद हियै धरि लीनौ ॥
डिढ़ ठहराव यहै ठहरायौ। बाढ़ी प्रीति कुरान उठायौ ॥
दच्छिन तैं उमड़े दोउ भाई। ठिले दीह दल पहुमि हलाई ॥
पूरब तैं सूजा दल साजे। प्रगट जुद्ध कै धौंसा बाजे ॥
दारा घाट धौरुपुर बाँध्यौ। रौपि अराबे कलहै काँध्यौ ॥
सूबन के दिल दहसत ऐसी। अवधौं दई करत है कैसी ॥
हलचल मची चहूँ दिस ऐसी। खलभल प्रलय काल की जैसी ॥
प्रगटी चाह सीढरा ढरक्यौ। चंपति कौ दच्छिन भुज फरक्यौ ॥

दोहा

फरक्यौ चंपतिराइ कौ, दच्छिन भुज अनुकूल।
बड़ी फौज उमड़ी सुनी, भई जुद्ध की फूल ॥

छंद

बड़ी फूल चंपति सुख पायौ। औरँग उमड़ि अवंती आयौ ॥
सिंह मुकुंद हतौ तहँ हाड़ा। दल कौ भयो ऐंड़ घर आड़ा ॥
उमग्यौ औरँग कौ दल गाढ़ौ। हाड़ा भयौ समर में ठाढ़ौ ॥
बिकट सार समसेरन माची। बाजत मारु कालिका नाची ॥
हाड़ा हरषि बिमानन बैठ्यौ। तब औरंग अवंती पैठ्यौ ॥
नौरँगसाह तखत कौ उमड़्यौ। दारा जहाँ मेघ सौ घुमड़्यौ ॥
सुनी खबर दारा अति कोप्यौ। चामिल घाट अरावौ रोप्यौ ॥
फिकिर बढ़ी सब कै दिल ऐसी। अवधौं दई होति है कैसी ॥

दोहा

कैसी धौं अब होति है, कीजै कौन बिचार।
उड़ैं अराबे में सबै, भयौ सुभट संहार ॥

छंद

तब औरंग सबनि तन ताके। बल बौसाउ सबन के थाके ॥
चक्रत चित्त चारहुँ दिस दौरे। कछु न बुद्धि काहू की औरे ॥
तब औरंग मतौ यह कीनौ। बिमल चित्त में चंपति दीनौ ॥
हिति सौं लिखि फरमान पढ़ायौ। चंपतिराइ सुनत सुख पायौ ॥
उमग भरे दल साज उमंडे। नरवर ढिग नौरँग जहँ मंडे ॥
तहँ अलगारन धाइ पहूँचे। देखे दल के झंडा ऊँचे ॥
चहुँ दिसि सोर कटक में छायौ। चंपतिराइ बुंदेला आयौ ॥
सुनि औरँग उर उमँग बढ़ाई। मनौ फते दिल्ली की पाई ॥

दोहा

आनन औरँगसाह कौ, चढ़यौ चौगुनो चाव।
ल्यावो चंपतिराइ कौं, हम सौं मिलै सिताब ॥

छंद

धावत एक सहस जन धाये। चंपति कौं हित बचन सुनाये ॥
नौरँगसाह तुम्हें चित चाहै। सबै तुम्हारे भाग सराहै ॥
तातैं अब बड़ बिलम न कीजै। चलि दिलीस कौं दरसन दीजै ॥
तौलगि नौरँगसाह पठायौ। तुरत बहादुरखाँ चलि आयौ ॥
कह्यौ आइ चंपति सौं भाई। तुम इतनी क्यौं बिलम लगाई ॥
अब यह समै विलम कौ नाहीं। भई तिहारे चित की चाही ॥
अब यह हाजिर है असवारी। चढ़ो पालकी करौ तयारी ॥
चढ़ि पालकी पयानौ कीन्हौ। दरस प्रसन्न साह कौ लीन्हौ

दोहा

मुजरा करि ऊभौ भयौ, पंचम चंपति राइ ॥
लखि आँखिन औरंग की, आनंद झलक्यौ आइ ॥

छंद

औरँग अति आदर सौं बोले । मिलतहिं बचन मंत्र के खोले ॥
दारा उमड़ि युद्ध कौ आयौ । कटक अडोल धौरपुर छायौ ॥
बिकट अराबौ सनमुख दीनौ । चामिल घाट बांधि उन लीनौ ॥
छुटे समुद्र सूखै चहूँ धाकै । उड़े मेरु मंदर से बांके ॥
जौ समसेरन होइ लराई । ओड़ैं सुभट सुभट की घाई ॥
उमगे सूर साह के बाजे । ठेलै कौन प्रलय की गाजै ॥
चामिल पार कौन बिधि हूजै । जैसे मन की इच्छा पूजै ॥
आइ भयौ समयौ यह ऐसौ । चंपतिराइ कीजियै कैसौ ॥

दोहा

कैसौ अब कीजौ कहो, पंचम चंपतिराइ ।
अब आदर औरंग कौ, थक्यौ चौगुनौ चाइ ॥

छंद

बोल्यौ चंपतिराइ बुंदेला । और घाट ह्वै कीजै हेला ॥
जौ दारा उत आड़ौ आवैं । तौ रन हमसौं बिजै न पावै ॥
सुनि औरँग अचरज उर आन्यौ । और घाट चंपति तुम जान्यौ ॥
चंपति कही घाट हम जानै । तखत काज तुम करौ पयानै ॥
सुनि औरंग तखत रस भीनै । चौदह लाख खरच कौ दीनै ॥
कीनौ कूच राति उठि जागै । चंपति भयौ सबन के आगै ॥
उमड़ि चलै दारा के सोहैं । चढ़ी उदंड जुद्ध रस भौहें ॥
चामिल उतरि सुभट गन गाजै । पार जाइ संधानै बाजै ॥

दोहा

चंपति मुख औरंग के, भली चढ़ाई ओप ।
नातर उड़ि जाते सबै, छुटै तोप पर तोप ॥

छंद

चामिल पार भई सब फौजैं । तब नौरँग मन मानी मौजैं ॥
दारा साह खबर यह पाई । चामिल पार फौज सब आई ॥

आगे चंपतिराइ बुंदेला । ह्वै हरौल कीन्हौ बगमेला ॥
चामिल पार भये सब आछे । तजै अडोल अरावे पाछे ॥
दारा के दिल दहसत बाढ़ी । चूमन लगे सबनि कै डाढ़ी ॥
को भुजदंड समर में ढोकै । उमड़्यौ प्रलै सिंधु कौ रोकै ॥
छत्रसाल हाड़ा तहँ आयौ । अरुन रंग आननि छबि छायौ ॥
भयौ हरौल बजाइ नगारौ । सार धार कौ पैरन हारौ ॥

दोहा

ह्वै हरोल हाड़ा चल्यौ , पैरनि साहसमुद्र ।
दारा अरु औरँग मड़े , मनो त्रिपुर अरु रुद्र ॥

छंद

दारा अरु औरंग उमंडे । मनों प्रलै घन घोर घमंडे ॥
बजै जुद्ध में निबिड़ नगारे । दुहु दिसि बजै अराबे भारे ॥
गुर गंभीर घोर धुनि छाई । फटि ब्रह्मांड परै जनि भाई ॥
त्यौं बोले उमराउनि हल्ला । जम के भये कटीले कल्ला ॥
हय गय रथ पैदल रन जूटे । छाइन सहित कवच्च घर फूटे ॥
चंपति की जब बजी बदूखैं । मसहारिन की मेटी भूखैं ॥
दारासाह बजत रन छाज्यौ । जबत पादसाही कौ भाज्यौ ॥
हाड़ा सार धार में पैठ्यौ । सूरज भेद बिमाननि बैठ्यौ ॥

दोहा

सूरन कौं सुरपुर मिल्यौ, चंद्रचूड़ कौ हारु ।
तखत मिल्यौ औरंग कौ , चंपति कौं जस चारु॥

छंद

चंपतिराइ सुजस जग गायौ । ह्वै हरौल दारा बिचलायौ ॥
हरवल ह्वै दारा कौ बाँकौ । बेटा बली बहादुर खाँ को ॥
जुद्ध बुँदेलनि सौं जब साच्यौ । हय हथयार छाड़ि भगि माच्यौ ॥
पाई फतै भयौ मनभायौ । औरंग उमड़ि आगरे आयौ ॥
दारा पकरि पठाननि लीन्हौ । साह मुराद कैद में कीन्हौ ॥
धरनी लोक दुहुनि तैं छूट्यौ । नौरँगसाह तखत सुख लूट्यौ ॥

बैठे तखत बजे संधानै। चंपतिराइ साह मन मानै॥
नौरँगसाह कृपा करि भारी। मनसब दीन्हौ दुसह हजारी॥

दोहा

ऐरछ अरु सहिजादपुर, कौंच कनार समूल।
मिली बड़ी जागीर सब, धरि जमुना कौ कूल॥

छंद

मिलि बड़ी जागीर सुहाई। जरै समीप भतीजे भाई॥
सुसकी तुरग लूट जौ आनौ। खोज बहादुरखाँ सो जानौ॥
कहि पठई चंपति कौं भाई। घर की लूट तिहारै आई॥
दल में लुस्यौ भतीजौ तेरौ। सो सब साज प्रीति में फेरौ॥
वह करवाल ढाल अरु घोरा। दीजौ राखि आपनौ तोरा॥
चंपति कौं यह बात सुनाई। बैठे ऐंड प्रीत सों पाई॥
तब चंपति ऊपर यह दीनौ। करि घमसान तुरँग हम लीनौ॥
ताकि अब चरचा न चलावो। घर ही यह मन को समुझावो॥

दोहा

सुनत बहादुर खाँ बली, उत्तर दियौ न और।
अनखु हियै में धरि रह्यो, डारि बुद्धि के डौर॥

छंद

तौ लगि सोर कटकु में छायौ। पूरब तैं सूबा चढ़ि धायौ॥
गंगा उतरि प्रयाग पछेल्यौ। औरँगसाह सुनत दल पेल्यौ॥
हुकुम बहादुर खाँ कौ कीन्हौ। उनि सुख मानि सीस धरि लीन्हौ॥
उमड़ि फौज पूरब कौं धाई। हयखुर गरद गगन में छाई॥
और हुकुम चंपति पै आयौ। बैठे साह कहा फरमायौ॥
गैर हाजिरी लिखि है कोई। मनसब घटै तगीरी होई॥
आलमगीर आप फरमायौ। हुकुम न मानै सो दुख पायौ॥
उद्दित बचन उकील सुनायौ। चंपति हियै अनखि बढ़ि आयौ॥

दोहा

अनखुबढ़्यौ मन सब तज्यौ, सेवा कछु न सुहाइ।
डंका दै चंपति चल्यौ, आग अगारै लाइ॥

सातवाँ अध्याय

छंद

चंपतिराइ देश में आये। चंड प्रताप चहूँ दिस छाये॥
फौज पेलि भाँड़ैर उजारी। भुमियावट उर में अखत्यारी॥
ऐरछ आइ कोट में बैठे। सूबन के उर में डर बैठे॥
पहुँची खबर साह कौं ऐसी। चंपतिराइ करी उत जैसी॥
सो औरंग चित्त धर लीनी। पहिल फिकिर सूजा की कीनी॥
नौरंगसाह साज दल धायो। जूझ जीत सूजा बिचलायौ॥
दावादार रह्यो नहिं कोई। बैठ्यौ तखत साहिबी जोई॥

दोहा

गज सिक्का औरंग को, चल्यौ हुकुम लै संग।
देसनि देसनि कौ चले, सूबा तेज अभंग॥

छंद

सूबा ह्वै सुभकरन सिधायौ। हित सौं पातसाह पहिरायौ॥
सँग बाइस उमराउ पठाये। लै मुहीम चंपति पै आये॥
जोरि फौज सुभकरन बुंदेला। ऐरछ पर कीन्हौ बगमेला॥
बाजत सुनै जूझ के डंका। उमड़ि चल्यौ चंपति रन बंका॥
माँची मार दुहूँ दिस भारी। रचनहार कौं मुसकिल पारी॥
चले हाथ चंपति के ऐसे। छूटै बान धनंजय कैसे॥
उतकट भट बखतर धर मारे। कूटे हय गय पक्खरवारे॥
सूखे कढ़े रुधिर नहि छीवै। लागत प्रान परन के पीवै॥

दोहा

ठिल्यौ कटक सुभकरन कौ, ठिल्यौ खवास अडोल।
रन उमंग में उमड़ि कै, नच्यौ तुरँग अमोल॥

छंद

तबहिं बान चंपति कौ छूट्यौ । हटुआ लग्यौ पुठी ह्वै फूट्यौ ॥
गिरौ तुरंग खवास हकार्यौ । सो कासिमखाँ बरछी मार्यौ ॥
उगरसाह तहँ मार मचाई । साहि गढ़ै अति ओप चढ़ाई ॥
चंपतिराइ विजै तहँ लीनौ । मुह मुरकाइ अरिन कौ दीनौ ॥
विकट कटक झुकझोरि झुलायौ । ह्वाँते उमड़ि धरौनी धायौ ॥
निकट रायगिरि तैं तहँ आयौ । तहाँ खोजबंका दल छायौ ॥
जानि कटक उमराइ करेरौ । दीनौ राति उमंडि दरेरौ ॥
सुभट बान गोलिन सौं कूटे । अरि के विकट मोरचा छूटे ॥

दोहा

पैठे उदभट कटक में, कपटे बिकट पठान ।
घाइन घालत चाव सौ, करि चंपति की आन ॥

छंद

तहाँ मार माची अतिभारी । चंपतिराइ तेग झुकि झारी ॥
उमड़ि वैरि कौ चल दल कीन्हौ । कटक युद्ध कौं पैदल लीन्हौ ॥
समर बीर बैरिन पग रोपे । जो न जिहाज ओट धरि कोपे ॥
वर्षत अस्त्र कवच धर फूटे । मघा मेघ मानौ झर जूटै ॥
तहाँ चौदहा मेध सिधार्यौ । सुनि सरदार समान हकार्यौ ॥
कहै चौदहा मुजरा मेरौ । हौं मारौं सरदार अनेरौ ॥
चंपत लख्यौ बचन सुनि प्यारौ । औचक आनि कियौ उजियारौ ॥
छुट्यौ बान बैरी कौ भूख्यौ । छातीलग्यौ कढ्यौ अतिरूख्यौ ॥

दोहा

पंचम चंपतिराइ कै, लग्यौ बान कौ घाइ ।
अधिक युद्ध के रस भयौ, बढ़्यौ चौगुनो चाइ ॥

छंद

हला बोलि बैरी महि आयो । चंपतिराइ युद्ध रस छायौ ॥
रन चंपति की नची कृपानी । धरी भीम जनु कीचक घानी ॥

फौज फारि चंपति जस लीन्हौ । अमृत हरत ज्यौं सुपरन कीन्हौ ॥
कटकु खोज बका कौ कूट्यौ । चंपतिराइ विजै सुख लूट्यौ ॥
जीति पाइ अनघोरी आये । चाल दई सुभ करन सिधाये ॥
तहँ शिकार खेलन अभिलाषी । देबी सिंह नृपति की राखी ॥
आइ अजीतराइ तहँ रोके । बरभुजदंड समर में ठोके ॥
रहो अजीतराइ के ऐंड़ै । पैठि सक्यौ सुभकरन न मैंड़ै ॥

दोहा

राजा देबी सिंह कौं, डेरौं दीनौ देस ।
उमड़्यौ चंपतिराइ पै, श्री सुभकरन नरेस ॥

छंद

सुनि सुभकरन जुद्ध रस भीनौ । मंत्र सुजानराइ सौं कीनौ ॥
लरत भिरत बहु काल बितीते । घने जुद्ध सूबन सौं जीते ॥
ऐंड पातसाहिन सौं कीनी । गई भूमि बंधुन लै दीनी ॥
कठिन ठौर मसलहत बताई । नौरंगसाह दिली तब पाई ॥
दारा दल जीते मुहरा तै । बड़ी कौन अब हमकौं बातै ॥
घाइल भये हमारे भाई । और अवस्था सी कछु आई ॥
ऐ सुभकरन पिलै दल साजै । बंधु बिरोध करत हम लाजै ॥
जो कीजै अब उमड़ि लराई । जीते हू जग में न बड़ाई ॥

दोहा

गोतघाउ तैं आज लौं, हमैं बचायो ईस ।
अब सलाह इन सौं करैं, कछू न ह्वै है खीस ॥

छंद

ज्यौं मन आनि लगाई बातैं । होइ सलाह कटक बिन जातैं ॥
सुनि सुधकरन घनौ सुख पायौ । मन मिलाइ मिलिवौ ठहरायौ ॥
त्यौं चंपति कहि कुशल सुहाती । लिखी सुजान राइ कौं पाती ॥
मुरह्यौ घाइ देह बल आयौ । खेल सिकार तुंरग दौरायौ ॥
बांचत चिठी जान बह लीनी । चंपतिराइ सलाह न कीनी ॥
मिलिवे काज बोल हम बोल्यौ । हित सौं हियौ सुभकर खोल्यौ ॥

बोल बोलि जौ मिलन न जैयै। तो झूठे जग में ठहरैयै ॥
तातैं बनै मिलै निरधारै। चंपति हमैं न झूठे पारै ॥

दोहा

मिलिवौ राइ सुजान कै, हियैं रह्यौ ठहराइ।
इत अनघोरी ले चलै, घर कौं चंपतिराइ ॥

छंद

घर कौ चंपतिराइ सिधाये। दल लै दुवन दलीपुर आये ॥
तहँ छत्रसाल भगति रस भीने। उमगि पिता के दरसन कीने ॥
पहुँचि बेदुपुर में छवि छाये। मिलै सुजानराइ सन भाये ॥
दोऊ बीर मंत्र कौ बैठे। दिगपालनि के उर भय पैठे ॥
तहां सुजानराइ जो बोले। बचन सलाह करन के खोले ॥
ते चंपति के चित्त न लागे। उद्दित जुद्ध बुद्धि रस पागे ॥
जब हम बिरस साह सौं कीनौ। तब इन बचन कह्यौ रसभीनौ ॥
हम न साह कौं मनसब छैहैं। भुमियावट में सामिल रैहै ॥

दोहा

जब हम भुमियावट करी, तब इन करी मुहीम।
हमे जीति ऐ औंडछो, चाहत है सब सीम ॥

छंद

चंपतिराइ सलाह न मानी। राह सुजान वहै ठिक ठानी ॥
मन बच कर्म संधिरस राचे। मिलै न चंपति जब है साचे ॥
तँह सुभकरन साजि दल धाये। समर ठानि चंपति पै आये ॥
फौजैं उमड़ि निकट जब आई। तब कीन्ही चंपति मन भाई ॥
दल पर बान बज्र से बरषे। कौतुक लखैं देवता हरषे ॥
हलनि हलाइ फौज बँध फोरै। घन झुंडा ज्यौं पवन झकोरै ॥
खल भल परी दुवन दल भानै। कित धौं गयौ कौन नहि जानै ॥
जब न ब्यौंत कछु चलै चलाये। तब सुभकरन हजूर बुलाये ॥

दोहा

संग लै राइ सुजान कौं, मुजरा कीन्हौ जाइ ।
देखि साह सुभकरन को, अनतहि दियौ पठाइ ॥

छंद

त्यौंही साह कियो मनसूबा । दच्छिण को भेजो करि सूबा ॥
नामदार खां नाम बखानौ । दिल्लीपति के अति मन मानौ ॥
रतन साह तिन संग पठाये । चंपति रहे देस में छाये ॥
लिखी नवाब साह कौं ऐसी । चाहे करन बड़ाई जैसी ॥
रतनसाह चंपति कौ जायौ । मिल्यौ मोहि सेवा में आयौ ॥
ऊतर साह न दूजौ दीन्हौ । बांचत लिखौ कैद करि लीन्हौ ॥

दोहा

दिल्ली पति की ओर को, जब ही सुन्यौ जुवाब ।
रतन साह कौ तुरत ही, बिदा कियों जु नवाब ॥

छंद

राइ सुजान करी जे घातैं । ते न भई सब मन की बातैं ॥
ह्वै उदास ह्वांते उठि आये । ए विचार मन में ठहराये ॥
जहाँ न आदर बूझ बड़ाई । जहाँ न प्रापति बंधु न भाई ॥
जहाँ न कोई गुन कौ पूजै । तहाँ न पल भर ठाढ़ै हूजै ॥
सेवा पातसाह की छाड़ी । फेरि सलाह औंड़छे माड़ी ॥
तब बिनई हीरादे रानी । हम सेवा नृप की उर आनी ॥
कछु न कपट जानौ हम माही । निहचै चंपति में हम नाही ॥
तब रानी जग फूट्यौ जान्यौ । उर विश्वास करिवो ठिक ठान्यौ ॥

दोहा

त्यौं ही राइ सुजान सौं, हितुन कही समुझाइ ।
तुम अपनी रच्छा करौ, रचियतु इहाँ उपाइ ॥

छंद

यह सुनि राइ सुजान सिधाये । तज औंड़छौ बेदपुर आये ॥
अंगदराइ रतन गुन भारे । छत्रसाल जग दृग के तारे ॥

तीनौं कुवँर महेवा छाये। समाचार फौजन के आयें ॥
तिनमें छत्रसाल परवीने। खेलत आखेटक रस भीने ॥
हेलहि बरष ग्यारही लागी। प्रगट साल सोरह की दागी ॥
अंगदराइ मंत्र तहँ कीन्हौ। ढिग बुलाइ छत्रसालहि लीन्हौ ॥
हित सौं कहै बचन निरधारे। मामनि के तुम जब छतारे ॥
और मंत्र मत उर में आनौ। हुकुम मानि तुम करौ पयानौ ॥

दोहा

ज्यौं खरदूखन के समैं, धरे धनुष तूनीर।
आज्ञा श्री रघुनाथ की, मानी लछमन बीर ॥

छंद

जो छत्रसाल तहां पगु धारे। जहाँ सुनै मामा अनियारे ॥
समाचार चंपति सब लीन्है। डेरा जाइ बेरछा कीन्है ॥
हीरादे फौजे फरमाई। डंका देत जतारह आई ॥
तहं तें दो फौजैं करि धाये। दुहु दिसि दोऊ बीर दबाये ॥
औचक फौज वेदपुर आई। भीर सुजान न जोरन पाई ॥
तीन सुभट सँग लीन्है बैठे। प्रति भट उमड़ि जाइ कर पैठे ॥
इत सुजान की छुटी बंदूखैं। फूटी बर बैरिन की कूखैं ॥
झिलझिल फौज ठिलाठिल धावै। चहुँ दिस छौंर छुवन नहिं पावै ॥

दोहा

दारू गोली के घटै, तीरन माची मार।
छूछे भये तुनीर सब, पर्यौ फौज कौ भार ॥

छंद

पर्यौ भार मारू सुर बाजैं। तीनौं सुभट समर सुभ छाजैं ॥
उमड़ि मनौला हरी जसौधी। दल में तेग तड़ित सी कौंधी ॥
मार करै रन सिन्धु बिलौरै। तेगनि तमकि ताल सो तोरै ॥
लर्यौ उलटि रन पंडित पाँडे। झुक झपेटि खंडे अरि चाँडे ॥
रुचि सौं सार खात ज्यौं मेवा। घाइन कै धरि कंजा नेवा ॥
पाइ दुहुँ के परे न पाछे। पैरे सार धार में आछै ॥

स्वामि हेत तिल तिल तन टूटे । भानु हेत सुर पुर सुख लूटे ॥
फौजैं पिली रुकत नहिं जानी । सुरपुर कौं उमगी ठकुरानी ॥

दोहा

सब ठकुरानिन उमगि कै, कीन्हौ अग्नि प्रवेस ।
देखत साहस थकि रह्यौ, देवन सहित दिनेस ॥

छंद

लख्यौ सुजान राइ ठिक ठायौ । सब ही कौ विक्रम मन भायौ ॥
यह संसार तुच्छ करि जानौ । राखौ रजपूती कौ बानौ ॥
तन कौ कियौ न लोभ न जी कौ । धर्‌यौ लिलाट राज कौ टीकौ ॥
सब के संग अमरपुर लीनौ । काढ़ि कटार पेट में दीनौ ॥
मर्‌यौ सुजानराइ कै जायौ । लर्‌यौ अरुन आनन छबि छायौ ॥
ओड़ी अरि असनि की धाई । जूझौ मनै मार कै माई ॥
समिटि फौज ह्याँतै फिरि आई । जहाँ खबरि चंपति की पाई ॥
चंपति जहाँ जुद्धरस भीनै । रोगन आनि सिथिल करि लीनै ॥

दोहा

बल धरि धाये खल सबै, खबर ज्यान की पाइ ।
नातर कौ बचतौ कहाँ, बिचरै चंपति राइ ॥

भूषण

भूषण हिंदी के वीर रस के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इनका जन्म कानपुर जिले में यमुना नदी के बाएँ किनारे पर स्थित तिकवाँपुर नाम के एक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम रत्नाकर त्रिपाठी था जिनके चार पुत्र थे—चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकंठ (उपनाम जटाशंकर)। यह तिकवांपुर (त्रिविक्रमपुर) परगना व डाकखाना घाटमपुर में अकबरपुर-बीरबल नामक गाँव से दो मील की दूरी पर बसा है। कानपुर-हमीरपुर पक्की सड़क पर कानपुर से ३० वें और घाटमपुर तहसील से ७ वें मील पर 'सलेती' नाम के गाँव से तिकवाँपुर केवल दो मील पड़ता है। अपना और अपने जन्मस्थान का परिचय कवि ने शिवराजभूषण में इस प्रकार दिया है—

देसन देसन ते गुनी, आवत जाचन ताहि।
तिनमें आयो एक कवि, भूषन कहियतु जाहि॥
दुज कौनज कुल कस्यपी, रतनाकर सुत धीर।
बसत तिविक्रम पुर सदा, तरनि तनूजा तीर॥
बीर बीरबर से जहां, उपजे कवि अरु भूप।
देव बिहारीश्वर जांह, विश्वेश्वर तद्रूप॥
कुज सुलंक चित्रकूट पति, साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई, हृदयराम-सुत रुद्र॥

इस उद्धरण से और बातों के अतिरिक्त यह भी स्पष्ट हो जाता है कि 'भूषण' यथार्थ में इनकी पदवी थी जो इन्हें चित्रकूटाधिपति हृदय-राम सुत रुद्रराम सोलंकी ने दी थी। इनका वास्तविक नाम कुछ और ही रहा होगा, जिसका अभी तक हिंदी संसार को कुछ पता नहीं है। अनुमान से पता चलता है कि यह सं० १७२३ के लगभग रुद्रराम

सोलंकी के दरबार में रहे होंगे। यह अनुमान गणना के आधार पर स्थित है और यह गणना भूषण की जन्म-तिथि के अनुसार होती है। यह जन्मतिथि भी बहुत कुछ अनुमान से ही स्थिर की गई है।

शिवसिंह-सरोज में भूषण का जन्म-काल सं० १७३८ लिखा है, परंतु यह असंभव है। शिवसिंह जी भूषण का शिवाजी के दरबार में रहना मानते हैं, परंतु प्रामाणिक इतिहासों के अनुसार शिवाजी का स्वर्गवास सं० १७३७ में ही हो गया था। ऐसी अवस्था में यदि शिवसिंह जी की दी हुई तिथि ठीक मानी जाय तो यह भी मानना पड़ेगा कि भूषण अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहले ही शिवाजी के दरबार में पहुँच गए थे। मिश्रबंधुओं का अनुमान है कि इनका जन्म सं० १६७० में हुआ होगा। परंतु इस अनुमान की आधारभित्ति नितांत दुर्बल है। वे भूषण-ग्रंथावली की बंगवासी वाली प्रति की भूमिका के आधार पर इस निर्णय पर पहुँचते हैं। इस भूमिका में लिखा है कि भूषण के बड़े भाई चिंतामणि त्रिपाठी के ग्रंथ सं० १६८४-१७१३ तक बने, परंतु इस कथन की पुष्टि के लिये कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। जो हो, परंतु यदि यह कथन यथार्थ मान लिया जाय तो चिंतामणि का जन्म-काल सं० १६६८ के बाद का नहीं मानना चाहिये, क्योंकि १६ वर्ष की अवस्था के पहले साधारणतया कदाचित् ही कोई काव्य ग्रंथ रच सकता हो। चारों भाइयों में चिंतामणि सब से बड़े थे और उनके बाद ही भूषण का नंबर आता है। ऐसी अवस्था में भूषण का जन्म सं० १६६८ के दो या तीन साल बाद मानना चाहिये। इसी प्रकार के तर्क और अनुमान के आधार पर इनका जन्म सं० १६७० के आस-पास माना जाता है। पर यह पूर्ण प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता।

कहा जाता है कि भूषण पहले बिलकुल निकम्मे और मूर्ख थे। एक बार खाते समय इन्होंने अपनी भौजाई से नमक माँगा, पर उन्होंने ताने से कहा 'नमक तो बहुत सा कमाकर रक्खे हो न जो तुम्हें जब ज़रूरत पड़े दे दिया करें।' यह बात इन्हें लग गई और बिना खाए ही बाहर निकल पड़े और किसी गुरु के पास जाकर बड़ी तत्परता से अध्ययन

में लग गये। कुछ दिन बाद इन्होंने साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया और अच्छी कविता भी करने लगे। भूषण का वास्तविक कविता काल उस समय आरंभ होता है जब ये हृदयराम सोलंकी के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के दरबार में गए थे। क्योंकि इन्होंने शिवराज-भूषण में इनके यहाँ जाकर कविता सुनाने के उपलक्ष में कवि 'भूषन' की पदवी पाने का उल्लेख किया है। यह छंद ऊपर उद्धृत किया जा चुका है। यह भी निश्चित है कि यहाँ से ये फिर रायगढ़, शिवाजी के दरबार में गए।

कुछ विद्वानों की धारणा है कि ये दिल्ली दरबार में भी गए पर अन्य लोगों के अनुसार सोलंकी के यहाँ से सीधे ये शिवाजी के यहाँ गए। यों इनका औरंगजेब के यहाँ जाना कई कारणों से सत्य जान पड़ता है, और उनमें सब से मुख्य यह है कि दिल्ली दरबार का, औरंगजेब के उठने-बैठने की जगहों का तथा उसके स्नानागार (गुसल-खाना) आदि का वर्णन कई बार इस प्रकार से किया है जैसा कि किसी अन्य कवि के द्वारा, जिसने उस दरबार को भली-भाँति देखा न हो, असंभव है। फिर ऊपर वाले छंद में कवि प्रत्यक्ष रूप से औरंगजेब को संबोधन करके कहता हुआ प्रतीत होता है—"भूषन सुकवि कहै सुनौ नवरंगजेब।" हाँ एक बात अवश्य माननी पड़ेगी। यदि भूषण औरंगजेब के यहाँ गए भी तो बहुत थोड़े दिनों तक वहाँ रहे होंगे, कम से कम उस समय वे अवश्य दिल्ली दरबार में उपस्थित थे जब शिवाजी की उस दरबार में औरंगजेब की बात-चीत हुई थी। क्योंकि दोनों महापुरुषों के उस ऐतिहासिक साक्षात्कार का इतना सजीव वर्णन जिसमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवरण भी न छूटने पाए हों, वही कर सकता है जो वहाँ उपस्थित हो और जिसके नेत्र खुले हों। स्वजाति-प्रेम, सत्य-प्रियता, और स्पष्ट-वादिता आदि गुण तो इनमें (भूषण में) प्रचुर परिमाण में थे ही। जितने दिन भी ये औरंगजेब के यहाँ रहे हों, ये इस बात को अच्छी तरह से समझ गए होंगे कि उनके ऐसे स्वतंत्र विचार के और केवल उच्च भावों की ही क़दर करने वाले कवि के

लिये औरंगजेब के दरबार में स्थान नहीं था। ऐसे ही अवसर पर उन्हें शिवाजी और औरंगजेब का साक्षात्कार देखने का सुयोग प्राप्त हुआ। उन्होंने दोनों के स्वभाव की परख की ही होगी और ऐसी स्थिति में शिवाजी के प्रति उनकी भक्ति और सहानुभूति होनी स्वाभाविक थी और फिर शिवाजी के अपमान ने भूषण को और भी उत्तेजित कर दिया होगा। शिवाजी के दरबार से जाते ही इन्होंने भी दक्षिण जाने का निश्चय कर लिया होगा। या शिवाजी के जाने के बाद उमंग में आकर उनकी प्रशंसा में कुछ छंद इन्होंने औरंगजेब के दरबार में सुनाये हों जिन्हें सुन कर उसने क्रोध में आकर इन्हें अपमानसूचक कुछ वाक्य कह दिये हों या इन्हें अपने दरबार से चले जाने का हुक्म दे दिया हो और तब इन्होंने रायगढ़ की राह पकड़ी हो। परंतु मिश्रबंधु चिटणीस बखर के आधार पर यह नहीं मानते कि भूषण पहले औरंगजेब के यहाँ जाकर तब शिवाजी के यहाँ गए। चिटणीस की बखर हमारे देखने में नहीं आई है, परंतु मिश्रबंधु कहते हैं कि उसमें लिखा है कि भूषण शिवाजी के ही यहाँ कुछ दिन तक रहे और फिर घर लौटे, और घर पर भी कुछ दिन तक रह कर तब चिंतामणि के कहने पर दिल्ली गये और वहाँ उन्होंने वीर-रस पूर्ण कुछ छंद शिवाजी की प्रशंसा में कहे और वे छंद कुछ ऐसे प्रभाव-शाली थे कि उनमें शत्रु की प्रशंसा रहते हुये भी उन्हें सुन कर बादशाह को सचमुच जोश आ गया और वह वीर-रस से प्रभावित हो मूछों पर ताव देने लगा। इस घटना की खबर शिवाजी के कानों तक पहुँची और उन्होंने भूषण को फिर अपने यहाँ बुलवा लिया। चिटणीस की बखर कहाँ तक प्रामाणिक ग्रंथ है अथवा कहाँ तक हम उसके विवरण को मानने के लिये बाध्य हैं, इस विषय में यहाँ कुछ कहा नहीं जा सकता। परंतु इतना अवश्य कहा जायगा कि यदि इसके कथन को सत्य मान लिया जाय तो भूषण की जीवनी के संबंध में अब तक जो कुछ दो चार बातें आभ्यंतरिक प्रमाण, अनुमान, जनश्रुति या स्वाभाविकता आदि के आधार पर स्थिर हो चुकी हैं, उन सब में बड़ा उलट-फेर करना पड़ेगा। यद्यपि

किसी अकाट्य या प्रबल प्रमाण के सम्मुख अनुमान आदि की बातों का कोई मूल्य नहीं हो सकता, परंतु इसके पहले बखर को अपनी अकाट्यता सिद्ध करनी है। बखर के कथन मान लेने से जिन बातों की गड़बड़ी हो सकती है उनका अनुमान ऊपर जो कहा गया है, इससे सहज ही में लगाया जा सकता है। यहाँ अधिक पिष्टपेषण की आवश्यकता नहीं है, फिर भी एक मुख्य बात का संकेत कर दिया जाता है। यदि भूषण सीधे पहले शिवाजी ही के यहाँ गये तो यह तो मानना ही पड़ेगा कि वे वहाँ सूरत दिखाने नहीं गए थे। कुछ न कुछ कविता उन्होंने शिवाजी की प्रशंसा में अवश्य की होगी और तब घर लौटे होंगे। बखर का कहना है कि "कुछ दिन" रह कर तब भूषण घर लौटे थे। इस विषय पर सभी एक मत हैं कि भूषण का पहला उपलब्ध ग्रंथ 'शिवराज-भूषण' ही है, और इस ग्रंथ के आरंभ में ही रायगढ़ का वर्णन है। रायगढ़ में शिवाजी ने अपनी राजधानी औरंगज़ेब के यहाँ से लौटने के बाद स्थापित की थी। यह समय सं० १७२३ का है। इस समय के पहले ही शिवाजी और औरंगज़ेब का वह ऐतिहासिक साक्षात्कार, जिसका आंखों देखा-सा वर्णन भूषण ने किया है, हो चुका था। और फिर मिश्रबंधु स्वयं निश्चय करके सप्रमाण दिखाते हैं कि भूषण सन् १६६७ ई० के अंत में अर्थात् सं० १७२४ में पहले पहल शिवाजी के दरबार में आए। अब यदि बखर की बात मानी जाती है तो यह भी मानना पड़ेगा कि भूषण शिवाजी और औरंगज़ेब की मुलाकात के समय में वहाँ उपस्थित नहीं थे और उनका उस समय का इतना सच्चा या सजीव वर्णन या तो काल्पनिक है या किसी से सुना हुआ। और फिर! भूषण ऐसा स्वाभिमानी, स्वदेश-प्रेमी और राष्ट्रीय कवि एक बार शिवाजी के गुणों से परिचित होकर उनके यहां अश्रुतपूर्व सत्कार और सम्मान पाकर फिर औरंगज़ेब के यहां कैसे जाने पर तैयार होगा, यह बात समझ में नहीं आती। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए यह मानना पड़ता है कि यदि भूषण कभी औरंगज़ेब के यहां गए तो शिवाजी के यहाँ जाने से पहले ही गए होंगे।

शिवाजी की और भूषण की पहली मुलाकात के संबंध में कई जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं और उनमें सब से अधिक प्रचलित यह है। शिवाजी की राजधानी में भूषण संध्या समय पहुँचे और शहर के किनारे एक देवालय के पास एक कुएँ पर विश्राम करने के लिये ठहरे। महाराज शिवाजी की आदत थी कि वे प्रायः वेश बदल कर अपने राज्य में घूमने निकला करते थे और राज्य और प्रजा संबंधी बहुत-सी उन गुप्त बातों का पता लगा लिया करते थे जो अन्यथा उनके कर्ण-गोचर न हो सकती थी। इसी रूप में संयोग से वह भी उसी समय घूमते फिरते वहां आ पहुँचे जहां भूषण विश्राम कर रहे थे। उन्होंने भूषण का परिचय प्राप्त करने या उनसे शिवाजी के संबंध की कुछ कविता सुनाने को कहा, जिस पर उन्होंने शिवराज-भूषण का निम्न लिखित छंद सुनाया—

इंद्र जिमि जंभ पर, बाडव सुग्रंभ पर,
रावन सदंभ पर, रघुकुल राज हैं।
पौन बारिवाह पर, संभु रतिनाह पर,
ज्यों सहस्रबाहु पर, राम द्विजराज हैं।
दावा द्रुम दंड पर, चीता मृग झुंड पर,
भूषन बितुंड पर, जैसे मृगराज हैं।
तेज तम अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलेच्छ बंस पर, सेर सिवराज हैं।

यह छंद शिवाजी को इतना अच्छा लगा कि उन्होंने बार-बार भूषण से पढ़वाया। अंत में अठारह बार पढ़ कर भूषण थक गए और आग्रह करने पर भी फिर पढ़ने से क्षमा मांगी। इस पर छद्मवेशी शिवाजी ने अपना परिचय देते हुए कहा—मैंने मन ही मन प्रतिज्ञा कर ली थी कि जितनी बार आप इस छंद को पढ़ेंगे उतने ही लक्ष मुद्रा, उतने ही हाथी, और उतने ही गांव देकर मैं आपको सम्मानित करूँगा, परंतु आपके भाग्य में इतना ही बदा था। भूषण ने उनका परिचय प्राप्त कर बड़ा आनंद प्रगट किया और इसी एक छंद पर जो कुछ इन्हें

दिया गया उस पर पूरा संतोष प्रगट किया। इसी समय से वे शिवाजी के राजकवि हो गए।

इसी समय (सं० १७२४) के आस-पास भूषण ने 'शिवराज-भूषण' नामक ग्रंथ की रचना आरंभ की होगी जो अलंकारों के क्रम से धीरे-धीरे और क्रमशः हुई और सं० १७३० में समाप्त हुई। भूषण के समय में यही एक निश्चित तिथि है जिसका कि हम लोगों को पता है। इसका भूषण ने स्वयं अपने ग्रंथ की समाप्ति के समय इस प्रकार उल्लेख किया है—

सम सत्रह सै तीस पर, सुचि बदि तेरसि भान।
भूषन सिव भूषन कियो, पढ़ियो सकल सुजान॥

इस ग्रंथ की समाप्ति के उपरांत भूषण कुछ दिनों के लिये घर लौटे और लौटते समय छत्रसाल बुँदेला का भी आतिथ्य स्वीकार किया और कुछ छंद इनकी प्रशंसा में भी बनाए जो 'छत्रसाल-दशक' के नाम से प्रसिद्ध हैं और जो प्रस्तुत संग्रह में दिए भी गए हैं। छत्रसाल शिवाजी की वीरता और स्वदेश-प्रेम का बड़ा सम्मान करते थे और शिवाजी भूषण को कितना मानते थे यह भी उनसे छिपा नहीं था। यही सब सोच कर उन्होंने भूषण का असाधारण सम्मान किया। यहां तक कि कहा जाता है जब भूषण उनके यहा से बिदा हो पालकी पर सवार होकर चलने लगे तो छत्रसाल ने अपूर्व प्रेमभाव से प्रेरित हो, अपनी मान-मर्यादा आदि का कुछ ख्याल न कर कहारों के साथ स्वयं भी इनकी पालकी में अपना कंधा लगा दिया था। पर भूषण यह देखते ही तुरत यह कहते हुए कि 'बस महाराज बहुत हुआं', पालकी पर से कूद पड़े। इससे पता चलता है कि उस समय के राजा-महाराजा कवि और कविता का कितना आदर करते थे।

भूषण जब घर लौटे तो उन के पास प्रचुर धनसंपत्ति इकट्ठा हो गई थी और कहा जाता है कि इनका रहन-सहन और ठाट-बाट राजा-महाराजाओं से कम न था। फिर भी कदाचित् केवल यही जानने के

लिए कि देखें अन्य दरबारों में मेरा कैसा सम्मान होता है, दो एक बार और रजवाड़ों में भी गए थे।

शिवाजी के यहाँ से लौट कर कुछ दिन आराम से घर रह कर भूषण कुमायूँ महाराजा के दरबार में गए और वहाँ निम्न-लिखित छंद पढ़ा—

उदलत मद अनुमद ज्यों जलधि जल,
बलहद भीम कद काहू के न आह के।
प्रबल प्रचंड गंड मंडित मधुप वृंद,
बिंध्य से बुलंद सिंधु सात हू के थाह के।
भूषन भनत झूल झंपति झपान झुकि,
झूमत झुलत झहरात रथ डाह के।
मेघ से घमंडित मजेजदार तेज पुंज,
गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के॥

पर कुमायूँ महाराज ने कदाचित् यह नहीं सुना था कि भूषण का शिवाजी और छत्रसाल के यहाँ कितना अधिक सम्मान हुआ है, और शायद सुनने पर भी उन्होंने इसे कोरी गप्प ही समझा हो। संभवतः इसी कारण से वे कुछ वैसा सम्मान दिखाना ठीक न समझ कर एक लाख रुपया देने लगे। पर भूषण को रुपयों की आवश्यकता नहीं थी, वे केवल आदर और स्नेह के भूखे थे, इसी से वे कुमायूँ महाराज की दानशीलता पर उन्हें बधाई देते हुए वहाँ से उक्त दान को सहर्ष अस्वीकार कर चले आए। किंवदंती है कि उन्होंने चलते समय महाराज से कहा था कि अब मुझे रुपये की चाह नहीं, मैं तो केवल यह देखने यहाँ आया था कि महाराज शिवाजी का यश यहाँ तक पहुँचा है कि नहीं।

थोड़े दिनों के बाद यह फिर शिवाजी के यहाँ गए और समय-समय पर उनके संबंध की रचना करते रहे होंगे। यह कथन भी अनुमान ही के आधार पर है। यह तो निश्चय ही है कि शिवराज-भूषण के अतिरिक्त भूषण ने और भी बहुत-सी स्फुट कविता शिवाजी के संबंध में की थी और उनमें से अधिकांश शिवाबावनी में संगृहीत हैं।

और यह बात सभी धारणाओं के प्रतिकूल जान पड़ती है कि भूषण ने पहली ही यात्रा में शिवाजी संबंधी अपनी सभी रचनाएँ पूरी कर डाली हों। इतिहास से भी इसी मत की पुष्टि होती है। इस दूसरी यात्रा में भूषण संभवतः शिवाजी के मृत्युकाल तक (सं० १७३७) उनके दरबार में रहे और फिर घर लौट आए। परन्तु छत्रसाल के यहाँ इनका आना-जाना बीच-बीच में अवश्य होता रहा होगा क्योंकि इनके (छत्रसाल के) संबंध की इनकी कविता शिवाजी के उत्तराधिकारी साहूजी के समय तक मिलती है।

सं० १७६४ में साहूजी को दिल्ली से छुटकारा मिला और जान पड़ता है कि उस समय भूषण अवश्य इनके पास गये होंगे। भूषण के उस प्रसिद्ध छंद से जिसमें वे इस दुविधा में पड़े हुए दिखाई पड़ते हैं कि साहू की सराहना करें या छत्रसाल की, उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है। वह छंद इस प्रकार है :—

राजत अखंड-तेज छाजत सुजस बड़ो,
गाजत गयंद दिग्गजन उर साल को।
जाहि के प्रताप सों मलीन आफताब होत,
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को।
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें,
भूषन भनत ऐसो दीन-प्रतिपाल को।
और राव राजा एक मनमैं न ल्याऊँ अब,
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥

इस छंद से यह स्पष्ट है कि शिवाजी के द्वारा किए गए भूषण के सम्मान का स्मरण रखते हुए साहु जी ने भी इनका यथोचित सम्मान किया होगा।

इस उपर्युक्त छंद की रचना के पहले भूषण मतिराम के कहने से बूँदी-नरेश राव बुद्धसिंह के दरबार में भी गए थे, और वहाँ उन्होंने उनके वृद्ध प्रपितामह सुप्रसिद्ध महाराज छत्रसाल हाड़ा के संबंध में दो छंद और राव बुद्धसिंह की प्रशंसा में एक छंद कहा था।

राव बुद्धसिंह जी हिंदी कविता के रसिक थे और इन्हीं के दरबार में भूषण के भाई मतिराम रहते थे और जान पड़ता है कि इन्हीं के आग्रह से भूषण जी ने वृद्धावस्था में इतनी दूर जाने का कष्ट उठाया होगा। परंतु जहाँ तक प्रतीत होता है, राव साहब का सम्मान भूषण को पसंद नहीं आया और वे वहाँ से मन ही मन असंतुष्ट होकर लौटे। यदि मतिराम का ख्याल न होता तो वे उन्हें कुछ फटकार भी सुना दिए होते, परंतु बहुत कुछ सोच समझ कर वहाँ उन्होंने कुछ कहना ठीक नहीं समझा। ऊपर जो साहू जी के संबंध का छंद उद्धृत किया गया है उसमें जान पड़ता है "और 'राव राजा' एक मन मैं न ल्याऊँ अब" कहते समय राव बुद्धसिंह का ही अपने प्रति किया हुआ अपर्याप्त सम्मान इनके मन में था। यों तो 'राव राजा' शब्द बहुतों पर लागू हो सकता है, परंतु स्मरण रखना चाहिए कि सं० १७६४ में जाजमऊ की लड़ाई जीतने पर औरंगजेब के पुत्र बहादुर शाह ने बुद्धसिंह जी को 'राव राजा' की पदवी दी थी और ये १७५३ में गद्दी पर बैठे थे और इन घटनाओं के थोड़े दिन बाद ही (सं० १७६७ के लगभग) भूषण दरबार में गए होंगे। उक्त छंद की रचना इसी समय के आस पास हुई जब ये बूँदी दरबार से असंतुष्ट-से होकर छत्रसाल के यहाँ होते हुए घर लौटे। इन्हीं सब बातों से यह अनुमान दृढ़ होता है कि उक्त छंद में 'राव राजा' शब्द से बुद्धसिंह की ही ओर भूषण का संकेत था।

इसी समय के आस पास भूषण का रचना-काल भी प्रायः समाप्त होता है। इस धारणा का आधार यह है कि बुद्धसिंह और साहू के संबंध के जो दो छंद ऊपर उद्धृत किए गए हैं, उनमें जिस समय की ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है, उनके बाद की किसी ऐतिहासिक घटना का वर्णन इनके अन्य किसी छंद में नहीं मिलता। राव बुद्धसिंह के यहाँ वे सं० १७६४ के पहले न गए होंगे क्योंकि सं० १७६३ में ही वे राजगद्दी पर बैठे थे। इसी से अनुमान किया जाता है कि इस समय (१७६५) बूँदी से लौटने के कुछ समय बाद ही उस 'रावराजा' वाले छंद की रचना हुई होगी और यह समय सं० १७६७ के आस

पास मानना चाहिए। इसके बाद के समय से संबंध रखने वाली भूषण की कोई प्रामाणिक कविता नहीं मिलती। मिश्रबंधुओं का कथन है कि सं० १७७२ तक भूषण के जीवित रहने का प्रमाण मिलता है। और वह प्रमाण भूषण का साहु जी के संबंध का वह छंद है जिसमें उनके राज्य के भली भाँति स्थापित हो जाने के बाद उनके ऊपर धावे का वर्णन है। वह इस प्रकार है :—

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै,
कपि लौं पुकारै कोऊ धरत न सार है।
रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक,
खादर लौं झरै ऐसी साहु की बहार है।
फक्कर लौं बक्खर लौं मक्कर लौं चले जात,
तक्कर लेवैया कोऊ वार है न पार है।
भूषन सिरोज लौं परावने परत फेरि,
दिली पर परति परिंदन की छार है।

मिश्रबंधुओं का कहना है कि यह छंद उस समय का है जब साहू जी का राज्य भली भाँति स्थापित हो चुका था और उन्होंने उत्तर का धावा किया था। परंतु प्रथम तो इतिहास से कभी भी साहूजी के बलख बुखारे या रूम पर चढ़ाई के वृत्तांत की पुष्टि नहीं होती और भूषण ने यद्यपि अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन बहुत किए हैं पर उनके मूल-कथन इतिहासविरुद्ध कदाचित ही कभी हुए होंगे। इस विचार से इस छंद के भूषण के होने में भी संदेह हो सकता है। यह बहुत से उन स्फुट छंदों में से है जो भूषण के कहे जाते हैं और यदि इसी प्रकार के छंदों को प्रमाण माना जाय तो भूषण का रचना काल सं० १७६७ तक मानना चाहिए क्योंकि असोथर के महाराज भगवंत राय खींची की मृत्यु पर शोक प्रगट करनेवाला निम्नलिखित छंद भूषण-कृत कहा जाता है:—

उठि गयो आलम सों रुजक सिपाहिन को,
उठि गो बँधैया सब बीरता के बाने को।

भूषन भनत उठि गयो है धरा सो धर्म,
उठि गो सिँगार सबै राजा, राव राने को।
उठि गो सुकवि सील, उठिगो जसीलो डील,
फैलो मध्य देश में समूह तुरकाने को।
फूटे भाल भिच्छुक के जूझे भगवंत राय,
अरराय टूट्यों कुल खंभ हिंदुआने को।

भगवंत राय खीची सं० १७६७ में मरे थे, और यदि भूषण का जन्म सं० १६७० में होना ठीक है तो इस हिसाब से उनकी मृत्यु १२७ वर्ष की अवस्था में माननी पड़ेगी। मिश्रबंधुओं ने उपर्युक्त छंद को जिस प्रकार के तर्क से अप्रामाणिक सिद्ध करने का कष्ट उठाया है उसी ढंग से, बल्कि उनसे भी प्रबल तर्क बलख बुखारे की चढ़ाई वाले छंद को अविश्वसनीय सिद्ध करने के लिए काम में लाए जा सकते हैं।

इस समय (सं० १७६७) के बाद संभव है भूषण कुछ दिन और जीवित रहे हों पर इस समय उनकी अवस्था सौ वर्ष के करीब पहुँच चुकी थी और यह हम निश्चित रूप से जानते हैं कि भूषण की जीविका या धन के लिए रजवाड़ों में घूमने की आवश्यकता का अंत महाराज शिवाजी बहुत पहले ही कर चुके थे। केवल स्नेह के वशीभूत होकर इस अवस्था में भूषण ऐसे स्वतंत्र प्रकृति और ठाट-बाट से रहने वाले कवि के लिए किसी दूर देश की यात्रा करना एक प्रकार से असंभव ही था।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए भूषण के रचना-काल का अंत १७६७ के पहले-पहले ही मानना उचित जान पड़ता है। रह गया यह प्रश्न कि उनकी मृत्यु किस संवत् में हुई। मिश्रबंधु के अनुसार उनकी मृत्यु सं० १७७२ में हुई। यद्यपि उनके मरण के वास्तविक सन्-संवत् का निर्णय करने के लिए अभी तक कोई प्रमाण किसी को नहीं मिल सका है, तथापि यह मान लेने में कोई विशेष आशंका नहीं है कि इसी समय के आस-पास, संभवतः कुछ पहले ही भूषण की मृत्यु हुई होगी। बलख बुखारे की चढ़ाई वाले छंद को 'प्रमाण' मानने पर भी

केवल यही सिद्ध होता है कि सं० १७७२ में भूषण जीवित थे, और कविता करते थे। संभव है कि इसके बाद भी, साहित्यसेवा से बिदा लेकर, वे कुछ वर्ष जीवित रहे हों। ऐसी अवस्था में सं० १७७२ को भूषण का मृत्युसंवत् मानना और उसे प्रमाणों से सिद्ध किया हुआ न कह कर यही कहना समीचीन हो सकता है कि इसी समय (सं० १७७२) के आस-पास उनकी मृत्यु हुई। इनके जन्म और मरण दोनों का समय संदिग्ध है और जो कुछ अभी तक इस संबंध में निर्धारित हो सका है वह दुर्बल प्रमाणों के आधार पर अवलंबित है। हाँ, इतना निश्चय रूप से मानने में कोई भय नहीं है कि भूषण की मृत्यु के संबंध में जो तिथि (सं० १७७२) मानी जाती है वह सत्य के अधिक निकट है। जन्मतिथि (सं० १६७०) के अनुमान के आधार तो नितांत निर्बल हैं। इस तिथि के अनुसार भूषण का रचना-काल उनकी पचास वर्ष की अवस्था से आरंभ होता है। यद्यपि भूषण के बारे में यह प्रसिद्धि है कि वे पहले बहुत निकम्मे थे और पढ़े-लिखे न थे पर तो भी पचास वर्ष का समय बहुत होता है। इस अवस्था में प्रायः लोग बूढ़े हो चलते हैं। और फिर भूषण के संबंध में यह भी प्रसिद्धि है कि वे बहुधा रण-क्षेत्र में शिवाजी के साथ भी जाया करते थे। राजसी ठाट से रहने वाले भूषण ऐसे कवि के लिए साठ या सत्तर वर्ष की अवस्था में लड़ाई के मैदान की सैर करना भी कुछ अस्वाभाविक सा जँचता है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए भूषण की निर्धारित जन्मतिथि (सं० १६७०) इनकी वास्तविक जन्मतिथि के बहुत पहले की जान पड़ती है।

भूषण के परिवार के संबंध में कुछ विशेष नहीं ज्ञात हो सका है। मतिराम और चिंतामणि इनके भाई थे और इसके यथेष्ट प्रमाण भी मिलते हैं। यद्यपि ये प्रमाण आभ्यंतरिक नहीं हैं तो भी इनकी सत्यता में संदेह न होना चाहिए। 'वंश-भास्कर' सं० १७६७ का ग्रंथ है। इसमें लिखा है कि "जेठो भ्राता भूपनरु मध्य मतिराम तीजो चिंतामनि विदित भये ये कविता प्राचीन"। 'मनोहर-प्रकाश' नामक सं० १९५२ के एक ग्रंथ से भी, चिंतामणि, भूषण, मतिराम, और जटाशंकर का भाई होना

सिद्ध होता है। मीर गुलाम अली ने 'तजकरए सर्व आजाद' में लिखा है—'चिंतामणि कविता विचार का कर्त्ता कोड़े-जहानाबाद का रहने वाला था। इसके बाद दो भाई भूषण और मतिराम थे जो अच्छे शायर थे। चिंतामणि संस्कृत का बड़ा पंडित था और शाहजहाँ के बेटे शाह-शुजा की सरकार में बड़ी इज्जत से रहता था।" 'तजकरए सर्व आजाद' सं० १८०८ में बना था।

भूषण के ग्रंथ

'शिवसिंह-सरोज' के अनुसार भूषण ने चार ग्रंथ लिखे—(१) शिवराज भूषण (२) भूषण हजारा (३) भूषण उल्लास (४) दूषण उल्लास। परंतु अभी तक इन में से 'शिवराज भूषण' के अतिरिक्त अन्य किसी का पता नहीं चला है। 'शिवा बावनी' और 'छत्रसाल दशक' कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है।

शिवाबावनी के संबंध में यह कथा प्रचलित है कि भूषण जब शिवाजी से मिलने के लिये पहले-पहल रायगढ़ गये थे तो संध्या समय इनसे और 'छद्म वेशी' शिवाजी से शहर के एक किनारे एक देवालय के पास साक्षात्कार हुआ था। इस समय इन्होंने शिवाजी को जो कविता सुनाई थी उसके संबंध में दो भिन्न-भिन्न किंवदंतियाँ है। एक के अनुसार तो इन्होंने "इंद्रजिमि जंभ पर……" वाला छंद अठारह बार पढ़ा था। इसके संबंध में ऊपर कहा जा चुका है। दूसरी के अनुसार इन्होंने भिन्न-भिन्न बावन छंद सुनाए और वही आगे चल कर 'शिवा बावनी' के नाम से प्रसिद्ध हुए। परंतु इन छंदों में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं के समय पर विचार करने से यह किंवदंती अप्रामाणिक सिद्ध होती है। इन्होंने 'शिवराज भूषण' सं० १७३० में समाप्त किया था, और इस किवदंती के अनुसार 'शिवा बावनी' के छंदों की रचना 'शिव-राज-भूषण' के रचनाकाल के पहले माननी पड़ेगी और ऐसी अवस्था में इसमें सं० १७३० के बाद की घटनाओं का वर्णन तथा शिवाजी के अतिरिक्त अन्य राजाओं का यशगान असंभव तथा अस्वाभाविक होगा। परंतु इसमें करनाटक की चढ़ाई (जो सं० १७३५ में हुई थी) का वर्णन

और शिवाजी से भिन्न दो एक राजाओं का कीर्तिगान है। और फिर इसमें स्वतंत्र ग्रंथ के कोई भी चिह्न नहीं हैं। इसमें आद्योपांत न कोई प्रबंध है और न एक छंद से दूसरे छंद का घटनाक्रम के अनुसार कोई पूर्वापर संबंध ही है। इसका वंदना वाला छंद शिवराज भूषण से लिया गया है। 'शिवा बावनी' के और भी कई छंद शिवराज भूषण में तथा इनके स्फुट छंदों में मिलते हैं। मिश्रबंधुओं ने इस प्रकार के तथा उन छंदों को जो शिवाजी से संबंध नहीं रखते, शिवाबावनी से निकाल उनके स्थान पर स्फुट छंदों में से अन्य उपयुक्त छंदों को लेकर 'बावनी' पूरी कर दी है। मिश्रबंधुओं ने बड़े परिश्रम से घटनाक्रम के अनुसार छंदों को क्रम से सजा कर रख दिया है। प्रस्तुत संग्रह भी मिश्रबंधुओं की 'ग्रंथावली' से ही संगृहीत है।

वास्तव में 'शिवा-बावनी' नाम पहले-पहल किसने रखा यह अभी तक ज्ञात नहीं हो सका है। यह तो निश्चय है कि भूषण ने इस नाम से कोई ग्रंथ नहीं लिखा और न तो उन्होंने अपनी किसी भी रचना विशेष को ही यह नाम दिया; और न भूषण के किसी आधुनिक संपादक ने ही ऐसा किया है। 'शिवसिंह-सरोज' में भी इसका उल्लेख नहीं है, और इससे यह अनुमान किया जा सकता है किसी अज्ञात सज्जन ने 'सरोज' के रचना काल के बाद 'बावनी' का संग्रह किया होगा।

छत्रसाल-दशक

'शिवा-बावनी' की तरह 'छत्रसाल-दशक' भी भूषण का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है। यह छत्रसाल संबंधी दस स्फुट छंदों का संग्रह मात्र है। पहले-पहल किसने संग्रह करके इसको इसका वर्तमान रूप दिया, इसका कुछ पता नहीं है। भूषण के समय में छत्रसाल नाम के दो राजा थे—एक बुँदेलखंड के छत्रसाल बुँदेला और दूसरे बूँदी के छत्रसाल हाड़ा। भूषण के छंद छत्रसाल बुँदेला से संबंध रखते हैं। मिश्रबंधुओं के संग्रह में कुछ छंद ऐसे हैं जो छत्रसाल हाड़ा से संबंध रखते हैं, परन्तु वे भूषण के छंद नहीं जान पड़ते। पं० रामनरेश त्रिपाठी का कहना है कि वे बूँदी के 'लाल' कवि के हैं ('छत्र-प्रकाश' के रचयिता गोरेलाल नहीं)।

भूषण ने अपने छंदों में अपना नाम डाल कर उनमें मुहर लगा दी है, पर इन छंदों में उनका नाम नहीं है। वे छंद ये हैं:—

(१)

चले चंदवान घनबान औ कुहूकवान,
चलत कमान धूम आसमान छ्वै रहो।
चली जम डाढ़ैं बाढ़वारैं तरवारैं जहाँ,
लोह आँच जेठ के तरनि मान ह्वै रहो।
ऐसे समै फौजें बिचलाई छत्रसाल सिंह,
अरि के चलाये पायँ बीर रस च्वै रहो।
हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले,
ऐसी चला चली में अचल हाड़ा ह्वै रहो।

(२)

निकसत म्यान ते मयूखैं प्रलै भानु कैसी,
फारैं तमतोम ज्यों गयंदन के जाल को।
लागत लपटि कंठ बैरिन के नागिन सी,
रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिका सी किलकि कलेऊ देत काल को।

(३)

दारा और औरंग लरें हैं दोऊ दिल्लीवाल,
एक भाजि गयो एक मारे गये चाल में।
बाजी करि दगाबाजी जीवन न राखत हैं,
जीवन बचाये ऐसे महाप्रलै काल में।
हाथी ते उतरि हाड़ा लड़्यो लोह लंगर दै,
कहै लाल वीरता विराजै छत्रसाल में।

तन तरवारिन में मन परमेसुर में,
प्रान स्वामि कारज में माथो हर माल में।

इनमें से पहला तो न जाने किस कवि का है। दूसरे और तीसरे के रचयिता त्रिपाठी जी के अनुसार 'लाल' कवि हैं। परंतु यह निश्चय रूप से नहीं कहना चाहिए कि ये लाल ही के हैं। त्रिपाठी जी के पाठ में ऊपर के नं० ३ वाले छंद में " कहै 'लाल' " पाठ है परंतु मिश्रबंधुओं के पाठ में 'लाल' शब्द नहीं आया है, उसमें यह पंक्ति इस प्रकार है—"एती लाज का में जेती लाज छत्रसाल में।" पाठांतर प्रायः एकाध शब्दों का हुआ करता है। यहाँ तो पूरी आधी पंक्ति ही के पाठ भिन्न-भिन्न हैं। त्रिपाठी जी के उद्धरण में—'एती लाज का में जेती लाज छत्र-साल में' के स्थान पर 'कहै 'लाल' वीरता विराजै छत्रसाल में' से केवल पाठांतर का ही बोध नहीं होता बल्कि उससे स्पष्ट हो जाता है कि यह छंद 'भूषण' का न होकर 'लाल' नामक किसी कवि का है। यहाँ पर सब गड़बड़ी इस कारण से हुई कि इस छंद में 'भूषण' का नाम नहीं है। यह निर्णय करने का हमारे पास कोई साधन नहीं है कि पाठ किस का शुद्ध है, त्रिपाठी जी का अथवा मिश्रबंधुओं का। परंतु कुछ छंदों में भूषण का नाम न होने के कारण से ही यदि इस प्रकार की विच्छृङ्खला उपस्थित की जाने लगे तो पुराने कवियों का संपादन कठिन ही नहीं असम्भव हो जायगा। ऊपर उद्धृत छंद नं० २ में भी 'लाल' शब्द आया है और त्रिपाठी जी के पाठ में यह शब्द इनवर्टेड कामा (' ') के अंदर है और मिश्रबंधुओं की प्रति में साधारण शब्दों की तरह। मिश्रबंधु इसे इसके साधारण अर्थ में लेते हैं और त्रिपाठी जी इसे किसी 'लाल' कवि का नाम समझ कर छत्रसाल दशक से इसे निकाल देते हैं। यह दूसरी समस्या है। प्रायः सभी छंदों में ऐसा कोई न कोई शब्द मिल ही जायगा जिसे यदि कोई चाहे तो किसी मनुष्य का नाम कह सकता है। बूँदी के दरबार के किसी 'लाल' कवि के ग्रंथ हमने नहीं देखे हैं। और फिर त्रिपाठी जी के इस कथन की सत्यता में कि 'मेरी जानकारी में बूँदी के छत्रसाल के लिये भूषण ने

कोई छंद नहीं बनाया' संदेह है। इस बात को तो सभी मानते हैं कि भूषण अपने भाई मतिराम के साथ बूँदी दरबार में गए थे और फिर वहाँ उन्होंने रावराजा बुद्धसिंह के विषय में छंद बनाए थे। और फिर, बूँदी के छत्रसाल हाड़ा से संबंध रखने वाले दो दोहे त्रिपाठी जी ने भी अपने छत्रसाल-दशक में क्यों रक्खे हैं? यदि उन्हें निश्चय था कि भूषण ने छत्रसाल हाड़ा के संबंध में कुछ नहीं लिखा तो शिवसिंह-सरोज में उन दो दोहों का होना ही उन्हें संग्रह में सम्मिलित कर लेने का कोई कारण नहीं होना चाहिए था। यदि मिश्रबंधु भ्रांति कर सकते हैं तो शिवसिंह सेंगर भी भ्रांति कर सकते हैं।

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए हमने प्रस्तुत संग्रह में छत्रसाल-दशक में मिश्रबंधुओं के ही छंद रखे हैं।

भूषण की कविता

भूषण की भाषा विशेषतया व्रजभाषा है। कभी-कभी इनकी भाषा में अपभ्रंश, बुँदेलखंडी और खड़ी बोली के शब्द या मुहाविरे भी देखने में आ जाते हैं, पर बहुत कम। इसके अतिरिक्त इनकी भाषा में कहीं-कहीं फ़ारसी या अरबी के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं परंतु बहुत विकृत रूप में। जैसे 'गाली', 'गुसुलखाना', 'सिलहखाना', 'दरियाव' इत्यादि। ये फ़ारसी 'जापता', के विद्वान् तो शायद नहीं थे क्योंकि प्रायः इनके फ़ारसी आदि के प्रयोग मुहाविरे की दृष्टि से असंगत हैं। परंतु उस समय का वातावरण ही ऐसा था कि सर्वसाधारण का इस भाषा के बहुत से चलते शब्दों से परिचय हो गया था।

इनकी कविता में मुख्य रस 'वीर' है और उसी के सहायक-रूप में रौद्र, वीभत्स और भयानक रसों के भी बहुत से उदाहरण मिलते हैं। भूषण के संबंध में सब से विचित्र बात यही है कि इन्होंने ऐसे समय में वीररस और केवल वीररस की कविता की जब कि हिंदी कविता में शृङ्गार और उसमें भी नायक-नायिका-भेद और नख-शिख के सिवा और कुछ कोई लिखता ही न था।

भूषण के समय के अधिकतर कवि, आचार्य और कवि दोनों ही

बनने की चेष्टा करते थे। उस समय कुछ प्रथा ही ऐसी चल पड़ी थी कि बिना कोई अलंकार-ग्रंथ लिखे किसी कवि का रंग जमता ही न था। इसी प्रथा के अनुसार भूषण ने भी एक अलंकार-ग्रंथ ('शिवराज-भूषण') लिखा। परंतु केवल कविता की दृष्टि से 'शिया-बावनी' के छंद 'शिवराज-भूषण' के छंदों से कहीं अधिक प्रौढ़ हैं।

छंद

भूषण की कविता में दस प्रकार के छंद व्यवहृत हुए हैं। उनके नाम ये हैं :— (१) मनहरण, (२) छप्पय, (३) रोला, (४) दोहा, (५) हरिगीतिका, (६) मालती सवैया, (७) किरीट, (८) माधवी, (९) अमृत ध्वनि, (१०) गीतिका।

इनमें 'मनहरण' और 'मालती सवैया' की संख्या सब से अधिक है। 'बावनी', 'दशक' और फुट कर छंद प्रायः सब इन्हीं दोनों में हैं। और प्रकार के छंद शिवराज भूषण में काम लाए गए हैं।

शिवा-बावनी

छप्पय

कौन करै बस वस्तु, कौन यहि लोक बड़ो अति।
को साहस को सिंधु, कौन रज लाज धरे मति॥
को चकवा को सुखद, बसै को सकल सुमन महि।
अष्ट सिद्धि नवनिद्धि, देत माँगे को सो कहि॥
जग बूझत उत्तर देति इमि कवि भूषन कवि कुल सचिव।
दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद सिव॥१॥*

---

*प्रस्तुत छप्पय-छन्द 'शिवराजभूषण' में प्रश्नोत्तर-अलंकार का तीसरा उदाहरण है। उक्त ग्रंथ में इसकी पद्यसंख्या ३१४ है।

कवित्त मनहरण

साजि चतुरंग वीर रङ्ग मैं तुरंग चढ़ि।
सरजा सिवा जी जंग जीतन चलत हैं॥
भूषन भनत नाद बिहद नगारन के।
नदी नद मद गैबरन के रलत हैं॥
ऐल फैल खैल भैंल खलक मैं गैल गैल।
गजन की ठेल पेल सैल उसलत है॥
तारा सो तरनि धूरि धारा में लगत जिमि।
थारा पर पारा पारावार यों हलत है॥२॥
बाने फहराने घहराने घंटा गजन के।
नाहीं ठहराने राव राने देस देस के॥
नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि।
बाजत निसाने सिवराज जू नरेस के॥
हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के।
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के॥
दल के दरारन ते कमठ करारे फूटे।
केरा के से पात बिहराने फन सेस के॥३॥

प्रेतनी पिसाचरू निसाचर निसाचरिहु।
मिलि मिलि आपुस मैं गावत बधाई है॥
भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयङ्कर से।
जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है॥
किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली!
डिम डिम डमरू दिगंबर बजाई है॥
सिवा पूँछैं सिव सो समाज आजु कहाँ चली।
काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है॥४॥
बद्दल न होहिँ दल दच्छिन घमंड माहिं।
घटा हू न होहिं दल सिवा जी हँकारी के॥

दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्ग बीरन के।
वीर सिर छाप लखु तीजा असवारी के॥
देखि देखि मुगलों की हरमै भवन त्यागैं।
उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के॥
दिल्ली मति भूली कहैं बात घन घोर घोर।
बाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के॥५॥
बाजि गजराज सिवराज सैन साजतहिं।
दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की॥
तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न।
घामै घुमरातीं छोड़ि सेजियाँ सुखन की॥
भूषन भनत पति-बाँह-बहियान तेऊ।
छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की॥
बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ नलिन पर।
लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥६॥
कत्ता की कराकनि चकत्ता को कटक काटि।
कीन्ही सिवराज वीर अकह कहानियाँ॥
भूषन भनत तिहु लोक मैं तिहारी धाक।
दिल्ली औ बिलाइति सकल बिललानियाँ॥
आगरे अगारन ह्वै फाँदती कगारन छ्वै।
बाँधती न बारन मुखन कुम्हलानियाँ॥
कीबी कहैं कहा औ गरीबी गहे भागे जाहिं।
बाबी गहे सूथनी सुनीबी गहे रानियाँ॥७॥
ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहन वारी।
ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहाती हैं॥
कंद मूल भोग करैं कंद मूल भोग करैं।
तीनि बेर खातीं ते वै तीनि बेर खाती हैं॥
भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग।
बिजन डुलाती ते वै बिजन डुलाती हैं॥

भूषन भनत सिवराज वीर तेरे त्रास।
नगन जड़ातीं ते वै नगन जड़ाती हैं ॥८॥
उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग।
तेऊ सगबग निसिदिन चली जाती हैं॥
अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपाती गात।
बात ना सोहाती बोले अति अनखाती हैं॥
'भूषन' भनत सिंह साही के सपूत सिवा।
तेरी धाक सुने अरि नारी बिललाती हैं॥
कोऊ करैं घातीं कोऊ रोतीं पीटि छाती।
घरै तीनि बेर खातीं ते वै बीनि बेर खाती हैं ॥९॥
अंदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार।
बिन रथ पथ ते उघारें पाँव जाती हैं॥
हवा हू न लागती ते हवा ते बिहाल भईं।
लाखन की भीर मैं सम्हारतीं न छाती हैं॥
भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि।
हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं॥
ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की।
नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं ॥१०॥
अतर गुलाब रस चोवा घनसार सब।
सहज सुवास की सुरति बिसराती हैं॥
पल भरि पलँग तें भूमि न धरति पाँव।
भूली खान पान फिरैं बन बिललाती हैं॥
भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि।
दारा हार बार न सम्हारैं अकुलाती हैं॥
ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की।
नासपाती खातीं तें बनासपाती खाती हैं ॥११॥
सोंधे को अधार किसमिस जिनको अहार।
चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं॥

ऐसो अरिनारी सिवराज बीर तेरे त्रास।
पायन मैं छाले परे कंद मूल खाती हैं॥
ग्रीषम तपन एती तपती न सुनी कान।
कंज कीसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं॥
तोरि तोरि आछे से पिछौरा सों निचोरि मुख।
कहैं सब कहाँ पानी मुकतौं मैं पातीं हैं? ॥१२॥
साहि सिरताज औ सिपाहिन मैं पातसाह।
अचल सुसिंध के से जिनके सुभाव हैं॥
भूषन भनत परो शस्त्र न सिवा के धाक।
काँपत रहत न गहत चित चाव हैं॥
अथह विमल जल कालिंदी के तट के ते।
परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं॥
नाव भरि बेगम उतारैं वाँदी डोंगा भरि।
मक्का मिस साह उतरत दरियाव हैं॥१३॥
किबले को ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ।
ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है॥
बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो।
मेहरहु नाहिं माँको जायो सगो भाई है॥
बंधु तो मुरादबक्स बादि चूक करिबे को।
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है॥
भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब।
एते काम कीन्हें फेरि पातसाही पाई है॥१४॥
हाथ तसबीह लिए प्रात उठि बंदगी को।
आपही कपट रूप कपट सुजपके॥
आगरे में जाय दारा चौक मैं चुनाय लीन्हों।
छत्र ही छिनायो मनो बूढ़े मरे बाप के॥
कीन्हों हैं सगोत घात सो मैं नाहिं कहौं फेरि।
पील पै तोरायो चार चुगुल के गप के॥

भूषन भनत छरछंदी मतिमंद महा।
सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के ॥१५॥
कैयक हजार जहाँ गुर्जबर्दार ठाढ़े।
करिकै हुसियार नीति पकरि समाज की॥
राजा जसवंत को बुलाइ कै निकट राखे।
तखत के नीरे जिन्हैं लाज स्वामिकाज की॥
भूषन तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने।
सिंह लौं झपट गुनि साहि महराज की॥
हटकि हथ्यार फड़ बांधि उमरावन की।
कीन्हीं तब नौरंग नें भेंट सिवराज की ॥१६॥
सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिब के जोग।
ताहि खरो कियो छ-हजारिन के नियरे॥
जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर।
कीन्हों ना सलाम न बचन बोले सियरे॥
भूषन भनत महाबीर बलकन लाग्यो।
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे॥
तमक के लाल मुख सिवा को निरखि भये।
स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे ॥१७॥
राना भो चमेली और बेला सब राजा भये।
ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है॥
सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर घर।
भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन समाज है॥
भूषन भनत सिवराज वीर तैंही देस।
देसन में राखी सब दच्छिन की लाज है॥
त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह।
अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है ॥१८॥
कूरम कमल कमधुज है कदम फूल।
गौर है गुलाब राना केतकी बिराज है॥

पांडरि पँवार जुही सोहत है चंदावत।
सरस बुँदेला सो चमेली साज बाज है॥
भूषन भनत मुचकुंद बड़गूजर हैं।
बघेले बसंत सब कुसुम समाज है॥
लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै।
अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज हैं॥१६॥

देवल गिरावते फिरावते निसान अली।
ऐसे समै राव राने सबी गए लबकी॥
गौरा गनपति आंप औरंग को दखि ताप।
आप के मकान सब मारि गये दबकी॥
पीरा पयगंबरा दिगंबरा दिखाई देत।
सिद्ध की सिधाई गई रही बात रबकी॥
कासीहू ते कला जाती मथुरा मसीद होती।
सिवाजी न होतो तौ सुनति होती सब की॥२०॥

सांच को न मानै देवी देवता न जानै अरु।
ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की॥
और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की।
अकबर साहजहां कहैं साखि तब की॥
बब्बर के तब्बर हुमायूँ हद्द बांधि गये।
दोनों एक करी ना कुरान बेद ढब की॥
कासीहू की कला जाती मथुरा मसीद होती।
सिवाजी न होतो तौ सुनति होत सबकी॥२१॥

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब।
कीन्हों कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रबकी॥
खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँकेब।
लाखन तुरुक कीन्हें छूटि गई तबकी॥
भूषन भनत भाग्यो कासीपति विश्वनाथ।
और कौन गिनती मैं भूली गति भव की॥

चारौं वर्ण धर्म छोड़ि कलमा नेवाज पढ़ि ।
सिवाजी न होतो तौ सुनति होत सबकी ।।२२।।
दावा पातसाहन सों कीन्हों सिवराज बीर ।
जेर कीन्हों देस हद्द बाँध्यो दरबारे से ।।
हठी मरहठी तामैं राख्यो ना मवास कोऊ ।
छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से ।।
आमिष अहारी माँसहारी दै दै तारी नाचै ।
खांडे तोड़े किरचै उड़ाये सब तारे से ।।
पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे ।
मुंड मतवारे गिरैं झुंड मतवारे से ।।२३।।

छूटत कमान और गोली तीर बानन के ।
मुसकिल होत मुरचान हू की ओट में ।।
ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो ।
दावा बाँधि द्वेषिन पै बीरन लै जोट में ।।
भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं ।
किम्मति इहाँ लगी है जाकी भट झोट में ।।
ताव दै दै मूँछन कँगूरन पै पाँव दै दै ।
अरि मुख घाव दै दै कूदि परे कोट में ।।२४।।

उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे ।
उमड़ि-घुमड़ि मतवारे घन कारे हैं ।।
इतै सिवराज जू के छूटे सिंहराज औ ।
विदारे कुंभ करिन के चिक्करत भारे हैं ।।
फौजैं सेख सैयद मुगल औ पठानन की ।
मिलि इखलास खाँहू मीर न सम्हारे हैं ।।
हद्द हिंदुवान की विहद्द तरवारि राखि ।
कैयो बार दिल्ली के गुमान झारि डारे हैं ।।२५।।

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि ।
सुनि असुरन के सु सीने धरकत है ।।

देवलोक नाकलोक नरलोक गावैं जस।
अजहूँ लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं॥
कटक कटक काटि कोट से उड़ाय केते।
भूषन भनत मुख मोरे सरकत है॥
रनभूमि लेटे अधकटे अरसेटे परे।
रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं॥२६॥

मालती सवैया

केतिक देस दल्यो दल के बल।
दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो॥
रूप गुमान हस्यो गुजरात को।
सूरति को रस चूसि कै नाख्यो॥
पंजन पेलि मलिच्छ मल्यो सब।
सोई बच्यो जेहि दीन है भाख्यो॥
सो रंग है सिवराज बली जिन।
नौरङ्ग में रंग एक न राख्यो॥२७॥
सूबा निरानँद बादरखान गे।
लोगन बूझत ब्योंत बखानो॥
दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि।
चारु विचारु हिये यह आनो॥
भूषन बोलि उठे सिगरे हुतो।
पूना में साइतखान को थानो॥
जाहिर है जग में जसवंत।
लियो गढ़ सिंह में गीदर बानो॥२८॥

कवित्त मनहरण

जोरि करि जै हैं जुमिला हू के नरेस पर।
तोरि अरि खंड खंड सुभट समाज पै॥
भूषन असाम रूप बलख बुखारे जे हैं।
चीन सिलहट तरि जलधि जहाज पै॥

सब उमरावन की हठ क्रूरताई देखौ।
कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पै ॥
भीखि मांगि खैहैं बिनु मनसब रैहैं, पै न।
जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥२६॥
चंद्रावल चूर करि जाहिली जपत कीन्हीं।
मारे सब भूप औ सँघारे पुर धाय कै ॥
भूषन भनत तुरकान दलथंभ काटि।
अफ़जल मारि डाले तबल बजाय कै ॥
एदिल सो बेदिल हरम कहैं बार बार।
अब कहा सोवो सुख सिंहहि जगाय कै ॥
भेजना है भेजौ सो रिसालैं सिवराज जू की।
बाजी करनालैं परनाले पर आय कै ॥३०॥

मालती सवैया

साजि चमू जनि जाहु सिवा।
पर सोवत सिंह न जाय जगावो ॥
तासों न जंग जुरौ न भुजंग।
महा विष के मुखमैं कर नावो ॥
भूषन भाषत बैरि बधू जनि।
एदिल औरङ्ग लौं दुख पावो ॥
तासु सलाह कि राह तजौ।
मति नाह दिवाल कि राह न धावो ॥३१॥

छप्पय

विज्ञपूर बिदनूर सूर सर धनुष न संधहिं।
मंगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल नहिं बंधहिं ॥
गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिंजी चिंजा डर।
चालकुंड दलकुंड गोलकुंडा संका उर ॥
भूषन प्रताप सिवराज तब इमि दच्छिन दिसि संचरै।
मधुरा धरेस धकधकत सो द्रविड़ निविड़ डर दबि डरै ॥३२॥

कवित्त मनहरण

अफ़जल खान गहि जाने मयदान मारा।
बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है ॥
भूषन भनत फरांसीसी त्यों फ़िरङ्गी मारि।
हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥
देखत मैं रूसतम खां को जिन खाक किया।
सालति सुरति आजु सुनी जो अवाज है ॥
चौंकि चौंकि चकता कहत चहुँधा ते यारो।
लेत रहौ खबरि कहां लौं सिवराज है ॥३३॥

फ़िरङ्गाने फ़िकिरि औ हदसनि हबसाने।
भूषन भनत कोऊ सोवत न घरी है ॥
बीजापुर बिपति बिड़रि सुनि भाज्यो सब।
दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है ॥
राजन के राज सब साहिन के सिरताज।
आज सिवराज पातसाही चित धरी है ॥
बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार।
धाम धाम धूम धाम रूम साम परी हैं ॥३४॥

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर।
दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को ॥
दावा पुरहूत को पहारन के कुलपर।
पच्छिन के गोलपर दावा सदा बाज को ॥
भूषन अखंड नव खंड महिमंडल मैं।
तम पर दावा रविकिरन समाज को।
पूरब पच्छांह देस दच्छिन ते उत्तर लौं ॥
जहां पातसाही तहां दावा सिवराज को ॥३५॥
दारा की न दौर यह रारि नहिं खजुवे की।
बांधिबों नहीं है किधौं मीर सहवाल को ॥

मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को ।
देव को न देहरा न मंदिर गोपाल को ॥
गाढ़े गढ़ लीन्हें अरु बैरी कतलान कीन्हें ।
ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को ॥
बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यों न दिल्लीपति ।
धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को ॥३६॥
सक्र जिमि सैल पर अर्क तम फैल पर ।
बिघन की रैल पर लंबोदर लेखिये ॥
राम दसकंध पर भीम जरासंध पर ।
भूषन ज्यों सिंधु पर कुंभज बिसेखिये ॥
हर ज्यों अनंग पर गरुड़ भुजंग पर ।
कौरव के अङ्ग पर पारथ ज्यों पेखिये ॥
बाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर ।
म्लेच्छ चतुरङ्ग पर सिवराज देखिये ॥३७॥
वारिध के कुंभ भव घन वन दावानल ।
तरुन तिमिरहू के किरन समाज हौ ॥
कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल ।
कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ ॥
भूषन भनत जग जालिम के सचीपति ।
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हो ॥
रावन के राम कार्तबीज के परसुराम ।
दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ ॥३८॥
दरबर दौरि करि नगर उजारि डारे ।
कटक कटाई कोटि दुज्जन दरब की ॥
जाहिर जहान जङ्ग जालिम है जोरावर ।
चलै न कछूक अब एक राजा रब की ॥
सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकंप ।
थर थर कांपत बिलायति अरब की ॥

हालत दहलि जात काबुल कँधार वीर।
रोष करि काढ़ै समसेर ज्यों गरब की ॥३९॥
सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों।
कहत बार बार कहि पातसाह गरजा ॥
सुनिये खुमान हरि तुरुक गुमान महि।
देवन जेंवायो कवि भूषन यों अरजा ॥
तुम वाको पायकै जरूर रन छोरो वह।
रावरे वजीर छोरि देत करि परजा ॥
मालुम तिहारो होत याहि मैं निवेरो रनु।
कायर सों कायर औ सरजा सों सरजा ॥४०॥
कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन कै।
एकै पातसाहन के देस दाहियतु है ॥
भूषन भनत महाराज सिवराज एकै ॥
साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है।
क्यों न होहि बैरनि की बौरी सुनि बैरि बधू ॥
दौरनि तिहारे कहौ क्यों निबाहियतु है।
रावरे नगारे सुने बैरवारे नगरनि ॥
नैनवारे नदन निवारे चाहियतु है ॥ ४१ ॥
चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठे बार-बार।
दिल्ली दहसति चित चाहै करषति है ॥
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति।
फिरत फिरंगिनि की नारी फरकति है ॥
थर थर काँपत कुतुब साहि गोलकुंडा।
हहरि हबस भूप भीर भरकति है ॥
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि।
केते पातसाहन की छाती धरकति है ॥ ४२ ॥
मौरँग कुमाउँ औ पलाऊ बाँधे एक पल।
कहा लौं गनाऊँ जेऽब भूषन के गोत है ॥

भूषन भनत गिरि बिकट निवासी लोग।
बावनी बवंजा नव कोटि धुंध जोत हैं॥
काबुल कँधार खुरासान जेर कीन्हों जिन।
मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं॥
अब लगि जानत हे बड़े होत पातसाह।
सिवराज प्रगटे ते राजा बड़े होत हैं॥ ४३॥
दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी।
उग्ग नाचे डग्ग पर रुंड मुंड फरके॥
भूषन भनत बाजे जीति के नगारे भारे।
सारे करनाटी भूप सिंहल को सरके॥
मारे सुनि सुभट पनारे भारे उदभट।
तारे लागे फिरन सितारे गढ़धर के॥
बीजापुर बीरन के गोलकुंडा धीरन के।
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके॥ ४४॥
मालवा उज्जैन भनि भूषन भेलास ऐन।
सहर सिरोज लौं परावने परत हैं॥
गोंडवानों तिलगानों फिलगानों करनाट।
रुहिलानों रुहिलन हिये हहरत हैं॥
साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि।
गढ़पति बीर तेऊ धीर न धरत हैं॥
बीजापुर गोलकुंडा आगरा दिली के कोट।
बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं॥ ४५॥
मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्हीं जिन।
जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की॥
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब।
हिसि गई हिम्मति हजारों लोग सारे की॥
बाजत दमामे लाखों धौंसा आगे घहरात।
गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की॥

दूल्हो सिवाजी भयो दच्छिनी दमामे वारे।
दिल्ली दुलहिन भई सहर सितारे की॥ ४६॥
डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी सी रहत छाती।
बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिंदुआने की॥
कढ़ि गई रैयत के मन की कसक सब।
मिटि गई ठसक तमाम तुरकानै की॥
भूषन भनत दिलीपति दिल धकधका।
सुनि सुनि धाक सिवराज मरदाने की॥
मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस।
खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की॥ ४७॥
जिन फन फुतकार उड़त पहार भार॥
कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो।
विषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन॥
झारन चिकारि मद दिग्गज उगलि गो।
कीन्हों जेहि पान पयपान सो जहान सब॥
कोल हू उछलि जलसिंधु खलभलिगो।
खग्ग खगराज महाराज सिवराज जू को॥
अखिल भुजंग दल-मुगल निगलि गो॥ ४८॥
सुमन मैं मकरंद रहत है साहि नंद।
मकरंद सुमन रहत ज्ञान बोध है॥
मानस मैं हंस बंस रहत है तेरे जस।
हंस मैं रहत करि मानस बिसोध है॥
भूषन भनत भौंसिला भुवाल भूमि तेरी।
करतूति रही अद्भुत रस ओध है॥
पानि मैं जहाज रहे लाज कै जहाज महा-।
राज सिवराज तेरे पानिप पयोध है॥ ४९॥
बेद राखे बिदित पुरान राखे सारयुत।
राम नाम राख्यो अति रसना सुघर मैं॥

हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की।
काँधे मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं ॥
मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह।
वैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर मैं ॥
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज।
देव राखे देवल सुधर्म राख्यो घर मैं ॥ ५० ॥

सपत नगेस चारों ककुभ गजेस कोल।
कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को ॥
पापी घालैं धरम सुपथ चालैं मारतंड।
करतार प्रन पालैं प्रानिन के चंड को ॥
भूषन भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी।
म्लेच्छन को मारे करि कीरति घमंड को ॥
जगकाज वारे निहचिंत करि डारे सब।
भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को ॥ ५१ ॥

श्री छत्रसाल-दशक

दोहा

इक हाड़ा बूँदी धनी मरद महेवा वाल।
सालत नौरँगजेब को ये दोनों छतसाल ॥
वै देखौ छत्ता पता यै देखौ छतसाल।
वै दिल्ली की ढाल यै दिल्ली ढाहन वाल ॥

कवित्त मनहरण (छत्रसाल हाड़ा-बूँदीनरेश-विषयक)

चले चंदवान घन बान औ कुहुकबान।
चलत कमान धूम आसमान छ्वै रहो ॥
चली जमडाढ़ैं वाढ़वारैं तरवारैं जहाँ।
लोह आँच जेठ के तरनि मान ह्वै रहो ॥
ऐसे समय फौजें विचलाई छत्रसाल सिंह।
अरि के चलाये पायें वीर रस च्वै रहो ॥

हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले।
ऐसी चलचली मैं अचल हाड़ा ह्वै रहो ॥ १ ॥
दारा और नौरंग जुरे हैं दोऊ दिल्लीवाल।
एकै गये भाजि एकै गये रुंधि चाल मैं ॥
बाजी कर दोऊ दगाबाजी करि राख्यो जेहि।
कैसेहू प्रकार प्रान बचत न काल मैं ॥
हाथी ते उतरि हाड़ा जूझो लोह लंगर दै।
एती लाज कामैं जेती लाल छत्रसाल मैं ॥
तन तरवारिन मैं मन परमेसुर मै।
प्रान स्वामि कारज मैं माथो हरमाल मै ॥ २ ॥

छत्रसाल बुँदेला-महेवानरेश विषयक

निकसत म्यान ते मयूखैं प्रलै भानु कैसी।
फारै तम तोम से' गयंदन के जाल को ॥
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनी सी।
रूद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को ॥
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली।
कहां लौं बखान करौं तेरी करबाल को ॥
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि।
कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को ॥ ३ ॥
भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी सी।
खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के ॥
बखतर पाखरिन बीच धंसि जाति मीन।
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥
रैया राय चंपति को छत्रसाल महाराज।
भूषन सकत को बखानि यों बलन के ॥
पच्छी परछीने ऐसे परे पर छीने वीर।
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के ॥ ४ ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसाल सिंह ।
भूषन भनत गजराज जोम जमकैं ॥
भादों की घटा सी उड़ि गरदैं गगन घेरैं ।
सेलैं समसेरैं फेरैं दामिन सी दमकैं ॥
खान उमरावन के आन राजा रावन के ।
सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं ॥
वैहर बगारन की अरि के अगारन की ।
नाँघती पगारन नगारन की धमकै ॥ ५ ॥
अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यौ खेत बेतवै के ।
उतते पठाननहू कीन्ही झुकि झपटैं ॥
हिम्मति बड़ी के गबड़ी के खिलवारन लौं ।
देत सै हजारन हजार बार चपटैं ॥
भूषन भनत काली हुलसी असीसन को ।
सीसन को ईस की जमाति जोर जपटैं ॥
समद लौं समद की सेना त्यों बुँदेलन की ।
सेलैं समसेरैं भई बाड़व की लपटैं ॥ ६ ॥
हैवर हरट्ट साजि गैवर गरट्ट सबै ।
पैदर के ठट्ट फौज जुरी तुरकाने की ॥
भूषन भनत राय चंपति को छत्रसाल ।
रोप्यौ रन ख्याल ह्वै कै ढाल हिंदुवाने की ॥
कैयक हजार एकबार बैरी मारि डारे ।
रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की ॥
सैद अफ़गन-सेन-सगर-सुतन लागी ।
कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥७॥
चाक चक चमू के, अचाक चक चहूँ ओर ।
चाक सी फिरति धाक चंपति के लाल की ॥
भूषन भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं ।
काहू उमराव ना करेरी करबाल की ॥

सुनि सुनि रीति बिरुदैत के बड़प्पन की ।
थप्पन उथप्पन की बानि छत्रसाल की ॥
जंग जीति लेवा ते वै ह्वै कै दामदेवा भूप ।
सेवा लागे करन महेवा महिपाल की ॥८॥
कीबे को समान प्रभु ढूँढ़ि देख्यो आन पै ।
निदान दान युद्ध में न कोऊ ठहरात है ॥
पंचम प्रचंड भुजदंड को बखान सुनि ।
भागिबे को पच्छी लौं पठान थहरात हैं ॥
संका मानि सूखत अमीर दिलीवारे जब ।
चंपति के नंद के नगारे घहरात हैं ॥
चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर ।
छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं ॥९॥
राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो ।
गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को ॥
जाहि के प्रताप सों मलीन आफताब होत ।
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को ॥
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें ।
भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को ॥
और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब ।
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ॥१०॥

——

श्रीधर

कवि का परिचय

कवि श्रीधर उपनाम मुरलीधर का बहुत ही संक्षिप्त परिचय हिंदी संसार को प्राप्त है। हिंदी या संस्कृत के अधिकांश कवियों की भाँति इन्होंने भी अपनी रचना में अपना कुछ व्यक्तिगत वृत्तांत देना ठीक नहीं समझा। ये एक उच्च कोटि के कवि थे इसमें तो किसी को संदेह नहीं हो सकता। जंगनामा के सिवाय इनके और भी कई ग्रंथ मिलते हैं, पर इनकी सब कविताओं को देखने से एक बात स्पष्ट हो जाती है और वह यह कि ये उन कवियों में से थे जो श्रीमानों की प्रशंसा कर अपनी जीविका निर्वाह करते थे। इसलिए इनके वर्णनों में सत्यता या प्रामाणिकता की अधिक आशा नहीं करनी चाहिए। इनके दिए हुए सन्-संवत् भी नितांत अशुद्ध हैं। इनकी कविताओं का संग्रह बाबू जगन्नाथ दास "रत्नाकर" ने किया था और उसी संग्रह के आधार पर बाबू राधाकृष्ण दास ने जंगनामा का संपादन किया है। रत्नाकर जी के संग्रह में इनका लिखा हुआ एक संगीत ग्रंथ, एक नायक-नायिका-भेद संबंधी ग्रंथ तथा एक ग्रंथ जैन साधुओं के वर्णन में है। इनकी कुछ स्फुट कविता श्रीकृष्ण चरित्र पर और कुछ चित्रकाव्य भी उक्त संग्रह में हैं।

इसके अतिरिक्त नवाब मुसलेहखाँ की प्रशंसा में इन्होंने बहुत कुछ पद्य रचना की है। उनकी होली का वर्णन तथा उनकी रसिकता और विलासिता की बड़ी प्रशंसा की है। इनकी स्फुट कविता को देखने से यह भी विदित हो जाता है कि ये रईसों के यहाँ शादी-ब्याह आदि विशेष अवसरों पर पहुँच कर कविता सुनाकर द्रव्योपार्जन किया करते थे।

डा० ग्रियर्सन तथा बाबू शिवसिंह ने इनके बनाए हुए 'कवि-विनोद' की चर्चा करते हुए लिखा है कि ये (श्रीधर) और कवि मुरलीधर मिलकर कविता करते थे परंतु ऐसा नहीं है। जंगनामे से कम से कम

इतना आभ्यंतरिक प्रमाण अवश्य मिल जाता है कि श्रीधर का ही प्रसिद्ध नाम "मुरलीधर" था और वह प्रयाग का रहने वाला था।

डा० ग्रियर्सन ने इनका समय सन् १६८३ लिखा है परंतु जंगनामा का रचना काल सं० १७६८ अर्थात् सन् १७१२-१३ है और शायद इसी कारण से विलियम अरविन साहब (William Irvine) ने, जिन्होंने सन् १९०० में जंगनामे के कुछ अंशों को बंगाल एशियाटिक सोसाइटी के तत्त्वावधान में प्रकाशित कराया था, श्रीधर का समय जंगनामा के रचना काल से तीस वरस पहले अर्थात् सन् १६८३ में माना है। अरविन साहब को जंगनामा की प्रति बा० राधाकृष्ण दास की कृपा से प्राप्त हुई थी। इन्हीं बाबू साहब ने पूरे जंगनामा का संपादन नागरी-प्रचारिणी सभा से किया है और यह प्रस्तुत संग्रह भी सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण के आधार पर है।

जंगनामा में वर्णित घटनाओं का ऐतिहासिक संदर्भ तथा कथा

कथा का सारांश इस प्रकार है:—

औरंगजेब के पुत्र और उत्तराधिकारी बहादुर शाह की मृत्यु सन् १७१२ के फरवरी महीने में हो गई। बहादुर शाह के चार लड़के थे,—मोइज़ुद्दीन (जहाँदारशाह), अज़ीमुश्शान, रफ़ीउश्शान और शाह-जहाँ। वह अपने द्वितीय पुत्र अज़ीमुश्शान को बहुत चाहता था और मृत्यु के समय लाहौर में वही उसके पास रह गया था। राजगद्दी के लिये बहादुर शाह के अन्य पुत्रों ने मिलकर उस पर चढ़ाई कर दी और चार दिन रावी नदी के तट पर घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में अज़ीमुश्शान जिस हाथी पर सवार था वह एक गोला खाकर ऐसा भड़का, कि सवार और महावत वगैरह को लिए रावी में डूब मरा। इसके बाद पहले तो अन्य भाइयों में यह सलाह हुई कि राज्य बराबर बाँट लिया जाय पर जहाँदार शाह को यह बात पसंद न आई और उसने आक्रमण कर रफ़ीउश्शान और शाहजहाँ दोनों भाइयों को मरवा डाला। इसके बाद जहाँदार शाह दिल्ली की ओर बढ़ा पर राह में उसे ख़बर मिली कि मृत अज़ीमुश्शान का द्वितीय पुत्र फर्रुख़सियर जो कि

उस समय पटने में था, दिल्ली पर हमला करने की तैयारियाँ कर रहा है। यह सुन कर उसने पचास हज़ार सैनिकों के साथ अपने बेटे अज़ीज़ुद्दीन को उसकी राह रोकने के लिए आगरे रवाने कर दिया। इधर फ़रुख़सियर को भी अब्दुल्ला हुसेन अली और राजा छबीले राम से, जिसके पास देश की मालगुजारी की एक बड़ी रकम थी, पूरी सहायता पाने का वचन मिल चुका था।

इन लोगों की पहली लड़ाई ई० आई० आर० के भरवारी स्टेशन से कुछ दूर उत्तर तरफ आलमचंद नामक एक गाँव में हुई। इस युद्ध में फ़रुख़सियर के तरफ के दो वीर—शैफुद्दीन अली खाँ और निज़ामुद्दीन अली खाँ, विजयी होकर अब्दुल्ला के पास पहुँचे और इस विजय का समाचार तुरंत पटने में फ़रुख़सियर के पास भेज दिया गया। फिर दूसरी लड़ाई फ़तेपुर ज़िले में बिंदकी नामक स्थान पर हुई जिसमें अज़ीज़ुद्दीन की पूरी हार हुई। अंतिम लड़ाई आगरा प्रांत में सिकंदरे के पास हुई जिसमें फिर जहाँदार शाह पूरी तौर से हारा और उसकी आशाओं पर सदा के लिये पानी फिर गया।

इन्हीं लड़ाइयों का बड़ी धूम-धाम से वर्णन इस जंगनामा में किया गया है।

श्रीधर की कविता

जंगनामा में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं में बहुत जगह साधारण उलट फेर रहते हुए भी मुख्यतः वे ठीक हैं। अरविन साहब ने अपने संस्करण की भूमिका में कुछ उदाहरण देकर कवि की इतिहास संबंधी दो चार भूलें दिखलाने की चेष्टा की हैं पर कवि के आवश्यक वर्णनस्वातंत्र्य को ध्यान में रखते हुए उनका समाधान हो सकता है।

इनकी कविता की भाषा बड़ी मनोहर और साथ ही कहीं-कहीं बड़ी ओजस्विनी भी होती थी। वास्तविक युद्ध के वर्णन इनके बड़े सजीव हैं और ये उन स्थलों पर भाषा, भाव, शब्द आदि सभी दृष्टि से वीर रस के निरूपण करने में सफल हुए हैं। इनकी भाषा में प्रसाद गुण की कहीं-कहीं बहुत कमी देखी जाती है और इसका प्रधान कारण

यह है कि ये समय-समय पर दुरूह, प्रांतिक और विदेशी शब्दों का प्रयोग निस्संकोच रूप से कर देते हैं। दूसरी बात, जिसकी वजह से इनकी कविता की रोचकता में कमी आ जाती है, इनकी नामों की बेहद भरमार करने की आदत है। कहीं-कहीं तो यह हाल है कि दो-दो पृष्ठ तक ये सैनिकों और सेनापतियों के नाम ही गिनाते चले गए हैं। इससे जी ऊब जाता है और शैली में शिथिलता आ जाती है। एक जगह घोड़ों के नाम गिनाने में इन्होंने हद कर दी है। शायद ही किसी देश के घोड़ों का वर्णन इन्होंने छोड़ा हो। एक दोष इनकी कविता में और यह है कि इनकी भाषा में स्थिरता नहीं है। कहीं कहीं तो इनकी भाषा पुराने ढंग की संयुक्ताक्षरों से पूर्ण वीरगाथाओं की भाषा का अनुकरण करती हुई सी जान पड़ती है।

इन्होंने छंद पूरे करने के लिए व्यर्थ शब्दों की बड़ी भर-मार की है जिससे इनकी शैली में और भी शैथिल्य आ गया है जैसे—

"मिले ओपची तोपची यों घनेरे"

यहाँ पर 'ओपची' शब्द हमें निरर्थक जान पड़ता है। इस प्रकार के उदाहरण जंगनामा में पर्याप्त संख्या में मिलेंगे।

श्रीधर की कविता की मुख्य विशेषता है इनके सजीव वर्णन की शक्ति। जहाँ भी इन्होंने किसी दृश्य को चित्रित किया है वह बहुत ही जीता-जागता बन पड़ा है।

श्रीधर ने वीर रस के उपयुक्त प्रायः सभी छंदों का उपयोग किया है जिनमें भुजंगप्रयात, हुलास, गीता, मधुभार अधमा तथा दोहा आदि मुख्य हैं। परंतु छंदों के विषय में इन्होंने पर्याप्त सावधानी से काम नहीं लिया है। कहीं-कहीं एक छंद लिखते-लिखते दूसरा छंद लिखने लग जाते हैं। उदाहरणार्थ बाबू राधाकृष्ण दास के संस्करण में चालीसवें पृष्ठ में हुलास छंदों के बीच में अकारण एक भुजंग-प्रयात घुस पड़ा है।

ऐसी असावधानियों के अतिरिक्त इनकी रचना में छंदोभंग और यतिभ्रष्टतादिक दोष भी प्रायः देखने में आ जाते हैं।

ऊपर कहे हुए दोषों और गुणों को देखते हुए यही निष्कर्ष निकलता

है कि अधिक विद्वान् न होते हुए भी इनमें चमत्कार और प्रतिभा की झलक अवश्य दिखाई देती है यों स्वांत:सुखाय तो ये लिखते नहीं थे। जो कुछ लिखा है अपने आश्रयदाताओं को संतुष्ट करने के लिए, इसलिए ऐसी अवस्था में इनसे प्रथम श्रेणी की कविता की आशा करना ही व्यर्थ है।

प्रस्तुत संग्रह में पहला उद्धरण बिंदकी के युद्ध वर्णन से लिया गया है और दूसरा सिकंदरे के युद्ध से।

जंगनामा

भुजङ्गप्रयात छन्द

दुहूं ओर साजे महामत्त दंती। सजे पक्खरों लक्ख की पूर पंती॥
गड़ादार घेरें सिरी कट्ट बंटा। गजें मेघ मानो बजे घोर घंटा॥
घटा श्याम सी दीह ता बिंधिमा पै। परी पक्खरैं झालरा झूल झाँपै॥
सजे पक्खरो भक्खरों लक्ख घोरे। मनो भानुजू के रथी जोर जोरे॥
चले चाइ सों चंचले चाल बाँकी। दरयाई तुरक्की तजीले इराँकी॥
करैं पौन सी पौन की पायदारी। अरब्बी गरब्बी खुरीले खँभारी॥
नचै नाटकी से पटी के चन्हावी। कछी पीठ पूठों पले नीर रावी॥
सजे संदली औ समुंदे सुरंगे। कबूतो बने फूलवारी सुअंगे॥
सजे एक संजाफ नीले हरीले। मुसुक्की सजे पंच कल्यान पीले॥
बड़े ढील के, कान छोटे नवीने। सुचौरी खुरी चाकरी जासु सीने॥
बड़े चंचले नैन के, मुक्ख साँचे। खुरी पाल भूमै घनी दोष वांचे॥
सजे साजियों चारिहूँ ओर योधा। सजे साज लोहा बँटो क्रुत्त क्रोधा॥
पिले चारिहूँ ओर सूबे गरूरी। जिन्हों बार के शत्रु की फौज चूरी॥
कहाँ लों कहौं फौज मैं सूर राजे। कितेको बली लै बँदूखैं गराजे॥
सबै सूरुवाँ बीर बाँके बनैते। सजे साज बाजी चढ़े हाँक दैते॥
कढ़े फौज सों डाँकि घोरे धपावै। किते कूह कै कै सु भाले फिरावै॥
लख्यौ दूसरी ओर गाढ़ो अनी को। चढ़ो कोपि कै पूत दिल्लीधनी को॥
दुहूँ ओर ठाढ़ी चमू वहि रोकैं। दुहूँ ओर की फौज ठाढ़ी बिलोकैं॥
सु फरुकसियर शाहि के जोर सूबे। पिले चारिहूँ ओर साजे अजूबे॥

बजी दीह धौंसानि आवाज अच्छी। चहूँधा लखीजे बरच्छी बरच्छी ॥
छुटे त्यों अरावे उठी धूरि भारी। धुवाँ की उठी धंधुरारी अँध्यारी ॥
बढ़ैं रोशनी ऊपरी वान छूटै। मनो आसमानी महा लूक टूटै ॥
पिले चोट को खोट के चारि फेरे। पिले ओपची तोपची यों घनेरे ॥
चहूँ फौज की बीरता की बड़ाई। चमूँ शत्रु की चूर कै कै हटाई ॥
चली उत्तरी फौज के गर्व एँठे। महा मोरचा भीड़ि कै पेलि पैठे ॥
लख्यो एज़र्दां वार छूटो दुवारो। परी भाग भाग्यो तकैं कोह नारो ॥
सँभारे न घोरे रथी हेम हाथी। सँभारे न कोऊ कछू संग साथी ॥
किहूँ छाँडि घोरैनि डार्यो हथ्यारो। किहूँ भागि सों आगेही पत्थ धारो ॥
करै कोऊ हा हा परै कोऊ पैयाँ। चले रामरे गाँव झैझा बकैयाँ ॥
घुसे बीहरो भागि केते निकामी। किते को करे बंदि नामी निनामी ॥
किते को गुमानी गरूरे निछाए। बड़े हौंसिला कै तिया संग लाए ॥
तिन्हैं छोड़ि भागे छुटी चाल बाँकी। गए फूटि ताले फटी हौंस नाकी ॥
सु रोवैं असीले फसीले सहेली। पुकारे खुदा आय दै कौन मेली ॥
गरोढा बरो झाँकि झीकैं सुरोसैं। सबै मौजदां को भरे नैन कोसैं ॥
कहूँ बैदरा कौ बड़ी धूम धाई। चहूँ बुच लुचानि लै आग लाई ॥
बरैं छावनी छाँह डेरा सु भारी। महा भीम फैली धुवाँ की अँध्यारी ॥
कहूँ आँच के तेज सों लाल फूटैं। कहूँ बैदरा बीर बाजार लूटैं ॥
कहूँ बाँस की गाँठ फूटैं पटक्कैं। चटाचट्ट पाषान भारी पटक्कैं ॥
लुटैं केसरौ दास दारयो छुहारो। लुटै चारु कस्तूरिका घन्न सारो ॥
कहूँ होत मोती बरैं चूर चूना। कहूँ लै लुटेरे करैं मोट दूना ॥
जरैं चार आचार चूरी चिरोंजी। कहूँ कौलगट्टे कसेरू करोंजी ॥
जरैं औ लुटैं चीर चीरा जरी के। परे भोट के मोट लूटैं परी के ॥
भए बैदरा जौहरी लूटि लूटैं। छिटे ज्वारिलों मोट मुक्तानि छूटैं ॥
किती ती जरैं हाय हा रट्ट लागी। किती कामिनी दामिनी रूप भागी ॥

हरिगीता छंद

दुहुँ ओर फौजैं साजि यों गल गाजि भट ठाढ़े भए।
बाजे नगारे फीलवारे धम्म धुनि धुव कंपए ॥

खुर थार भार दुधार सों छुटि छार सूरज झंपए।
तहँ वहलकी झुकि मेरु हहलत पहलसम भुव कंपए॥
दुहुँ ओर फौजनि ओज सों रन मौज देखा देख भो।
हथनाल तोपैं बान जाल विशाल गरज अलेख भो॥
घोरनाल घोर अँदोर दुहुँ दल रहकलास विशेष भो।
फर बजी बहकि बँदूख अगनित तित बनैतनि तेग भो॥
कड़ कड़ाकड़ सो अरावे छुटत टपकनि टाप की।
चहुँ ओर घोर घटा मढ़ी धुवधार तोपतराव की॥
वर बान बगरत बीजुरी सन गोल ओला थाप की।
नहिं पहर एक पिछानि काहू रही पर की आप की॥
छुटि गयो सो धुँधकार त्यों भिनुसार सों दुहुँ दिसि भयो॥
ललकार वीर अमीर सावँत चाँप सर कर वर लयो।
दप करत आगें वाजि वागें मौज मोद मने भयो।
बज उठे मारु मारु मारु अंदोर रनमंडल छयो॥
तहँ तीर तर तर बान सर सर सुभट भर गोला चले।
पग पिलत आगेहिं आगहीं सावंत भूप भले भले॥
भट लाल मुख सुख भरे पीरे रंग कायर हलहले।
जिमि देखि जाचक दानि सुख मुख सूम दुख मुख बेकले॥
इत उत दुहूँ दल के जिजैं जे बीर बीर बिरी बिरे।
ते करन साके वलिक बाँके हाँकि भट भट सों भिरे॥
शमशेर सरकि सिरोह वार संभार सावँत सिर चिरे।
दीनी झमाझम झमकि झर झर झूमि झूमि किते गिरे॥
तहँ दौर अगत्र है सिधायो धनी मुशरफ मीर है।
तिन मार बुजुरुक मीर अशरफ तासु वीर सुबीर है॥
तब जुलफिकार गह्यो महाबल जुलफिकार अमीर है।
झमकी दुधारिन सार सार दुधार धीरैं धीर है॥
तहँ अली असगर खाँ महाबल मदति पहुँचो जाइ कै।
फिर जैनदीखाँ बीर पहुँचो तेग अंग अँगाइ कै॥

फत्तह अली खाँ सफ शिकिन खाँ भये शामिल आइ कै।
पहुँचो हुसेन अलीय खाँ धौंसे हिरौल बजाइ कै॥
सरदार तितहिं हुसेनली खाँ लै अमीरन संग है।
रन भिर्यो जुलफिकार खाँ हमराह गाढ़े अंग है॥
फर मैं फकाफक होत तेग कटार कटकतु फंग है।
तहँ तीर तरकस सबै खाली भए लाख निखंग है॥
साँवंत सैद हुसेनली खाँ जोर जैतक सत्थ है।
तहँ हत्थ हत्थनि मत्थ मत्थनि लरति लत्थनि पत्थ है॥
गहि जब्बर हत्थर करे तत्थर परे विरथ वितत्थ है।
उहि सत्थ बार समत्थ हे एक मत्थगे बिनमत्थ है॥
तब सैद अशरफ अगहरो भाई मुशर्रफ मीर को।
समसार तासु अँगावतो अँग अंग हो रनधीर को॥
हेरो सुहूरनि हाथ प्यालो हरखियो हिय बीर को।
लीनी शहादति साहबी सुरलोक बुद्धि गँभीर को॥
पेल्यो मुशर्रफ मीर पीलनि पील बान जुझाइ कै।
तब अली असगर खाँ पिल्यो फरधार अंग अँगाइ कै॥
सुत्र जैनदो खाँ गहि जुनब्बी कर कमान चढ़ाइ कै।
फत्तहअलीखाँ शफशिकन खाँ भए अगहर आइ कै॥
इन सबनि जाइ अँगाइ घायनि लखि लगाई जूझियो।
गिरवान गहि गहि जात रहिं रहि एक एक अरूझियो॥
फैली फुलंगैं सार सारनि बजत परत न सूझियो।
फत्तह अली खाँ शफशिकिन खाँ जैनदीखाँ जूझियो॥
उत जुलफिकारहि खान के सँग के अमीर किते गिरे।
ठहराइ सकत न पाइ लखि दल आपु आइ किए थिरे॥
हुस्सेनली खाँ भो उतारू पिले जंगी मुँहचिरे।
उत भो उतारू जुलफिकार दुधार दोऊ भट भिरे॥
दोऊ अमीरल उम्मरात्र भिरे दोऊ तेहा भरे।
हातिम दोऊ रुस्तम दोऊ कायम दोऊ रन कर करे॥

शमशेर सरकि सिरोह की सावंत ये दोऊ लरे।
घन घाइ खाइ अँगाइ अंगनि अटल है दोऊ अरे॥
मुखत्यारखाँ जाँवाज खाँ जाँनिसार खाँ आटोप कै।
सादिक सु लुतफुल्लाह खाँ आयो महाबल चोप कै॥
फिर दिल दिलेर अलीय खाँ उमराव केतक कोप कै।
जिहिं ओर आजमखाँ तहाँ फर लियो फौजनि छोप कै॥
तब मारु मारु संघारु हाँ हाँ हाँ दुहू दल ह्वै रह्यो।
राजा छबीले राम आजम खाँ वली कर वर गह्यो॥
मुलताँ कुलीखाँ सैद शेखर सूखियतखाँ रिस भर्यो।
फिर नेक कदम फतेह कर श्रीधर सुकवि जग जस लह्यो॥
तहँ पिले बखतर-पोश रोस भरे महा धमकी मही।
गिरवान गहि गहि जात रहि रहि हहाँ हाँ हँरि है रही॥
को गनै तरकन तीर की बर बान बरखन झर सही।
तरवारि ते तहँ वार त्यों अंगवत चलावत हरखही॥
तहँ कँपत कायर गात कदली पात बात मनों लगे।
जे सूमदान न देत हे जिय देत भागे ठग ठगे॥
जे दान निरखे दान में जिय दान हूँ मैं जगमगे।
मुख लाल रंग प्रसन्नता हिंगु लाल रंग मनो रँगे॥
राजा छबीलेराम को जंगी महावत जूझियो।
मैं मंत मुख रुख फिरत लखि बर बीर मन महँ बूझियो॥
तब आपु दै कल दै अँगूठा जोर करत असूझियो॥
रनथंभ पीलहि थाँभि पेलि लगाइ राखी लूझियो॥
राजा छबीलेराम जू को खेश सजि फौजैं भली।
रन मड्यो रैया राय राव गुलाबराव मही हली॥
मुखत्यार खाँ बलवान की चतुरंग पृतना दलमली।
मुखत्यार खान समेति हाथी साथ जूझ्यो तेहि थली॥
तब राज श्री गिरधर बहादुर सुर बहादुर औ फबै।
फब कोज हूलि हला कियो दौरे महादल के सबै॥

दप कियो रैयाराय राव गुलाब राव जहाँ जबै।
सरदार सिगरे हाँक दै दौरे दिलेर तहाँ तबै॥
भगवंत राय दिवान कायथ बीर बर काकोरिया।
तसु नंद राय सुवंस गहि किरवान दर बर दौरिया॥
दप कियो बेनीराम नागर नौनिहाल अगोरिया।
फिर शुजा सैद इमाम सेख सुपीर महमद पौरिया॥
नर सूर सर बानी बली अफगाँ वतन चिहि टौलिया।
किरवान अहमद खाँ गही वा फौज फर आगै लिया॥
फिर सैद सुब्र शाकिर महम्मद मीर जिहिं रन लालिया।
जसु बतन ओलमगोट रो सफजंग में जस फैलिया॥
दौर्यो गुलाब मोहैयुदीखाँ बीर आजम खान को।
दौर्यो बली सुलताँ कुलीखाँ जिनै जस किरवान को॥
रन मड्यो शेष रसूखियत खाँ जाहि सम बलवान को।
हरि कदम फत्तेह नेक कदम जु देग तेगहु बान को॥
नव्वाब आजमखाँ तहाँ फर भूमि हाँकि हला कियो।
सुलताँ कुली खाँ बाग बीर रसूखियत खाँ हूलियो॥
भनि सुकवि श्रीधर नेक कदम सु फौज गुर गाढ़ो हियो।
तहँ जब्बर जानी खान पर भर भरनि कै बर बरखियो॥
नव्वाब आजम खाँ महाबल जबर जानी खाँ भिरो।
रह सत्य आजम बली खाँ अँग अँग घन घायनि घिरो॥
शमशेर सर सर तीर तर तर मुख न काहू को फिरो।
तहँ हसित साथी सरथ हाथी जूझि जानी खाँ गिरो॥
इत के भए सरदार साथी सहित सेर सुघाइ कै।
उतके किते जूझे अरूझे रहे लोह अघाइ कै॥
नहिं लरत चलत न बर परे दोऊ अरे अरराइ कै।
वे लाख, ये न हजार पूरे रहि रहे ठहराइ कै॥
तब सैद कुतूबुलमुलुक बीर अमी मनिर रेला कियो।
बंगश महम्मद खान शादी खान कर करबर लियो॥

रन काज राजा रतनचंद महाबली हिय हरखियो।
जै कृष्णदास दिवान निजमुद्दी अली खाँ को बियो॥
पुनि सैद अनवर खाँ समुद्दर खाँ सँभारी तेग है।
मंजूर तैयब तरब अरबनि यादगारो बेग है॥
सरदार बारहें बार रुस्तमदस्त सैद अनेग है।
ये सैद अबदुल्लाह खाँन रिकाब तेग फते गहै॥
इत कियो हांकि हलाक दूनौ आनि उन आगो लियो।
बलवान कोकिलताशखाँ तसु बीर आजम खाँ कियो॥
फिरि सैद राजे खान अबदुल समुदलीखाँ हरखियो।
नौ शेर खान जुझार अबुलगफार हाँक तहाँ दियो॥
कल लेन देत न रहकले हथनाल घन घुरनाल है।
तूफान कहर तुफंग की फहरान बान विशाल है॥
तहँ तीर सलभ-समूह-सम सुरलोक तर सरजाल है।
असमान भानु बिमान गो रुकि भयो धुंधूकाल है॥
तब बीर बीर बिरीं बिरे मनु गहबरे भट भट भिरे।
बजि उठो मारू मारु मारु पुकार करि करि मुरु भिरे॥
बानैत गब्बी है अरब्बी बीर गब्बी कर थिरे।
तहँ होत हूह फकाफकी फर मुख न काहू के फिरे॥
तब गह्यो कुतबुलमुलुक के बर उतरि कोकिलताश खाँ।
बंगश महम्मद खाँ इतै उत बीर आजमखान खाँ॥
इत सूर सादीखान उत नौशेरीखाँ उनकीक खाँ।
भट भिरे एकहिं एक जे बबिरी बिरे दूहूँ पखा॥
उत सैद राजेखान अबदुस्समुअली बागैं लियो।
इहिं ओर राजा रतनचंद गयंद चढ़ि रेला कियो॥
सरदार इत उत के भिरे रन लत्थ पत्थनि के बियो।
तरवारि तीर तुफंग सांगि कटार कै बर बरखियो॥
जय कृष्णदास दिवान निजमुद्दी अली खाँ को बढ़ो।
तब सैद अनवर खाँ समुंदर खान अगहर ह्वै कढ़ो॥

मंजूर तैयबतरब साहबराय रोस महा मढ़ो।
लखि पलनि कुतबुलमुलुक की सब पिलत रनरस रुचि चढ़ो ॥
चहुँ ओर फौजनि फौज सो मन मौज मारु महा परी।
हथियार भार दुधार भर मनु मघा मेघन की झरी॥
झिरि झिलम कुंडि कुरी कुरी किरि घई बखतर की करी।
करि मारु मारु सँभारु यार सँभारु सुनियत ललकरी॥
घन घटा घोर घमड सो सम घुमड़ि फर फौजें रही।
धौंसे धोकारत गाज गहि तरवारि चमक छटा सही॥
झर तीर गोलिन वार गोला परत ओला से तहीं।
महि मच्ची मेदनि गूद कीच कृपान सैयद जब गहीं॥
मदभरे भ्रमत खरे अघाइ अघाइ करिवर थरि अरै।
सिर सरत श्रोनित धार मनहुँ पहार सों झरना झरै।
बढ़ि चली लोहुन की नदी लहरैं लखें कहि को तरै॥
तेहि तीर दलदल मास को बल ठान काहू को परै॥

कवित्त

फौजबल भुजबल मन मनसूबा बल,
श्रीधर हरफिन हरषि हहलावतो।
साहेब सरबुलंदखाँ नवाब करि करि,
पत्थ के से हत्थ महाभारथ मचावतो॥
जहाँ शाह मौजदी रफीउलकदर कूटि,
जेबर जुलफ़िकार खाँनै बाँधि ल्यावतो॥
हो तो हमराह लाहानूर के समर तो,
अजीम सों अजीम पातशाही कौन पावतो॥
सनमुख साहजू के साजि सेन चारों अँग,
सद अबदुल्लह खाँ बीर आयो बल में॥
बाजि उठ्यो मारु मारु मारु भोअँदोरजोर,
हांके फील बांके पेलि पैठे रेलि पल में॥

श्रीधर भनत दोसतलीखां अँगाइ धाइ,
मुन कै चलाये भट वैसे चलाचल में ॥
वाहवाह कहैं पातशाह औ सिपाह सबै,
वाह वाह रह्यो ह्वै सवत्त दुहूँ दल में ॥

छप्पय

श्रीधर दलबल प्रबल लखि लोकपाल रह लज्जि ।
महमद सालेह बीर जू चढ़त कटक बर सज्जि ॥
सज्जदल रनकज्ज जनप्पसमज्जज्जयबर ।
वंगग्गहीन मतंगग्गनि उतुंगग्गिरिवर ॥
रंगग्गति सुकुरंगाग्गबन तुरंगग्गति गुर ।
पच्छद्भर थिर कच्छक्कर बसुलच्छम्भरपुर ॥
लच्छ भट्ट टट्टिय चढ़्यो महमद सालेह ज्वान ।
धुजा वान झलकैं बजें उद्दद्धुनि घुर ध्वान ॥
उद्दद्धुनि धुर ध्वानद्धुकि सज युद्धज्जै भर ।
लक्खम्भट रण दुक्खक्खुमसुवियक्खक्कैं कर ॥
वारव्वलिय उछारम्भरिक्खग बाहव्वल किय ।
वानब्बिकट कमान कठिन कृपान द्दुर लिय ॥
कर लिय खग कोप्यो बली महमद साले ज्वान ।
अरि के बढ़ गढ़ मढनि पर कियेउ सुकोपि पयान ॥
कोपप्पकरि पयानप्पथि घन ध्वान द्धलकत ।
लच्छ च्छहरि बरच्छ च्छबिवर स्वच्छ च्छलकत ॥
युद्ध ज्जुरत सक्रुद्धम्भट रण उद्ध द्धमकिय ।
बाहक बलिय उछाह भरि खग बाहव्वल किय ॥
खग्ग बाह बलकिय बली महमद सालेह बीर ।
दुवन ठट्ट कट्टिय भखो श्रोनन्नद भरि नीर ॥
श्रोनन्नद भरि नीर भरित गँभीर झलकत ।
लुत्थत्थिरन उलत्थज्जलजिय जुत्थत्थलकत ॥

बंचच्चलननगी चच्चल हर कीचच्चभकत।
मुंड भ्भरि करि कुम्भभ्भभरत सुग्रभ्भभ्भभकत॥
महमद सालेह वीर कोपि भारी रन मड़्यो।
अरि की प्रतन प्रचंड खंड खंडन करि खंडेउ॥
गीध गूद वेताल मास हर मुंडमाल लिय।
रुहिरय रुहिर अपार पाइ भैरव गलगज्जिय॥
तकि शुत्रु सूर को ग्रास कर श्रोनसिंधु गज्जन कियो।
लखि परव कृपानी रावरी मनहुँ दान उत्तम दियो॥

कवित्त

फौजनि की घटा की घमंड घोर घेरु करि।
मौज दीन मघवा के मन में उछाह भो॥
तोप गरजत तरवारि बीजु तरजत।
बरषत बानिन अचल चार्‌यो राह भो॥
तब गिरिवर कर धरि गिरिवरधर।
श्रीधर भनत ब्रज मंडल की छाँह भो॥
अब गिरिधर लाल वहादुर वीर।
समसेर गहि कर पातसाही को पनाह भो॥
मार्‌यो जोर जंग रंग आजम अजीम जू सों।
गालिब गनीम आयो महमद गरूर है॥
श्रीधर सर बुलंद खाँ नवाब दौर कै।
हिरौलही हटायो कीनों चमूँ चकाचूर है॥
मारि खानि खालि में विदारि राउ दलपति।
गंजेउ जुलफिकार खान को गरूर है॥
वाह वाह करे पातशाह श्रो सिपाह रही।
सही समसेर तेरी शाह के हजूर है॥
जहाँदार शाह शमशेर जोरे जेर करि।
जहाँ शाहि रफीसान की ही कौन सी तथा॥

आजम के संगन से जंग महरायो त्यों।
जुलुफिकार खाँ को फेर लावतो वहै पथा॥
श्रीधर सर बुलंद खान किरवान धनी।
रुस्तम के काम कै बढ़ावतो बड़ी कथा॥
बारबार कहे पातशाह अपसोस करि।
हाय हमराह यो अजीम शाह के न था॥
श्रीधर फरूकसाहि मौजदीभिरे हैं दोऊ।
पूरो नेक कदम कों करम अलाह को॥
कीनो खगबाह मोगलनि के दलनि भो।
हिरोल की पनाह जाके कोप की पनाह को॥
गालिब गनीम गाज गंज मगरूरिन को।
गरब को दलिक गजब गुमराह को॥
देखै पातशाह उतशाह परयो निज दले।
वाह वाह करत सिपाह पातशाह कों॥
भारी पातशाह दोऊ आगरे अगारी लरैं।
धौंसन की दुहूँ ओर श्रीधर धुकार है॥
बाजै बीर बीर गोला बान तरवारि तीर।
बाजै सार सार होत सोर मार मार हैं॥
शेख खैरुल्लाह अलेख रन कीनो कैई दिनो।
जुगनि के भूखे मसहारिन अहार है॥
घाय खाए बेसुमार पैठि दल अरिकै सु।
मार तें गिराए बीर बाँके बेसुमार है॥
बखतरपोस पखरैत फील स्वारन की।
कारी घटा भारी ज्यों पयोद प्रलै काल को॥
श्रीधर भनत गोला बान सर झर भर।
बरखत थामैं को करैरी तरवाल को॥
दिलाजाक डपटि हलीम खाँ बरग जाइ।
दल मींडि मारयो मौजदीन बिकराल को॥

श्रोनित सलित तट नाचै प्रेत पहपट।
घट घट घूँटे कर खप्पर कपाल को॥
इत गल गाजि चढ़्यो फरुकसियर शाहि।
उत मौजदीन करि भारी भट भरती॥
तोप की डकारनि सों बहि हहकारनि सों।
धौंसा की धोकारनि धमकि उठी धरती॥
श्रीधर नवाब फरजंद खाँ सु जंग जुरे।
जोगिनी अघायो जुगजुगनि की बरती॥
हहर्यो हिरौल भीर गोल पै परी ही तूँ न।
करतो हिरौली तौ हिरौलै भीर परती॥
मार्यौ मौजदीनै फर बिफरि पलक बीच।
कीनो मौजदीन को कटकु अढ़ अढ़ है॥
मीडि गड़ आजम अजीम अजमति गढ़।
कूद्यो जटवारे के सकल मढ़ी मढ़ है॥
श्रीधर भनत महाराज श्री छबीलेराम।
तेरे बैरी बाँचो काहू सूर की न सढ़ है॥
जीत्यो च्यारो ओर मेरी फिकिर सो कीजे जोर।
ऐसे महाराजा सों गहति गाढ़ो गढ़ है॥
फिर मंड्यो श्रीधर छबीलेराम राजा।
पातशाहकों हिरोल पातशाहत् को पाहरू॥
तोप की तरापैं तोरि गोला को गुलेल गनि।
पेलि दल गार्यो मौजदीनै गहि गाहरू॥
च्चके हरि हर बंभ दोंष्य आतपत्त थंभ।
जैत रनखंभ बीरं विक्रम उछाहरू॥
सुरुखरू आप भयो आबरू दिलीस पायो।
माहरू रफीक भो मुखालिफ सियाहरू॥
मालनि सों भाला भिर्यो बरछा सों बरछानि।
सरे समसेर समसेरनि सुखंग में॥

तीरन को कीनो तन तीरन तुनीर तोरु।
तोरादार जोरन न पावत सुफंग मैं॥
जंग सुलतानी मैं कहानी कैसो कीनो काम।
श्रीधर छबीलेराम राजा रनरंग मैं॥
साढ़े तीनि हाथ कद दसहथा हाथी चढ्यो।
दोई हाथ होत हैं हजार हाथ जंग मैं॥
श्रीधर अवाई देषि फरूकसियर जू की।
आयो मत्त मौजदीं अनेक अभिलाख कै॥
धरिकु घमंड घोर माच्यो गइ मुरि बागैं।
अड़ियो छबीलेराम राजा मन माख कै॥
मारि पर दल हरखायो जूथ ज़ोगिनी को।
करत बड़ाई सिवासंक रहि साख कै॥
एकै वीर कैयो लाखैं एक के न आन्यो मन।
एक ही गनत कैयो लाख कैयो लाख कै॥
माच्यो जोर जंग दुहूँ ओर पातशाहीन सों।
उत तें उमड़ि दल मौजदीं को धायो है॥
आजम खाँ जू के संग शाहकी नजरि आगें।
सैद सुलतान जहाँ जग तें जगायो है॥
श्रीधर सुकवि तीर तरल तुफंग सों।
सितारा देखो चुनि सरदारनि गिरायो है॥
खाली कीनीं पल में अमारी हौदा हाथिन को।
धोखो होत यामें स्वार अयो कै न आयो है॥
फरूकसियर शाहि जहांदार शाहि दोऊ।
आगरे अगारी अरे पातसाही हेत मैं॥
श्रीधर बजत मारू बाजे बाजे बीरन के।
मुरि गईं बागैं रहे केतक न चेत मैं॥
अंगद सो अड़ो पातशाहति पलट डारयो।
एवी एतो आजम खाँ सबल बनैत मैं॥

महा हुव भारत की कमनैती पारथ की।
जैसो भीम भुज बल भाख्यो कुरखेत मैं॥
श्रीधर कृपान गहि मुसलेह खान रन।
कीनें घमसान यों मसान हहरात हैं॥
झुंडनि झँडूले प्रेत लोहू के प्रवाह परे।
लाती लरैं पौरै पेलि पियत अन्हात हैं॥
खोपरा लो खोपरिन फोरैं गलकत गदू।
पोरीलों पलासी खाल खैंचि खैंचि खात हैं॥
पाखर से खापरनि चहुवा चुरैलनि के।
चाइ भरे चर चर चपरि चबात हैं॥

छप्पय

भट्ट ठट्ट डट भट्ट भट्ट हरि आभट्टे हरि।
उद्धत जुद्धत कुद्ध सुद्ध गज्जत जिमि केहरि॥
बरि मुसल्लेह खां जलद्द उल्लद दल सज्जिय।
पख्खर पख्खर लख्ख स्याह सन्नाह समज्जिय॥
बल तडित तेग तरपत कड़कि रस वर श्रीधर धर कुरेउ।
तहँ गोलापत्थर बित्थरिय सो अरि मत्थर थत्थर थुरेऊ॥
मीर मुशर्रफ बीर कोपि भारी रन मँडेऊ।
अरि की पतन प्रचंड खंड खंडह करि खंडेउ॥
गीध गूद बेताल मासहर मुंडमाल लिय।
रूहिर प रूहिर अपार पाइ भैरव गल गज्जिय॥
तजि सत्तु सूर को ग्रास फर श्रोत सिंधु मज्जन किएउ।
लखि परत कृपानी रावरी मनहुँ दान उत्तम दिएउ॥

कवित्त

आयो मौजदीन उत इत तें फरुक साहि।
दुहूँ ओर सीर ललकारैं बीर बीर की॥
झरा झरी गोलनि की झरा झरी तेग की।
कटारिन की कराकरी तरातरी तीर की॥

श्रीधर बिलोयो दौरि बीरन की भीर रुंड।
मुंडन को मेरु श्रोन सलिता गँभीर की॥
बाह बाह करे पातसाहरु सिपाह सब।
देखो रे दिलेरी यारो मुशरफ मीर की॥
कोऊ ढूँढौ कोऊ वारौ काहू मैं न गुन भारो।
कोऊ वारनारी बस मन मैं न आयो है॥
सुन्दर सुजान सुजा सीलवंतु ओजवान।
दान पूरो एकै तोहि बिधि ने बनायो है॥
श्रीधर भनत सानी जलालदीं अकबर।
फरूकसियर पातशाह वर पायो है॥
बाल पातशाहति सोयंबर कर करति।
तोहि देखि रीझि जयमाल पहिरायो है॥
गेडी सों अराबो टारि भेड़ो सां बिदारि दल।
खल दल खूँदि कीनो छीन एजदीन को॥
धावा करि पूरब ते डावा डारि फौजनि को।
मीन सों पकरि लीनो शाहि मौजदीन को॥
श्रीधर भनत पातशाहनि को पातशाह।
फरुकसियर भो पनाह दूहूँ दीन को॥
मुलुक मुलुक दौरी फरदै फतूहनि को।
कांप्यो डरि गत्रर हरख गाढ्यो दीन को॥
साजि दल फरुकसियर पातशाहपति।
श्रीधर बढ़त जब सहज शिकार है॥
घुमरू सुभासा में अराम इसफामें कित।
सुनि जलधर धुनि धौंसा की धुकार है॥
इबसाने हहल खँधारिन के खल भल।
बलक बदकसान जान न रुका रहे॥
तारा दे केवारा दे केवारा दे के वारा देहि।
पौरि पौरि लंकपुर परत पुकार है॥

दक्खिन , दहेलि पेलि पच्छिम उदीची जीति ।
पूरब अपूरब हठालो हाथु लायो है ॥
श्रीधर शहनशाहि फरूकसियर नर ।
सातों दीप सरहद हिंद की मिलायो है ॥

——

पद्माकर

पद्माकर के जीवन के संबंध में कवि का निज का दिया हुआ कोई अंतरंग प्रमाण इनके किसी भी ग्रंथ में नहीं मिलता। केवल एक छंद में इन्होंने अपना कुछ व्यक्तिगत परिचय दिया है—

कवि का परिचय

भट्ट तिलंगाने को बुँदेलखंड बासी नृप,
सुजस प्रकासी पदुमाकर सुनामा हौं।
जोरत कवित्त छंद छप्पय अनेक भाँति,
संस्कृत प्राकृत पढ़ो जु गुन ग्रामा हौं॥
हय रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारु,
आखर लगाय लेत लाखन की सामा हौं।
मेरे जान मेरे तुम कान्ह हौ जगत सिंह,
तेरे जान तेरो वह विप्र मैं सुदामा हौं॥

यह कवित्त उनकी फुटकर रचनाओं में से है इसलिए यह बहुत प्रामाणिक नहीं माना जा सकता, परंतु इसमें कवि के संबंध में जो बातें कही गई हैं उनकी पुष्टि बहिरंग प्रमाणों से भी होती है और इसीलिए इसे प्रामाणिक मानने में कोई विशेष आपत्ति नहीं है। इस एक कवित्त से उनके जीवन के संबंध की प्रायः सभी मुख्य बातें, जैसे उनका भट्ट-वंशीय तैलंग ब्राह्मण होना, बुँदेलखंड में रहना, संस्कृत और प्राकृत का विद्वान् और हिंदी का यशस्वी कवि होना, राजा महाराजाओं के साथ राजसी ठाट से रहना और इनके प्रधान आश्रयदाता तत्कालीन जयपुर-नरेश जगतसिंह के साथ, जिनके लिये इन्होंने अपना सर्वप्रसिद्ध ग्रंथ "जगद्विनोद" बनाया था, इनकी कृष्ण और सुदामा की सी मैत्री होना आदि, जानी जा सकती है। इनके सिवा कवि के जीवन के संबंध की अन्य बातों का पता कुछ बाह्य प्रमाणों से चलता है।

इनका जन्म सं० १८१० में सागर में हुआ और सं० १८९० में वे कानपुर में गंगातट पर स्वर्गवासी हुए।[1] इनके पूर्वपुरुषों में से एक मधुकर भट्ट थे जो सं० १६१५ में नर्मदा तट पर गढ़पट्टन नामक स्थान में रहने लगे थे, और फिर वहाँ से व्रज में आये। इनके कुटुंब का एक भाग गोकुल में और दूसरा मथुरा में बस गया। आगे चलकर मथुरा में जो इनके पूर्वपुरुष रहते थे उनमें से कोई एक बाँदा चले आये। इनके पिता मोहनलाल भी संस्कृत के विद्वान् और हिंदी के कवि थे और इसके अतिरिक्त वे तांत्रिक भी बड़े भारी थे और इसी वजह से राजा रघुनाथ राव उपनाम 'राघोबा' इनको बहुत मानते थे। अस्तु

कहा जाता है कि पद्माकर बहुत थोड़ी अवस्था से ही कविता करने लग गये थे। १६ वर्ष की अवस्था का रचा हुआ उनका एक कवित्त प्रसिद्ध है :—

संपति सुमेरु की कुबेर की जु पावै ताहि,
तुरत ज़ुहावत बिलंब उर धारै ना।
कहै पद्माकर सुहेम हय हाथिन के,
हलके हजारन के बितर बिचारै ना॥
गंज गज बकस महीप रघुनाथ राय,
याहि गज़ धोखे कहूँ काहू दै डारै ना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,
गिरि तें गरे तें निज गोद तें उतारै ना॥

कवि के आश्रय-दाता

इससे प्रगट है कि पिता के संसर्ग से पद्माकर भी पहले रघुनाथ राव के दरबार में ही रहे, क्योंकि ये भी अपने पिता की भाँति मंत्रशास्त्र में प्रवीण हो गये थे, और इनकी इसी विद्या पर रीझ कर हमीरपुर जिले के अंतर्गत सुँगरा नामक ग्राम का निवासी नोने अर्जुनसिंह इनका चेला हो गया था। इसके उपरांत रघुनाथ राव से ये दो एक बार

[1] कुछ विद्वानों, मुख्यतः मिश्रबंधुओं की धारणा है कि पद्माकर का जन्म बाँदा में हुआ।

रूठ कर अन्य दरबारों में चले गये थे और बाद में गुँसाईं हिम्मत-बहादुर के यहाँ रहने लगे थे और उन्हीं की प्रशंसा में इन्होंने 'हिम्मत-बहादुर-बिरुदावली' की रचना की थी।

इतिहास से पता लगता है कि नोने अर्जुनसिंह सब प्रकार से हिम्मतबहादुर से अधिक प्रशंसा के पात्र थे और पद्माकर के शिष्य भी थे। पद्माकर ने इनकी श्रद्धा-भक्ति से संतुष्ट होकर एक लक्ष चंडीपाठ का अनुष्ठान कराकर अर्जुनसिंह के लिए एक तलवार सिद्ध की थी जिस पर वह सदा भरोसा रखते थे। ये पहले चरखारी नरेश खुमानसिंह की सेवा में थे पर बाद में किसी कारणवश अनबन हो जाने पर ये बाँदा-नरेश गुमानसिंह के यहाँ चले गये थे। इसी अवसर पर हिम्मतबहादुर और करामात खाँ ने बुंदेलखंड पर चढ़ाई की और तेंदवारी के मैदान में बाँदेवाले गुमानसिंह ने उनका सामना किया। इस युद्ध में अर्जुनसिंह ने बुरी तरह हिम्मतबहादुर और करामत को नीचा दिखाया था। अर्जुनसिंह ने एक दूसरे युद्ध में चरखारी के खुमानसिंह को हराया और उसे मार भी डाला। अर्जुनसिंह को तीसरी विजय 'गद्योरा' की लड़ाई में मिली जिससे पन्ना राज्य का बहुत सा हिस्सा इनके हाथ लगा। यह युद्ध बड़ा भयानक था। इसमें मध्यप्रान्त के प्रायः सब रजवाड़े भीतरी कलह के कारण आपस ही में लड़ मरे; इस युद्ध को बुंदेलखंड का महाभारत कहते हैं। इसमें अर्जुनसिंह को अठारह घाव लगे थे। कहते हैं कि किसी महात्मा ने अर्जुनसिंह से यह भविष्यवाणी की थी कि तुम तीन युद्ध जीतोगे और अंत में अपने ही आत्मीयों के हाथ तुम्हारी मृत्यु होगी। तीन युद्ध तो ये अब तक जीत चुके थे। अंतिम युद्ध में बुँदेलखंड के मुख्य मुख्य वीर काम आ चुके थे और यद्यपि इसमें अर्जुनसिंह की विजय हुई थी पर इनकी सैन्यशक्ति बहुत दुर्बल हो गई थी और इनके सहायक नहीं के बराबर थे। हिम्मतबहादुर बहुत दिन से इस प्रकार के अवसर की ताक में थे, उन्होंने पहले दतिया जीत कर वहाँ से चौथ वसूल की, मोठ का परगना भी दबा लिया पर बाँदे पर अकेले चढ़ाई करने की हिम्मत न पड़ी इसलिए नवाब अलीबहादुर को पत्र लिख कर बुलाया और

उसे बाँदा का नवाब बनाने का प्रलोभन दिया। अंत में दोनों की सम्मिलित सेना के सामने अर्जुनसिंह के मुट्ठी भर आदमी क्या कर सकते थे। पर वे अंत तक लड़े और अर्जुनसिंह का भी शरीर-पतन इसी युद्ध में हुआ पर हिम्मतबहादुर के हाथों नहीं जैसा कि पद्माकर ने लिखा है। उनकी मृत्यु उन्हीं के कुछ आत्मीयों के हाथ से हुई जो पहले इनके साथ ही चरखारी नरेश के यहाँ नौकर थे पर जो बाद में उनके साथ ही अर्जुनसिंह के शत्रु हो गए थे और बदला लेने के विचार से हिम्मतबहादुर की फौज में भर्ती हो गए थे। पद्माकर ने हिम्मतबहादुर के हाथों इनकी मृत्यु शायद इसलिए लिख दी कि वही उस सेना के नायक थे।

ऐसी अवस्था में यह बात बड़े आश्चर्य की है कि पद्माकर ने अर्जुनसिंह को विरुदावली न लिख कर हिम्मतबहादुर की क्यों लिखी जब कि अर्जुनसिंह इनके बड़े प्रिय शिष्य थे। इतिहास या हिम्मतबहादुर बिरुदावलो किसी से भी पद्माकर के इस अनुचित पक्षपात का कारण नहीं दृष्टिगोचर होता। इससे एक यही निष्कर्ष अनुमान की सहायता से निकाला जा सकता है कि ये द्रव्यलोलुप अधिक रहे होंगे और जो इन्हें दान और ऐश्वर्य से अधिक संतुष्ट कर देता होगा उसी की प्रशंसा कर देते होंगे।

हिम्मतबहादुर

प्रस्तुत संग्रह जिस ग्रंथ से लिया गया है वह गोसांई हिम्मतबहादुर की प्रशंसा में लिखा गया था इसलिए यहाँ इनका कुछ विशेष परिचय दे देना आवश्यक है। ये कुलपहाड़ के एक ब्राह्मण के पुत्र थे। जब ये बहुत छोटे थे तभी इनके पिता का देहांत हो गया। इनके एक बड़े भाई भी थे। इनकी माता आर्थिक क्लेश के कारण इनके भरण-पोषण में असमर्थ थीं, और इसलिए उसने अपने दोनों पुत्रों को राजेंद्र गिरि नामक एक गोसाँई को सौंप दिया और उसने इन दोनों को अपना चेला बनाया। उसने बड़े का नाम उमराव गिरि तथा छोटे का अनूप गिरि रक्खा। राजेंद्र गिरि को बाल्यकाल से ही लड़ने-भिड़ने और सेनापति बनने की प्रबल प्रवृत्ति

का परिचय मिला और तदनुसार उनकी युद्धशिक्षा और उचित भोजनादिक का उत्तम प्रबंध कर दिया गया। इसका फल यह हुआ कि १६ वर्ष की अवस्था तक वह सब प्रकार युद्धकला और अश्वारोहण में निपुण हो गए और भोजन का यह हाल था कि दो भैंसों के धारोष्ण दूध की आवश्यकता नित्य इनके जलपान के लिये होती थी। इसी समय के आस पास जब ये बीस साल के हुये तो इनके गुरु की मृत्यु हो गई और ये लखनऊ जाकर नवाब शुजाउद्दौला की फ़ौज में भर्ती हो गए। और उसी ने इनके किसी विशेष साहस के काम से संतुष्ट हो इनको 'हिम्मतबहादुर' की पदवी दी थी, और तब से ये इसी नाम से प्रसिद्ध हैं। सं० १८५० के बक्सर के प्रसिद्ध युद्ध में जो नवाब और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच हुआ था, इन्होंने बड़ी वीरता दिखा कर नवाब की जान बचाई थी और इससे प्रसन्न होकर नवाब ने इन्हें 'सिकंदरा' और 'बिंदकी' नाम के परगने जागीर में दिए थे।

इसके कुछ ही दिन बाद नवाब ने इनकी और करामत खाँ की मातहती में एक फौज बाँदा जीतने के लिए भेजी। बाँदा के अधिपति उन दिनों गुमानसिंह थे और उनके सेनापति पद्माकर के प्रिय शिष्य नोने अर्जुनसिंह थे। इस युद्ध में हिम्मतबहादुर की गहरी हार हुई जैसा कि आगे कहा जा चुका है। इसके कुछ ही दिन बाद 'गद्योरा' के रणक्षेत्र में बुँदेलखंड के रजवाड़ों का महाभारत हुआ और इस युद्ध में नोने अर्जुनसिंह विजयी होते हुये भी किस प्रकार शक्तिहीन हो गये थे यह भी कहा जा चुका है। इसके बाद अवसर देख कर हिम्मतबहादुर ने अली बहादुर को बुलाकर अपनी और उसकी कुल मिला कर लगभग ४०,००० सेना की सहायता से बड़ी कायरतापूर्वक अर्जुनसिंह का बध करवाया। यह लड़ाई अ जयगढ़ और बनगाँव के बीच वाले मैदान में हुई थी। कहा जाता है कि अर्जुनसिंह के दीक्षागुरु पद्माकर ने भी इस अवसर पर हिम्मतबहादुर के साथ रह कर यह लड़ाई अपनी आँखों देखी थी। इसका विस्तृत विवरण उन्होंने अपने ग्रंथ में दिया, और इसी का कुछ अंश प्रस्तुत संग्रह में दिया गया है।

इस घटना के बाद हिम्मतबहादुर अधिक दिन जीवित न रह सके। अली बहादुर ने अपने वचनानुसार विजित देश का कुछ अंश इनको दे दिया था पर यह बात अलीबहादुर के पुत्र शमशेर बहादुर को बुरी लगी और इसने उनसे वह दी हुई जागीर लेनी चाही। इस पर हिम्मत-बहादुर इन सबसे बिगड़ खड़ा हुआ। शुजाउद्दौला का साथ यह बहुत दिन पहले ही से छोड़ चुका था। अब उसने ईस्ट इण्डिया कंपनी से सहायता की प्रार्थना की और विजित देश का कुछ भाग कंपनी को देने का वचन दिया। अंग्रेजों ने तुरंत हिम्मतबहादुर की सहायता से शमशेर बहादुर को अपनी अधीनता स्वीकार करने पर विवश किया और बाद में हिम्मतबहादुर को भी अयोग्य बताकर विजित देश की रक्षा का प्रबंध अपने हाथ में ले लिया।

हिम्मतबहादुर की मृत्यु कालिंजर दुर्ग के अवरोध के समय हुई। अलीबहादुर के साथ हिम्मतबहादुर तीन वर्ष तक इस किले को घेरे रहा पर विजय प्राप्त न कर सका और अंत में इसी घेरे में उसके प्राण गये। कहते हैं शेष दिनों इनका पतन भी हो गया था। गुसाईं लोग विवाह नहीं करते, अखंड ब्रह्मचर्य इनका प्रण रहता है। पर इन दोनों ही भाइयों ने वेश्याएँ रख ली थीं और उनसे इनके बहुत से वंशधर भी हुए।

पद्माकर ने जितने ग्रंथ लिखे हैं उनमें वीररस-प्रधान यही एक हिम्मतबहादुर बिरुदावली है। इसके रचनाकाल का ठीक पता अभी तक नहीं लग सका है। इस ग्रंथ में उन्होंने हिम्मतबहादुर और अर्जुनसिंह के बनगाँव वाले युद्ध की तिथि दी है;—

हिम्मतबहादुर बिरुदावली

संवत अठारह सै सुनौ, उनचास अधिक हिये गुनौ।
बैसाख बदि तिथि द्वादसी, बुधवार जुत यह चादरी॥

अर्थात् सं० १८४९ के वैसाख मास में यह युद्ध आरंभ हुआ था और उस समय पद्माकर भी उनके साथ थे और सं० १८५६ तक उन्हीं के साथ रहे। इस प्रकार यह

रचनाकाल

निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस ग्रंथ की रचना सं० १८४९ और सं० १८५६ के बीच में हुई होगी।

इस ग्रंथ में क्या है इसके संबंध में पर्याप्त सूचना ऊपर के वर्णनों से मिल सकती है। यहाँ केवल दो-एक बातें और कहनी हैं। इस ग्रंथ में शुजाउद्दौला और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच बक्सर के युद्ध का भी वर्णन है, और इस लिए इसका कुछ ऐतिहासिक महत्त्व भी है। इसमें दो सौ बारह पद हैं और पाँच सर्गों में बँटा हुआ है। प्रत्येक के अंत में एक हरिगीतिका छंद है जिसकी अंतिम दो पंक्तियाँ सब में एक समान हैं, यथा—

पृथुरिति नित्त सुवित्त दै, जग जित्ति कित्ति अनूप की।
बर बरनिये बिरुदावली, हिम्मतबहादुर भूप की॥

पहले सर्ग में केवल मंगलाचरण के दो पद हैं, जिनमें 'यदुवंशमणि' श्रीकृष्ण की वंदना करते हुए उनसे अपने आश्रयदाता हिम्मतबहादुर को विजय देने के लिए प्रार्थना की गई है। दूसरे सर्ग में चरितनायक की बहुत बढ़ा चढ़ा कर प्रशंसा की गई है और कहा गया है कि इन्होंने गूजरों को परास्त कर बुँदेलखंड पर चढ़ाई की और दतिया और महाराज छत्रसाल के राज्यों पर अधिकार कर लिया। इसके अनंतर पद्माकर का कहना है कि हिम्मतबहादुर ने अर्जुनसिंह को घेर लिया जिसने अनेक राजाओं को परास्त किया था और जिससे बादशाह तक डरते थे। परंतु कवि इसके पहले के युद्ध के प्रसंग को, जिसमें हिम्मतबहादुर अर्जुनसिंह से बुरी तरह हार कर भाग गये थे, बिलकुल साफ उड़ा दिया गया और साथ ही साथ मरहठों के सूबेदार अली बहादुर का भी उल्लेख कहीं-कहीं किया गया है। यह वही अली बहादुर हैं जिनके विषय में ऊपर कहा जा चुका है और जिनकी सहायता से हिम्मतबहादुर अर्जुनसिंह से लड़ने की हिम्मत कर सके थे। इस युद्ध का वर्णन कवि ने बड़ा सजीव किया है और युद्धारंभ का काल भी दे दिया है (सं० १८४९) जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है। वर्णन शैली देखने से स्पष्ट प्रतीत हो जाता है कि कवि अपनी आँखों देखी घटना का वर्णन कर

रहा है। दोनों पक्षों की सेनाओं का बड़ा हृदयग्राही वर्णन है। सबसे बड़ा इस ग्रंथ का चौथा सर्ग है जिसमें दोनों दल के वीरों के घोर युद्ध का वर्णन है। पाँचवें में हिम्मतबहादुर के हाथ अर्जुनसिंह की वीरगति के प्राप्त होने का वर्णन है।

इस ग्रंथ की भाषा मिश्रबंधुओं के अनुसार प्राकृतमिश्रित ब्रजभाषा है, पर प्राकृतमिश्रित न कहकर हम उसे पुरानी हिंदीमिश्रित कहना अधिक ठीक समझते हैं। कहीं-कहीं अप्रचलित शब्दों और मुहाविरों का प्रयोग करने का पद्माकर को रोग सा था। शब्दों को कभी-कभी ऐसी बुरी तरह तोड़-मरोड़ कर रखते थे कि उनके पूर्व रूप या शुद्ध रूप का अनुमान करना कठिन हो जाता है। इनका यह दोष हिम्मतबहादुर विरुदावली में विशेषरूप से विद्यमान है।

कवि पद्माकर के अन्य ग्रंथों की रचनाओं को देखने से यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि यह अच्छी भाषा लिखना जानते थे, भाषा और भाव के सामंजस्य को समझते थे और चेष्टा करने पर प्रथम श्रेणी की रचना करने की प्रतिभा रखते थे। उनमें सरल, मधुर और प्रचलित शब्दों के चुनने की क्षमता थी, जिन शब्दों का सर्वसाधारण को परिचय है, जिनका प्रचार अधिक है, जिनमें कवि के यथार्थ भाव को श्रोता के हृदय में जगाने की शक्ति है तथा साथ ही जिनमें संगीत की मात्रा भी पर्याप्त हो, ऐसे शब्दों की पद्माकर की रचना में कमी नहीं है। पर साथ ही पद्माकर की ऐसी रचना भी पर्याप्त परिमाण में मिलती है जिसको कि बिलकुल साधारण श्रेणी की कविता कह सकते हैं। हिम्मत-बहादुर बिरुदावली में इसी प्रकार की रचना का प्राधान्य है।

पद्माकर को अनुप्रास से बहुत ही प्रेम था। इसके लिए उन्होंने शब्दों को विकृत भी कर दिया है। यह दोष उनके अन्य ग्रंथों की अपेक्षा हिम्मतबहादुर-बिरुदावली में अधिक परिमाण में मिलता है।

भावों के चित्रण में पद्माकर को अधिक सफलता नहीं मिली है पर इतना अवश्य हुआ है कि जिस प्रकार के भावों को उन्होंने उठाया है उनका निर्वाह किसी प्रकार कर ही दिया है। कुछ ऐसे उच्च कोटि के

छंद भी पद्माकर की रचना में मिलते हैं जो अंतस्तल को भली भाँति स्पर्श करते हैं, परन्तु इस प्रकार की रचना हिम्मतबहादुर-बिरुदावली में बहुत कम देखने को मिलती है। ये वास्तव में शृङ्गार रस के कवि थे। और अलंकृत काल के आचार्य कवियों के अंतिम प्रतिनिधि माने जाते हैं। शृङ्गार रस के इनके कुछ छंद ऐसे भी मिलते हैं जो हिंदी साहित्य के सर्वोच्च शृङ्गारी कवियों की रचना के प्रतियोगिता कर सकते हैं पर साथ ही इनके बहुत से छंद बहुत साधारण ढंग के हैं। इन्हीं कारणों से कुछ लोगों की यह धारणा है कि पद्माकर में सर्वत्र परस्पर-विरोधिनी प्रवृत्ति का परिचय मिलता है। कहीं तो वह अत्यन्त उत्कृष्ट भाषा लिखते हैं और कहीं बहुत भद्दी, कहीं तो उनका भाव-चित्रण बहुत सजीव और उच्च कोटि का होता है और कहीं नितांत साधारण ढङ्ग का। इनका विचार-क्षेत्र परिमित है और भावों में गाम्भीर्य की मात्रा कम है। इनके पास भावों की कमी है क्योंकि जिन भावों या चित्रों का समावेश इन्होंने अपनी रचना में किया है वे प्रायः उसी रूप में पूर्ववर्ती कवियों द्वारा व्यवहृत हो चुके हैं।

हिम्मतबहादुर-बिरदावली

छप्पय

आन फिरत चहुँ चक्क धाक थक्कन गढ़ धुक्कहि।
लुक्कहि दुवन दिगंत जाइ जहँ तहँ तन मुक्कहिं॥
दुंदुभि धुनि सुनि धरि जलद मन मद तजि लज्जहिं।
भज्जहि खल दल बिकल सोक सागर महँ मज्जहिं॥
धनि राज इंद्रगिरि नृप सुवन उथपन थप्पन जग जयउ।
बर नृप अनूप गिरि भूप जब सुभट सेन सजत भयउ॥

हरिगीतिका

नृप धीर बीर बली चढ़्यो, सजि सेन समर सुखेल की।
सुनि बंब बीरन के बढ़ी, हिय हौस बर बगमेल की॥

पृथु रित्ति नित्त सुवित्त दै, जग जित्ति कित्ति अनूप की।
वर वरिनियैं बिरदावली, हिम्मत बहादुर भूप की॥

डिल्ला छंद

समर प्रबल दल दिग्ध उमंडि। दुंदुभि धुनि दिगमंडल मंडिय॥
घर्घरात घन तें अति धुक्कनि। भर्भरात अरि भजत सुलुक्किनि॥
उनमद दुरत घटनि छबि छज्जिय। जौन जलद पटलनि तकि तज्जिय॥
उच्च निसान गगन महँ डुल्लहिं। सुर बिमान झकझोरन भुल्लहिं॥
झलमलात। झूलन छबि ठानिय। बिजुल मनहु मेघ लपटानिय॥
अडत फेर अँडात उमंडत। झूमत झुकत गजत घुमि मंडत॥
उलहत मदन समुद्र मद गारत। गिरिवर गरद मरद करि डारत॥
सिंदूरनि सिर सुभग उमंगनि। उदयाचल रवि छबि छिति खंडिय॥
घनघनात गजघंट उमंगनि। सनसनात सुर श्रुति सुभ अंगनि॥
घुमड़ि चलत घुम्मत घन घोरत। सुंडन नघत झुण्ड झकझोरत॥
चलत मतंगनि तक्कि तमंकिय। पष्परैत हय हुडक हुमंकिय॥
सिर झारत न सहत मृग सोभनि। कहुँ कहुँ चलत छुवत छिति छोभनि॥
उड़त अमित गति करि करि ताछन। जीतत जनु कुलटान कटाछन॥
थिरकत थिरकि चलत अँग अंगनि। जीतत जुमकि पौन मग संगनि॥
पच्छ रहित जीतत उड़ि पच्छिय। अंतरिच्छ गति जिन अवलच्छिय॥
दिनन अमोल लोल गति चल्लहिं। विदित अमोल गोल दल मल्लहिं॥
वाग लेत अति लेत फलंगनि। जिमि हनुमत किय समुद उलंघनि॥
जिन पर चढ़त सिंधु ढिग लग्गहिं। मंडल फिरि फिरि उठत उमग्गहिं॥
पवन, प्रचंड चंड अति धावहिं। तदपि न तिनहिं नेक छ्वै पावहिं॥
तिन चढ़ि भट छबि छटन छलक्किय। रन उमङ्ग अँग अंग झलक्किय॥
उमड़ि अग्रवर पैदर दिन्ह्यउ। जित हठि प्रथम जुद्ध व्रत लिन्ह्यउ॥
बंदी जन विरदावलि बुल्लहिं। सुनत सुभट दृग कमल प्रफुल्लहिं॥
मानव सुरन अलापत ठढ्ढिय। वीर उरनि रस वीर सुबढ्ढिय॥
सार झलकि झलमल छवि उग्गिय। मानहु अमित भानु भुव उग्गिय॥

उमड़त दल छिति डग डग डुल्लत । कल्लोलनि बढ़ि समुद उच्छल्लत ॥
गढ़ धुक्कहिं गढ़पति उर कँपहिं । शत्रु सोक सागर महँ झंपहिं ॥
धूरि धुंध मंडित रवि मंडल । अकवकात अर्लकेस अखंडल ॥
थंभि न सकत भूमि धर दिक्करि । टुट्टत रद्द फटत नभ चिक्करि ॥

छप्पय

चिक्करि चिक्करि उठहिं दिक्क दिक्करि करनिन जुत ।
खल दल भज्जत लज्जि तज्जि हय गय दारा सुत ॥
संकत लंक अतंक वंक हंकनि हुडकारत ।
डग डग डुल्लत गव्वि सव्व पव्वयन सिधारत ॥
तहँ पदमाकर कविवरन इमि नृप अनूप गिरि जब चढ्यउ ।
तब अमित अराबो अखिल दल इक बार छुट्टत भयउ ॥

हरिगीतिका

छुट्टत भयउ इक बार जब, सब तोपखानौ तड़कि कै ।
टुट्टत भयउ गढ़ वृंद गढ़पति, भाजि गे सब सड़कि कै ॥
पृथुरित्ति नित्त सुबित्त दै जग, जित्ति कित्ति अनूप की ।
बर बरनिये बिरदावली, हिम्मत बहादुर भूप की ॥

भुजंगप्रयात छंद

तुमक्कैं तड़क्कैं धड़कैं महा हैं । प्रलै चिल्लिका सी झड़कैं जहाँ हैं ॥
खड़क्कैं खरी वैरि छाती भड़क्कैं । सड़क्कैं गये सिंधु मज्जै गड़क्कैं ॥
चलै मोल गोली अतोली सनंकैं । मनौ भौंर मीरैं उड़ातीं भनक्कैं ॥
चढ़ी आसमानै छई वे प्रमानैं । मनौ मेघमाला मिलै भासमानैं ॥
गिरै ते मही में जहीं भर्भराकैं । मनौ स्याम ओरे परैं झरझराकैं ॥
चलैं रामचंगी धरामे धमकैं । सुने ते अवाजैं बली वैरि संकैं ॥
तमंचे तहां वीर सच्चे छुड़ावैं । कसे वंक वानै निसानै उड़ावैं ॥
छुटी एक कालैं विसालैं जँजालैं । जगी जामगीं त्यौं चलैं ऊँटनालैं ॥
गजै नाजसीं छूटतीं त्यों गनालैं । सुनैं लज्जतीं गज्जती मेघमालैं ॥
चलों मूँगरी उच्च है आसमानै । मनौ फेरि स्वर्गैं चढ़े दिग्घ दानै ॥

परी एक वारै धमाधम धरा हैं। मनौ यह गिरी इंद्रहू की गदा है ॥
किधौं ये विमानन्न की चक्र झुंडैं। परी टूटि है कै बिराजै भसुंडैं ॥
छुटी है अचाकी महाबानवाली। उड़ी लै मनौ कोपि कै पन्नगाली ॥
खरी कुहकुहाती जुड़ाती नहीं हैं। चली हैं अनंतैं दिगंतैं दही हैं ॥
चली चद्दरैं त्यों मचे हैं धड़ा के। छड़ाके फड़ाके सड़ाके खड़ाके ॥
छुटे सेर बच्चे भजे बीर कच्चे। तजैं बालबच्चे फिरैं खात दच्चे ॥
छुटे सब्ब सिप्पे करैं दिग्घ टिप्पे। सबै शत्रु छिप्पे कहूँ हैं न दिप्पे ॥
करावीन छुट्टैं करैं बीर चुट्टैं। करी कंध टुट्टैं इतै उत्त बुट्टैं ॥
चली तोप धाँ धाँ धधाँ धाँइ जग्गी। धड़ाधड़ धड़ाधड़ धड़ा होन लग्गी ॥
झड़ाझड़ झड़ा बीर बांके छुड़ावैं। भड़ाभड़ भड़ाभड़ भड़ा त्यों मचावैं ॥
दगो यों अरावो सबै एक बारै। किधौ इंद्र कोप्यौ महावज्र डारै ॥
किधौं सिंधु सातौ सबै भर्भराने। प्रलै काल के मेघ कै घर्घराने ॥
सुनों जो अवाजैं सबै वैरि भाजैं। न लाजैं गहैं छोड़ि दीन्हीं समाजैं ॥
तजै पुत्र दारैं सम्हारैं न देहैं। गिरैं दौरि उट्ठैं भजैं फेरि जेहैं ॥
उलथ्थैं पलथ्थैं कलथ्थैं कराहैं। न पावैं कहूँ सोक सिंधून थाहै ॥
तजैं सुंदरी त्यों दरी में धसे हैं। तहाँ सिंह बघ्घानहू ने ग्रसे हैं ॥

छप्पय

छिति अति छज्जिय अत्र छत्र छाहन छबि छक्किय।
चहुव चक्र धक पक्क अरिन अकवक्क धरक्किय ॥
इक्क दुत्रन तजि धरनि सरन तुव चरन सु तक्किय।
हय गय पयदल छोड़ि छोड़ि सुख सागर नक्किय ॥
जय मग प्रताप जग्गव उमगि उथल पथल जल थल गयउ।
नृपमनि अनूप गिरि भूप जब निज दल बल हंकत भयउ ॥

छंद त्रिभंगी

तहँ दुहुँ दल उमड़े घन सम घुमड़े झुकि झुकि झुमड़े जोर भरे।
ताकि तग्ल तमंके हिम्मत हंके बीर बमंके रन उभरे ॥
बोलत रन करखा बाढ़त हरषा बानन वरषा होन लगी।
उलटारत मेलैं असिगन ठेलैं सीनन पेलैं रारि जगी ॥

बन्दी जन बुल्ले रोसन खुल्ले डग डग दुल्ले कादर हैं।
धौंसा धुन गज्जै दुहुँ दिसि बज्जे सुनि धुनि लज्जै बादर हैं॥
निसान सु फहरैं इत उत छहरैं पावक लहरैं सो लगतीं।
छुवती नकि नाका मनहु सलाका धुजा पताका नभ जगतीं॥
कढ़ि कोटन वारे वीर हँकारे न्यारे न्यारे अभिर परे।
किरवानन झारैं सुभट विदारैं नेकु न हारैं रोस भरे॥
कानन लौं तानैं गहि कंमानैं अरिन निसानैं सिर घालैं।
सूधे अहि पैठैं मुच्छन ऐठैं भुजन उमैंठें गहि ढालैं॥
अत्रनि को मूकैं घालि न चूकैं दै दै कूकैं कूदि परे।
गहि गरदन पटकैं नेकु न भटकैं झुकि झुकि झटकैं उमंग भरे॥
रन करत अड़ंगे सुभट उमंगे वैरिन वंगे करि झपटैं।
सीसन को टक्कर लेट उटक्कर घालत छक्कर लरि लपटैं॥
तहँ हथ्था हथ्थो मथ्था मथ्थी लथ्था पथ्थी माचि रही।
काटैं कर कट कट विकट सुभट भट कासो खट पट जात कही॥
गहि कठिन कटारी पेलत न्यारी रुधिर पनारी बमकि बहैं।
खंजर खिन खनकै ठेलत ठनकै तन सन सनि कै हिलगि रहैं॥
गहि गहिं पिसकब्जैं मरमन गब्जैं तकि तकि नब्जैं काटत हैं।
कंमर ते छूरे काटत पूरे रिपु तन रूरे काटत हैं॥
करि धक्का धक्की हक्का हक्की ठक्का ठक्की मुदित मची।
घन घोर घुमंडी रारि उमंडी किलकत चंडी निरखि नची॥
एकै गहि भाले करि मुख लाले सुभट उताले घालत हैं।
तोरत रिपु ताले आले आले रुधिर पनाले चालत हैं॥
झारत असि जुरि जे वीरन उरजे पुरजे पुरजे काटि करैं।
हथियारन लूटैं नेकु न हूटैं खल दल कूटैं लपटि लरैं॥
तहँ ढुक्का ढुक्की मुक्का मुक्की डुक्का डुक्की होन लगी।
रन इक्का इक्की झिक्का झिक्की फिक्का फिक्की जोर जगी॥
काटत चिलता हैं इमि असि बाहैं तिनहिं सराहैं वीर बड़े।
टूटैं कटि झिलमैं रिपु रन विलमै सोचत दिल में खड़े खड़े॥

ढालन के ढक्के लागत पक्के इत उत थक्के थरकत हैं।
इक इक्कन टक्के बँधे झमक्के तननि तमक्के तरकत हैं॥
ललकत फिर लपटे छत्तिन चपटे करि अरि चवटे पेरत हैं।
भट भुजन उखारत छिति पर डारत हँसि हुड़कारत हेरत हैं॥
ठोकत भुज दंडन उमड़ि उदंडन प्रबल प्रचंडन चाउ भरे।
करि खल दल खंडन बैरि बिहंडन नौऊ खंडन सुजस करे॥
दस्ताने करि करि धीरज धरि धरि जुद्ध उभरि भरि हंकत हैं।
पैठत दुरदन में रोषित रन में नेकु न मन में संकत हैं॥
निकसो तहँ खग्गैं उमड़ि उमग्गैं जग मग जग्गैं दहु दल मैं।
भाँतिन भाँतिन की बहु जातिन की अरि पांतिन की करि कल में॥
तह कढ़ीं सगरबी अरगिन चरबी चापट करबी सी काटैं।
जगि जोर जुनब्बैं फहरत फब्बैं सुंडन गब्बैं फर पाटैं॥
बिज्जुल सी चमकै धाइन घमकैं तीखन तमकैं बन्दर कीं।
बंदरी सी खग्गैं जगमग जग्गैं लपकत लग्गैं नहिं वर की॥
सोहैं सुभ सुरतीं घलत न मुरतीं रन में फुरती बीरन कौं।
लीलम तरवारैं झुकि झुकि झारैं तकि तकि मारैं धीरन कौं॥
गजकुंभ विदारैं सु लहरदारैं लहरनि धारैं विधि विधि की।
लखि लालूवारैं रिपुगन हारैं मोल विचारैं नव निधि की॥
तहँ धुरोसानी जग की जानी घलैं कृपानी चख चौंधैं।
निव्वाजहु खानी दल निधि खानी विज्जु समानी रन कौंधैं॥
असिवर नादोटैं घलत न लौटैं मुंडन मोटैं काटि करैं।
जर मानासाही भटन दुवाहीं झिलमनि बाहीं नहीं झरैं॥
सुभ समर सिरोही जगमग जोही निकसत सोही नागिन सी।
करकरी सुकत्ती तीखन तत्ती हनि रिपु छत्ती नहिं विनसी॥
गंजत गज दुरदा सहित बगुरदा गालिब गुरदा देखि परे।
तुरकन के तेगा तोरन तेगा सकल सुवेगा रुधिर भरे॥
जग जगी जिहाजी मंजुल माजी सूरन साजी सोभि रही।
दिपती दहयाई दोनौ धाई भटनि चलाई अति उमहीं॥

तहँ सु अलेमानी अवर न सानी सहित निसानी घलन लगीं ।
सु जुनेदहु खानी पूरित पानी दिपति दिखानी जगा जंगी ॥
दोनौं दिसी निसरी लखत न विसरी मंजुल मिसरी तरवारैं ।
तन तोरन रुरती गालिब्र गुपती झक झक झुकती झुकि झारैं ॥
हेरी जु हलब्बी सुंडन गब्बी सोस हलब्बी सी चमकैं ।
तह करत झपट्टे वीर सुभट्टे चहुँ दिसि पट्टे घम घमकैं ॥
घालत अति चांड़े गहि गहि गाड़े रिपु सिर भांड़े से जु हरैं ।
करि करि चित चोपैं रन पग रोपैं धरि धरि धोपैं धूम करैं ॥
जिनके अति भारे बखतर फारे दलनि दुधारे बहु निकसे ।
तहँ सु बरदमानी खड़ग पिहानी हर वरदानी हेरि हँसे ॥
चरबी जिन चाबी दबहिं न दाबी दिपति दुतावी देखि परैं ।
सुरि सुरत कहूँ ना उत्तम ऊना सब तैं दूना काट करैं ॥
छीलत जे काँचै रन में नाचै सुदम तमाचैं ओप धरैं ।
रंजित रन भूमी सु षड़ग रूमी रिपु सिर तूमी सी कतरैं ॥
असिवर अँगरेजैं घलि घलि तेजैं अरि गन भेजैं सुर पुर को ।
लखि फर्रूकसाही वीरन बाही खल भजि जाही दुर दुर को ॥
रिपुझलन झकोरैं मुख नहि मोरैं बखतर तोरैं तकब्बरी ।
इक एकन मारैं धरि ललकारै गहि तलवारैं अकब्बरी ॥
इमि बहु तरवारैं काढ़ि अपारैं सुजित विचारैं नहि आवैं ।
तिनके बहु खनके झिलमन झनके ठनकत ठनके तन तावैं ॥
बक चकैं चलावैं दुहु दिसि धावैं हयन कुदावैं फूल भरैं ।
गजदंत उपाटैं हौदा काटैं बांधि सपाटैं अति उभरे ॥
हत्थिन सों हत्था मथ्या मथ्थी रारि अकथ्थी करन लगे ।
जंजीरन घालैं सुंड उछालैं बांधत फालैं फर उमगे ॥
गहि गहि हय झटकैं दिशि दिशि फटकैं भू पर पटकैं नहिं लटकैं ।
पाइन सों पीसैं अरिगन मीसैं जब से दीसैं नहिं भटकैं ॥
प्रति गजनि उठेलैं दंतन ठेलैं है भट भेलैं जोर करैं ।
जुथ्थन सों जूटैं नेकु न हूटैं फिर फिर छूटैं फेर लरैं ॥

करि करि इन टक्कर हटत न थक्कर तन तकि तक्कर तोरत हैं।
मारे रनं मुंडन भाले भुंडन तऊ न सुंडन मोरत हैं॥
इमि कुंजर लपटैं दुहु दल दपटैं झुकि झुकि झपटैं झूमत हैं।
अरि पटल पटा से फारत खासे सुघन घटा से घूमत हैं॥
तहं अर्जुन बंका करि करि हंका दुरद निसंका हूलत हैं।
बैठो जु किलाएं मुच्छन ताएं रन छवि छाएं फूलत है॥
झारत हथियारन मारत वारन तन तरवारन लगत हँसैं।
पैरत भालन को सर जालन को असि घालन को धमकि धसैं॥
तहँ मची हकाहक भई जकाजक छिनक थकाथक होइ रही।
तब नृप अनूप गिरि सुभट सिंधु तिरि अर्जुन सों भिरि खड़ग गही॥
हय दाबि कन्हैया सुमिरि कँधैया सुगज कँधैया पर पहुँचो।
झारत तरवारै तकि तकि मारै प्रबल पमारै गहि कहुँचो॥
पटक्यो गज पर तें उमड़ि उभरतें अरि सिर धर तें काटि लियो।
रिपु रुंड धरा को अरपत ताको हरहिं हरा को मुंड दियो॥
लहि अर्जुन मत्था गिरिजा नत्था अमित अकत्था नचत भयो।
डम डमरू बजावै विरदनि गावै भूत नचावै छबिन छयो॥
किल किलकत चंडी लहि निज खंडी उमड़ि उमंडो हरषति हैं।
संग लै वैतालनि दै दै तालनि मज्जा जालनि करषति हैं॥
जुगिननि जमातीं हिय हरषातीं षद षद खातीं मासन को।
रूधिरन सों भरि भरि खप्पर धरि धरि नचती करि करि हासन को॥
बज्जत जय डंका गज्जत बंका भज्जत लंका लों अरिगे।
मन मानि अतंका करि सतसंका सिंधु सपंका तरि तरिगे॥
नृप करि इमि रारनि लरि तरवारनि मारि पमारनि फते लई।
लूटे बहु हय गय देत खलनि भय जग में जय जय सुधुनि भई॥

छप्पय

जय जय जय धुनि धन्य धन्य गज्जिय छिति छज्जिय।
फहरत सुजस निसान सान जय दुंदुभि बज्जिय॥

सोभहिं सुभट सपूत खाइ तन घाइ अतुल्ले।
बिमलि बसंतहिं पाइ मनहुँ कल किंसुक फुल्ले॥
तहँ पदमाकर कवि बरनि इमि रन उमंग सफ़जंग किय।
नृप मनि अनूप गिरि भूप जहँ सुख समूह सुफ़तूह लिय॥
सुभ सुख समूह फ़तूह लिय हिय मंजु मोदन सों भरै।
काली कपाली निस दिना नित नृपति की रच्छा करै॥
पृथुरित नित्त सुवित्त दै जग जित्ति कित्ति अनूप की।
वर वरनिये विरदावली हिम्मतबहादुर भूप की॥

———

सूदन

सूदन कवि की गणना हिंदी के वीर रस के अग्रगण्य कवियों के साथ तो होती ही है, पर कोई कोई तो चंद के बाद इन्हीं को वीर रस का सर्वोच्च कवि मानते हैं, और कदाचित् उनका कथन अतिशयोक्ति पूर्ण भी नहीं है। पर यह सब होते हुए भी खेद के साथ कहना पड़ता है कि इनकी जीवनी के संबंध में हिंदी-संसार को बहुत थोड़ी सूचना मिल सकी है। इन्होंने अपने ग्रंथ में अपने विषय में एक सोरठे में जो कुछ कहा है उससे केवल इतना ही ज्ञात होता है कि ये मथुरा निवासी माथुर ब्राह्मण थे, इनके पिता का नाम वसंत और इनका सूदन था। वह सोरठा इस प्रकार है :—

कवि-परिचय

मथुरापुर सुभ धाम, माथुर कुल उतपत्ति बर।
पिता बसंत सुनाम, सूदन जानहु सकल कवि॥

इनके जन्म और मृत्यु-काल का कुछ ठीक पता नहीं है। इनके ग्रंथ 'सुजान-चरित' में इनके आश्रयदाता सूरजमल उपनाम सुजानसिंह की सं० १८०२ से लेकर १८१० तक की लड़ाइयों का वर्णन है और इनकी रचना या वर्णनशैली देखने से यह अनुमान करना स्वाभाविक हो जाता है कि इन्होंने अपनी आँखों देखी घटनाओं का ही वर्णन किया है। इससे कम से कम यह निष्कर्ष तो निर्भय होकर निकाला जा सकता है कि ये महाशय सं० १८१० तक अवश्य ही जीवित थे। ग्रंथ की समाप्ति इस प्रकार यकायक हो जाती है जिससे यह स्पष्ट जान पड़ता है कि कवि की इच्छा उस समय तक के वृत्तांत को लिख कर कुछ आगे लिखने की थी, जो किसी कारण से पूरी न हो सकी और ग्रंथ अपूर्ण रह गया। सुजानसिंह की मृत्यु सं० १८२१ में शाहदरा में मुग़लों के हाथ हुई। सुजानचरित के अंतिम अंक (सप्तम जंग) में

सुजानसिंह के साथ मरहठों की लड़ाई के आरंभ होने के पहले का, अर्थात् लड़ाई की तैयारी का वृत्तांत दिया गया है और कवि के ईश्वर से चरितनायक की जय की प्रार्थना करने के बाद ही ग्रंथ समाप्त हो गया है। यह वृत्तांत सं० १८१० के लगभग का है। पर समाप्त होने पर भी कवि ने ग्रंथ की 'इति' नहीं की है क्योंकि प्रत्येक अंक के अंत में इन्होंने "भूपाल-पालक भूमिपति बदनेस नंद सुजान हैं" यह छंद लगाया है; परंतु अंत में न तो यह छंद ही लगाया गया है और न 'इति श्री' ही लगाई गई है। इतिहास से ज्ञात होता है कि इस लड़ाई में भी सुजानसिंह विजयी होकर लौटे थे, और यदि कोई घटना ऐसी न हो गई होती जिससे सूदन का आगे लिखना असंभव न हो जाता तो वह अवश्य ही लिखते। इससे एक यही निष्कर्ष निकलता है कि यदि सं० १८१० में सूदन के जीवन का नहीं तो कम से कम इनके रचनाकाल का अंत अवश्य ही हो गया होगा।

उपर्युक्त वृत्तांत के अतिरिक्त कवि के वैयक्तिक जीवन के संबंध में कुछ भी नहीं ज्ञात हो सका है। यह तो सभी जानते हैं कि सूदन सूरज-मल के आश्रय में भरतपुर दरबार के बहुत दिन तक राजकवि थे और ऐसी अवस्था में यह आशा की जा सकती थी कि भरतपुर रियासत के अधिकारियों से या कवि के वर्तमान वंशधरों से लिखा पढ़ी करने पर उनके संबंध में कुछ और बातें मालूम हों। इसी आशा से लाला सीता-राम जी ने भरतपुर के आयव्यय निरीक्षक पं० मायाशंकर जी से लिखा पढ़ी की थी परंतु वहाँ से कुछ ज्ञात न हो सका।

सुजानचरित के अतिरिक्त सूदन के किसी और ग्रंथ का पता नहीं चला है।

मिश्रबंधुओं के अनुसार सूदन का काल सं० १८११-१८३० तक है, और वे इनका कविताकाल सं० १८०२ सं० १८१० तक मानते हैं। सूदन ने अपने ग्रंथ के आरंभ में छै छंदों में १७५ कवियों के नाम लिखकर उन्हें प्रणाम किया है। इससे यह स्पष्ट है कि ये कवि या तो सूदन के समकालीन या पूर्ववर्ती थे। इस तालिका से भी इनके रचनाकाल का

कुछ अनुमान हो सकता है। इस तालिका में प्रसिद्ध कवियों में चंद से लेकर भूषण और मतिराम तक के नाम आये हैं।

सुजानचरित

सूदन कवि के एकमात्र ग्रंथ सुजानचरित में भरतपुर नरेश सूरजमल उपनाम सुजानसिंह की मुख्य सात लड़ाइयों का वर्णन है। ये सातों लड़ाइयाँ सं० १८०२ सं० १८१० के अंदर हुई थीं। इस ग्रन्थ को नागरी प्रचारिणी सभा ने सं० १९८० में प्रकाशित किया था। इसके पहले संस्करण का संपादन बाबू राधाकृष्णदास ने किया था और दूसरे संशोधित संस्करण का संपादन बाबू ब्रजरत्नदास ने किया है। इस संस्करण की विशेषता यह है कि इस में बाबू ब्रजरत्नदास जी ने कवि-परिचय, सुजानसिंह का जीवनचरित्र और एक परिशिष्ट, जिसमें ग्रन्थ में आये हुए विकृत फ़ारसी और अरबी के शुद्ध रूप तथा अर्थ दिये गये हैं, बढ़ा दिया गया है।

यह ग्रंथ छपे २३४ पृष्ठों का है और जैसा कि पहले कहा गया है अपूर्ण जान पड़ता है।

इस ग्रंथ में सूदन ने प्रत्येक अंक की समाप्ति पर निम्नलिखित छंद लिखा है जिसमें तीन पद वही रहते हैं, परंतु चतुर्थ पद अध्याय में वर्णित कथा के अनुसार बदलता रहता है—

भुवपाल पालक भूमिपति बदनेस नंद सुजान है;
जानै दिलीदल दक्खिनी कीन्हें महा कलिकान है।
ताको चरित्र कछूक सूदन कह्यो छंद बनाय कै;
कहि देव ध्यान कवीश नृप कुल प्रथम अंक सुनाय कै।

पूरे ग्रंथ में सात जङ्ग, (जिनको सुविधा के लिये अध्याय कह सकते हैं।) और प्रत्येक जङ्ग में कई अंक हैं। अंकों की संख्या का कोई नियम नहीं रखा गया है, किसी में दो ही अंक हैं तो किसी में सात तक हैं।

ग्रंथारंभ में कवि ने मंगलाचरण के अनंतर पहले संस्कृत के कवियों तथा महर्षियों का गुण गान करके तब हिंदी के १७५ कवियों का

नामोल्लेख करके उनको प्रणाम किया है। इसके बाद एक सोरठे में अपना परिचय देकर कवि ने नृपवंश वर्णन आरंभ किया है। सूदन के अनुसार सुजानसिंह की उत्पत्ति यदुवंश[1] में हुई और इनके पूर्व-पुरुष 'भूरे' नाम के कोई 'भूप' थे :—

'जग उदित उद्धत जदुकुलन में भयौ भूरे भूप।
ताकौ भयौ सुत रौरिया सो रौरि हा के रूप॥'

भूरे से लेकर बदनेस तक सुजानसिंह के पूर्व-पुरुषों का नामोल्लेख किया गया है। यही बदनेस या बदनसिंह सुजानसिंह के पिता थे और इनके पितामह का नाम भावसिंह (भज्जा) था। सूदन ने बहुत से अन्य कवियों की भाँति वंशावली, राज्याभिषेक या राजधानी आदि के वर्णन में अधिक कालक्षेप नहीं किया है। नृपवंश वर्णन से लेकर सुजानसिंह के पहले जङ्ग की तैयारी के आरंभ तक का वृत्तांत सूदन ने केवल तीन या चार पृष्ठों में निपटा दिया है। इससे प्रतीत होता है कि

---

[1]भरतपुर के राजवंश की जाति के विषय में बड़ा मतभेद है। भारतवर्ष की प्रसिद्ध जातियों में जाटों की भी गणना है, जो पंजाब, सिंध, राजपुताने तथा उत्तर-प्रदेश के कुछ भागों में बसे हुए हैं। भिन्न-भिन्न प्रांतों में इनके भिन्न-भिन्न नाम पाए जाते हैं। भरतपुर के राजवंश के लोग भी जाट कहे जाते हैं पर सूदन ने कहीं भी इस राजवंश के संबंध में इस शब्द का प्रयोग नहीं किया है। यथार्थ में जाट राजपूतों के अंतर्गत हैं या नहीं इस संबन्ध में बहुत मतभेद हैं। इनके रस्म-रिवाज़ या आचार-विचार आदि तो राजपूतों से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं और कर्नल टाड इन्हें राजपूतों के ३६ वंशों के अंतर्गत मानते हैं। बहुत जगह राजपूतों और जाटों में विवाहादिक संबन्ध भी होते हैं पर कुछ स्थलों के जाटों में विधवा-विवाह और सगाई की भी रसम है। दूसरे कुछ लोग इन्हें एक प्रकार के अहीर भी कहते हैं। किसी-किसी का यह भी कहना है कि इनकी उत्पत्ति शिव जी की जटा से हुई, इसलिए ये 'जाट' कहलाए और कुछ लोगों का यह मत है कि ये यदुवंशी थे तथा 'जाट' शब्द 'जदु' या 'जादव' शब्द का ही अपभ्रंश है और सूदन का भी यही विश्वास जान पड़ता है।

इन्हें सुजानसिंह का पूरा जीवनचरित्र लिखना, जैसा कि ग्रंथ के नाम से विदित होता है, अभीष्ट नहीं था; इन्हें केवल अपने चरित्रनायक के युद्धों का वर्णन कर इनके शौर्य के गुणगान से मतलब था, और ऐसी अवस्था में ग्रंथ का नाम 'सुजानचरित' न होकर यदि 'सुजान-विरदावली' होता तो अच्छा रहता।

सूदन ने अपने ग्रंथ के आरंभ में भरतपुर के राजवंश का पूर्व इतिहास कुछ भी नहीं दिया है, इसलिये सूदन की कविता को समझने के लिये अन्य इतिहासों से जाटों का थोड़ा सा पूर्व वृत्तान्त दे देना अनुचित न होगा। इस जाति का उल्लेख पहले पहल शाहजहाँ के समय मिलता है जब मथुरा महाबन तथा कामों का फ़ौजदार मुर्शिद कुली तुर्कमान इस जाति की बस्तियों पर आक्रमण करते समय मारा गया था। धीरे-धीरे जाट लोग लूट-मार बहुत करने लगे, इनकी हिम्मत बढ़ती गई और क्रमशः अवस्था यहाँ तक पहुँची कि ये लोग जहाँ लूट मार करते वहाँ के पूरे मालिक बन बैठते थे। लड़ने में ये मुगल, राजपूत, सिख या मराठे किसी से भी कम न थे। औरंगजेब के समय में जब चारों ओर अशांति और युद्ध का साम्राज्य हो रहा था लोग इन्हें भाड़े पर लड़ने के लिए बुलाते थे। औरंगजेब के ही समय एक गोकुल जाट ने बहुत लूट मार मचाई और मथुरा के पास सैदाबाद को जलाकर नष्ट कर दिया। इन लोगों ने वहाँ के फ़ौजदार अब्दुन्नबी खाँ को लड़ाई में मार डाला और यह सुन औरंगजेब ने हसन अली खाँ की आधीनता में एक बड़ी फ़ौज गोकुल और उसके साथियों के दमन के लिए भेजी। फल यह हुआ कि गोकुल अपने एक मित्र के साथ पकड़ा गया और बादशाह ने दोनों को प्राणदंड दे दिया[1]। परंतु इनके मारे जाने के बाद जाटों का उपद्रव और भी बढ़ गया, सिख, राजपूत और मराठे ही मानो औरंगजेब को परेशान करने के लिए काफी न थे। बादशाह के दक्षिण जाने पर मौज़ा सिन सिन के भज्जा (जिन्हें सूदन भावसिंह कहते हैं) नामक जाट ने लूट मार

---

[1] मआसिर-उल्-उमरा पृष्ठ २३० ।

आरंभ कर दी। उसका आतंक इतना छा गया कि इधर उसका सामना करने को कोई तैयार न होता था। इसके तीन लड़के थे—चूड़ामणि, बदनसिंह और राजाराम। बादशाह को यह डर सवार हुआ कि उसकी अनुपस्थिति में जाट लोग कहीं दिल्ली पर अधिकार न कर लें। इसी भय से उसने दक्षिण से शाहज़ादा बेदार बख़्त तथा ख़ानजहाँ बहादुर ज़फ़रजंग को एक बड़ी सेना के साथ भेजा। सं० १७४५ में भज्जा का तृतीय पुत्र राजाराम मारा गया और जाटों का कुछ काल के लिए दमन हो गया। इसके कुछ ही समय बाद भज्जा की भी मृत्यु हुई और इसकी मृत्यु के उपरांत इसके दूसरे पुत्र चूड़ामणि ने फिर लूट मार का बाज़ार गर्म किया। इनके दमन के लिए भी कई बार सेना भेजी गई (सं० १७६२-६४) पर कुछ फल न हुआ। इनकी शक्ति बढ़ती ही गई। इधर औरंगज़ेब की भी मृत्यु हो गई और उत्तराधिकार संबंधी युद्ध जो कि मुग़लों के समय में एक अनिवार्य घटना सी हो गई थी आरंभ हुआ। चूड़ामणि ने इस युद्ध से अच्छा लाभ उठाया। ये पहले तो अपनी सेना कुछ हटा कर रखते थे पर बाद में हारी हुई सेना को बुरी तरह लूटते थे। इनके उपद्रवों से घबड़ा कर बहादुर शाह को दक्षिण से लौटने पर इन्हें मनसबदार बनाना पड़ा। परंतु इस घटना के थोड़े ही दिन बाद चूड़ामणि ने बारहा के सैयदों की ओर से मुहम्मद शाह तथा कुतूबुल मुल्क के युद्ध में शाही फ़ौज पर हमला किया और यमुना के किनारे का बहुत सा प्रांत अपने अधिकार में कर लिया। पर इतने ही से इन्हें संतोष न हुआ। भागती हुई पराजित सेना को इन्होंने रास्ते में अचानक छापा मार कर बुरी तरह लूटा और लड़ाई के सब सामान आदि हड़पकर चंपत हो गए। यह सब देखकर बादशाह के क्रोध का कुछ ठिकाना न रहा और उसने इन्हें दंड देने के लिए कई सरदारों के साथ सवाई जयसिंह को भेजा। चूड़ामणि ने इस बार अपनी पराजय निश्चित देख कर बारूदघर में आग लगा दी और उसी में जल मरे। परंतु इंपीरियल गज़ेटियर में इनकी मृत्यु का वृत्तांत और ही ढंग से लिखा हुआ है। उसके अनुसार सं० १७७६ में चूड़ामणि ने अपने पुत्र

से झगड़ कर हीरा खाकर आत्महत्या कर ली। मुहकम सिंह ने राजा होते ही बदन सिंह (सुजान सिंह के पिता) को क़ैद कर लिया पर जाटों के कहने पर उन्हें छोड़ देना पड़ा। तब बदन सिंह ने जयसिंह को चढ़ाई करने के लिए उभाड़ा। और यह बात सूदन ने भी स्वीकार की है कि जयसिंह की कृपा से ही जाटों का राज्य बदन सिंह को मिला—

"ज्यों जै साहि नरेस, करत कृपा तुव देस पै
त्यों ब्रजेस बदनेस करत रहौ हम पर कृपा ॥"

बदन सिंह ने अधिकार पाते ही भरतपुर के दुर्ग को इतना सुदृढ़ और सुसज्जित कराना आरंभ किया कि कुछ दिन के लिए वह प्रायः अजेय सा हो गया। परंतु किले की मरम्मत के कुछ ही दिन बाद इनकी आँख ख़राब हो चली और इन्हें राज्य भार अपने योग्य पुत्र सूरजमल उपनाम सुजान सिंह को सौंप देना पड़ा, और शेष दिन एकांतवास करते हुए सं० १८१२ में स्वर्ग सिधारे।

ग्रंथ का संक्षिप्त विवरण

सूदन के ग्रंथ का वास्तविक कथाभाग सुजान सिंह के राज्यभार पाने के बाद से आरंभ होता है। इनके समूचे ग्रंथ में सुजान सिंह की सात मुख्य लड़ाइयों के कारण, दोनों पक्ष की सेनाओं की तैयारी, प्रकृत युद्ध की आँखों देखी घटनाओं, तथा फलों का विशद वर्णन है।

पहले जंग में सं० १८०२ में इनके द्वारा असद खाँ की पराजय तथा मृत्यु का वर्णन है। यह इन्होंने स्वयं अपने निमित्त नहीं किया था वरन् नवाब फ़तेह अली की प्रार्थना से उनकी सहायता के लिए।

दूसरी जंग सं० १८०४ में इनके और तत्कालीन मरहठा सरदार मल्हार राव के बीच हुआ था, इसमें इन्होंने आमेर नरेश माधोसिंह की सहायता के लिए (जब उन पर दक्षिणिओं ने चढ़ाई की थी) ही भाग लिया था। इसमें भी सुजानसिंह की विजय रही।

तीसरे जंग में इन्होंने सलाबत खाँ बख्शी को परास्त किया। सं० १८०५ में यह युद्ध इन्हें अपनी रक्षा के लिए करना पड़ा था। सलाबत खाँ ने एक बड़ी सैन्य के साथ भरतपुर पर चढ़ाई की थी।

चौथे जंग (स० १८०६) में इन्होंने पठानों के परास्त करने में सफ़दरजंग की सहायता की थी।

पाँचवें जंग (सं० १८०६) में इन्होंने राय बहादुर सिंह बड़गूजर को परास्त किया था।

छठवें जंग (सं० १८१०) में इन्होंने दिल्ली लूटने में सफ़दर जंग की सहायता की। इस जंग में प्रसंगवश कवि ने अहमद शाह के समय तक का दिल्ली का संक्षिप्त इतिहास भी दिया है। इनका दिल्ली के राजवंशों के वर्णन का प्रसंग राजा शांतनु से आरंभ होता है। राजा शांतनु से लेकर जनमेजय तक का वृत्तांत देकर फिर इन्होंने चौहान वशीय पृथ्वी-राज तथा शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी के युद्धों का वर्णन किया है। इसके अनंतर पठानों के दो सौ वर्ष राज्य करने का उल्लेख करते हुए उन्होंने चग़ताई वंश के तैमूरलंग से लेकर अहमद शाह तक के बादशाहों के नाम तथा राज्यकाल आदि दिए हैं।

इस जंग के बाद सप्तम जंग सं० १८१० में आरम्भ होता है पर यह अपूर्ण रह गया है। यह युद्ध मरहठा सरदार मल्हार राव से हुआ था पर कवि ने दोनों ओर को फ़ौजों की तैयारी के वर्णन के बाद ही रचना समाप्त कर दी है। इतिहास से पता लगता है कि इस युद्ध में सुजान सिंह को मरहठों से संधि कर लेनी पड़ी थी। सं० १८१४ में अहमद शाह अबदाली ने इनके दुर्ग को घेर लिया था पर दैवात् उसकी सैन्य में ऐसी महामारी फैली कि उसे वहाँ से चला जाना पड़ा। अंत में सं० १८२१ में शाह आलम द्वितीय के समय में सुजान सिंह ने दिल्ली विजय करने की इच्छा से उस पर चढ़ाई की और इसी चढ़ाई में धोखे से अचानक ये वीरगति को प्राप्त हुए।

प्रस्तुत संग्रह में छठवीं लड़ाई के कुछ भाग दिए गए हैं।

सूदन की कविता

यह निर्णय करना कठिन है कि सूदन ने हिंदी की किस उपभाषा में अपनी कविता की। क्योंकि सुजानचरित में समय-समय पर ब्रजभाषा, खड़ी बोली, माड़वारी, राजस्थानी, पूरबी तथा पंजाबी आदि कई बोलियाँ अपनी छटा दिखला जाती हैं। दो एक उदाहरण देखिए।

(क) उस समय की दक्खिनी हिंदी या उर्दू तथा पंजाबी मिश्रित खड़ी बोली—

दोहा

साह जहानाबाद मैं, जद सैं यह आया।
तद सैं हुकुम हजूर दा नहिं एक बजाया॥

(ख) मारवाड़ी और राजस्थानी मिश्रित—

कौठे रह्या ठाकरां कि ठाकरां पधारया बीरा।
चाकराँ लारैं म्हें उभारे पग धाँवाँ छाँ॥
काकाजी कागला का अगार ओ जी बाईज्जी थे।
ल्याँवाँछाँ जी ल्यावाँ कोई आवाँ छाँ जी आवाँ छाँ॥

(ग) विशुद्ध उर्दू

दोहा

रब की रजा है हमैं सहना बजा है बख्त।
हिंदू का गजा है आया और तुरकानी का॥

(घ) पूरबी (प्रतापगढ़ी)

बबुआ न आवा मोर भैयन न पावा याक।
तुपक को न लावा गांठि डीबू आन द्यावा है॥
चाकरी की लकरी की फकरी विहानी कीन्ह।
मनई न कनई दिहाँन या बतावा है॥

इस प्रकार के अनेक उदाहरण इस ग्रंथ में देखने में आते हैं। जहाँ जिस प्रांत या जातिविशेष के मनुष्यों के विषय में सूदन को कुछ कहना होता वहाँ उसी प्रान्त की बोली का व्यवहार करना ये उत्तम समझते थे, परंतु कहना न होगा ग्रंथ में प्राधान्य ब्रजभाषा ही का है।

विविध प्रकार की बोलियों के साथ-साथ सूदन के ग्रंथ में केशव की भाँति छंद भी अनेक प्रकार के व्यवहृत हुए हैं, जिनमें छप्पय, पद्धरी, तोमर कवित्त, भुजंगी, हरगीत, दुपई, मुक्तादाम, नाराच, अनुगीत, अरिल्ल, निसानी, तोटक, पावकुलक, संजुता, दोहा तथा सोरठा आदि मुख्य हैं। छंदों के सम्बन्ध में इन्होंने यथासम्भव असावधानी कहीं नहीं की है।

जान पड़ता है सूदन काव्य में नाद के प्रभाव को रस के उद्रेक के संबंध में आवश्यकता से अधिक महत्त्व देते थे। जहाँ वे वास्तविक युद्ध का वर्णन करने लगते थे वहाँ प्रायः आधे-आधे महत्त्व पृष्ठ तक धाँयँ, धाँयँ, कड़ड़ड़, धड़ड़ड़ आदि अर्थशून्य शब्दों का ही प्रधान्य सा हो जाता है। उदाहरणस्वरूप—

स नँ नँ नँ नँ नँ नँ छुट्टियं सर जुट्टियं नहिं हट्टियं।
फ नँ नँ नँ नँ नँ नँ तन फुट्टियं उर हुट्टियं भुव लुट्टियं।
ख नँ नँ नँ नँ-नँ नँ घुट्टियं लगि बान सौं असि मुट्टियं।
धँ नँ नँ नँ नँ नँ नँ चुट्टियं भट मुट्टियं गर छुट्टियं।
घ द्ध द्धर भ भ्भ भ्भर भ्फ भभ्फ भभ्फर वैरही।
कक्कर पप्पप्पर तत्तत्तर ह्वै रही।

इस प्रकार के उदाहरण सुजान चरित में भरे पड़े हैं।

जो हो यह सब को मानना पड़ेगा कि सूदन ने वर्णन में सजीवता लाने में कोई बात उठा नहीं रखी है। इसी के लिए उन्होंने भिन्न-भिन्न बोलियों, छंदों, अनुकरणिक शब्दों आदि का इतना अधिक प्रयोग किया है। लड़ाई की तैयारी, फ़ौजों की सजावट, घुड़सवार, पैदल और तोपखाने आदि के युद्ध क्षेत्र में आगे बढ़ने, हारी हुई सेना के तितर-बितर होकर भागने और विजयी सेना के उसके पीछा करने तथा लूट-मार आदि के इनके द्वारा खींचे हुए दृश्य वास्तव में हिन्दी साहित्य में अद्वितीय कहे जा सकते हैं। दिल्ली की लूट के समय का वर्णन वास्तव में बड़ा हृदयग्राही हुआ है। इनके इस प्रकार के वर्णनों में यदि कोई खटकने वाली बात है तो यही कि ये जब किसी वस्तु के नाम गिनाने लगते हैं तो पढ़ने वालों का जी ऊब जाता है। दिल्ली के बाज़ार की शायद ही कोई चीज़ ऐसी हो जिसका नाम इन्होंने न गिनाया हो। लूट के समय दिल्ली की भिन्न जातियों के नर नारियों की घबड़ाहट और उनके रोने कलपने का वर्णन इन्होंने उन्हीं की भाषा में किया है। इससे इनके विभिन्न प्रांतों के नर नारियों के रहन सहन, स्वभाव तथा उनकी बोल चाल की भाषा के विस्तृत ज्ञान का पता

चलता है। किसी-किसी अंक में इन्होंने योद्धाओं में जो जोशीली और गम्भीर उक्तियाँ कहलवाई हैं वे वास्तव में बड़ी सारगर्भित हुई हैं।

इनके वर्णन के संबंध में दो बातें और कह देनी हैं। इनके किए हुए प्रायः सभी वर्णनों में प्रायः सर्वत्र सत्यप्रियता और निरंकुशता, जो कहीं-कहीं उद्दंडता का रूप भी धारण कर लेती है, प्रचुर परिमाण में देखने में आती हैं। इन्होंने अपने चरितनायक के शत्रुओं के भी गुण-गान मुक्तकंठ से किए हैं। उनमें यदि कोई प्रशंसनीय बातें होती थीं तो उनकी अवहेलना कर जाना या जान बूझ कर उनके महत्त्व को संकुचित करना या उनमें व्यर्थ के दोष ढूँढ़ना सूदन के स्वभाव के विरुद्ध था। इन बातों के अतिरिक्त हास्य रस के उदाहरण भी प्रायः देखने में आ जाते हैं। कहीं-कहीं इन्होंने रूपक भी अच्छे बाँधे हैं।

सुजान चरित्र

षष्ठ जंग

छप्पय

धरि सत रज तम रूप सृजति पालति संघारति।
आरत लखि सुरराज बिपति असुरन कौं पारति॥
धूम चंड अरु मुंड महिष रकता रज भंजति।
सिंभु निसुंभु चबाइ चारु दस लोकन रंजति॥
जाकी बिभूति पर ब्रह्म हू निरगुन तैं गुनमय बरनि।
मुनि देव मनुज सूदन रटत जयति जयति शंकर-घरनि॥

दोहा

गत पुरान सत बरष दस, मधुरितु माधव मास।
सूरज हित मनसूर कैं गह्यौ दिली पै गाँस॥

छप्पय

सप्त दीप कौ दीप दीप जंबू अति आगर।
नव खंडन नर खंड भर्थ नृप खंड उजागर॥

तासु मद्धि मधिदेस बेस देसनु की मनि गनि ।
मथुरा मंडल निकट पाँच पथ महि अनूप भनि ॥
हैं द्वीप खंड अरु देव बहु तन मैं ज्यौं तन सीस लहि ।
भाभोग नीति नर प्रीति जुत नाग नगर सुरबेस कहि ॥
तासु मद्धि परसिद्ध नागपुर संतन राजा ।
तनय तीन भए तासु भीष्म भुमि भारथ काजा ॥
तिहिं बिमात तें अनुज चित्र बपु बिय बिचित्र रज ।
जिहिं बालनु तैं भए अंध पांडुत्र सुबिदुर अज ॥
सत एक एक सुत अंध कै पंडव कै पाँचै भए ।
वृषपूत भीम अर्जुन नकुल सहदेव देवनु दए ॥

दोहा

पंडु मरयो मुनि श्राप तैं रहे पाँच हू पूत ।
अध नृपति तिनकौं दए पंच पथ्थ मजबूत ॥
पानीपथ सुनि पथ दुऔ बागीपथ्थ तिलपथ्थ ।
इंद्र पथ्थ पुर थप्पियौ पंडु पूत समरथ्थ ॥
देवलोक ज्यौं गगन मैं बलिपुर ज्यौं पाताल ।
इंद्रप्रस्थ त्यौं भूमि पै रच्यौ धर्म नरपाल ॥
स्वारथ कौं भारथ रच्यौ पारथ कृष्ण सहाइ ।
अंध बंस निरबंस करि गए हिमालय धाइ ॥
अर्जुन सुत अभिमन्यु की पतिनी गर्भ मँझार ।
कृष्ण कृपा तैं सो बच्यौ भयौ भूमि भरतार ॥
सो नृप तच्छक ने डस्यो श्रीशुक किया उधार ।
जन्मेजय ताकौ तनय बैर बहोरन हार ॥
इद्रपथ्थ यौं पंडुकुल भुगतीं बरस अनेक ।
फिरि आई चौहान कैं बिलसी धरैं बिबेक ॥

छंद पद्धरी

चहुँवान कस्यौ बहु बरष राज । प्रथिराज जुद्ध कीने दराज ॥
लिय सात बार गोरी सुबंध । पुनि भयौ भूपतिय नेह अंध ॥

बारह सै संवत अंत आइ। लीनी सहाब दिल्ली दबाइ ॥
रन पकरि प्रथीराजै सहाब। गज नई दुग्ग लै गौ सिताब ॥
तहँ गयौ भट्ट, बरदाइ चंद। नृप सहित साहि कीनौ निकंद ॥
तब सैं सु बढ़्यौ तुरकान घोर। रोजा निबाज भुव भई गोर ॥
पुनि भयौ साहि अल्लावदीन। दिल्ली भतार कर्तार कीन ॥
सत दोइ बरष भुगती पठान। पुनि भयौ चकत्ता साह आन ॥
तूरान भूमि तैं षग्ग जोर। तैमूर साहि आयौ कठोर ॥
ताकौ किरान पद भयौ साहि। मीराँ जु साहि ताको सराहि ॥
सुलतान मुहम्मद पुनि दिलीस। तिहिं अबूसैद बलबंड ईस ॥
हुव उमर सेख पुनि साहि चंड। बब्बर जु साहि ताकौ उदंड ॥
ताकौ जु हिमाऊँ साहि हूअ। तासौं पठान सौं भयौ जूह ॥
लीनी पठान दिल्ली छिड़ाइ। वह साहि हिमाऊँ गौ पलाइ ॥
पुनि भए दिलीपति सो पठान। दो सेर सलेमहु साहि जान ॥

दोहा

प्रगट हिमाऊँ कैं भयौ, अकबर साह उदंड।
तिन पठान मारे सबै, राज करयो अति चंड ॥

छंद पद्धरी

वह भयौ चकत्ता अति अमान। जिन जीती बसुधा निज क़बान ॥
ईरान और तूरान लीन। अरु फिरंगान सरहद्द कीन ॥
हबसान और खुरसान जीति। तिलँगान आपनी करी नीति ॥
किलवाँक साहि की आन मान। इसफाँह बजे जाके निसान ॥
बुगदाद जीतियौ बदकसान। अरबान और ईरान जान ॥
किय रूम साम आसाम जेर। डार्यौ कुसावहू कौं बखेर ॥
कसमीर जीति बहु नीर देस। दिय कोह काफहू में कलेस ॥
कहकह दिवाल दहदह प्रतापु। मरहट्ट ठट्ठ लिय साहि आपु ॥
मारू मलार सोरठ दबाइ। दच्छिन दिसाहि जीत्यौ बजाइ ॥
अंग बंग तिरलंग दाहि। अरु द्रविड़ देश लीनो उमाहि ॥
वह आठ काठ अरु घोर घाट। बंगाल गौड़ मगधीस डाट ॥

करनाटक और लीनी बराट । नद ब्रह्मपुत्र मार्यौ उचाट ॥
परबती भूप करि आप हथ्थ । बरफान देश लीन्यौ समथ्थ ॥
चौदह हजार भुव कौ समान । किय आन चकत्ता निज भुजान ॥
यौं कर्यौ राज अकबर उदंड । पंचास और द्वै बरसु चंड ॥
पुनि जहाँगीर हुव तासु पूत । दिल्ली जु साह उद्धत अभूत ॥
बाईस बरस बसुधाहि भोग । पंचत्तु पाइ हुव भूमि जोग ॥
सुत साहिजहाँ ताको दिलीस । तिन कियौ राज बरसै बतीस ॥
पुनि भयौ साहि औरंग साहि । जिन तुरक रीति कानी उमाहि ॥
पंचास बरस किय राज घोर । दिसि दच्छिन जाकी भई गोर ॥
पुनि भयौ बहादुर साह उद्ध । जिनिगहि कृपान किय बहुत जुद्ध ॥
किय पाँच बरस बसुधा सुभोग । लाहौर तख्त हुव भूमि जोग ॥
सुत भयौ मौजदी पातसाहि । एक बरस भूमि करि भोग ताहि ॥
पुनि भयौ साहि फर्रुक जु सेर । छः बरस राज कीनो सुबेर ॥
पुनि भयौ रफीदरजाति साहि । किय मास तीन प्रभुता धराहि ॥
पुनि साहजहाँ पतिसाह जान । वह चार मास भुव भोग मान ॥
पुनि भयौ साहि महमंद साहि । तिहिं तीस बरस किय राज चाहि ॥
जब साहि महम्मद तजे प्रान । सुत साहि अहम्मद भौ जवान ॥

दोहा

पातसाहि अहमंद कें, भौ बजीर मनसूर ।
पोता मलिक निजाम कौ बकसी भौ मगरूर ॥
तूरानी बकसी भयौ ईरानी सुवजीर ।
नाचाखी दोऊन मैं दिल्लीपति के तीर ॥

छंद नीसानी

एक रोज पतसाह दी बकसी लै मरजी ।
बिन वजीर दीवान मैं कीनी यह अरजी ॥
हजरत सफदर जंग मैं क्या अदब बजाया ।
नाजर फ़िदवी साहि का दै दगा खिपाया ॥

हो वजीर हिंदुवान दा यह इसम बढ़ाया।
नाहक उरझि पठान सैं भगना ठहराया॥
दौ मलाइ दुखनीन कौं सब मुलक लुटाया।
साहिजिहानाबाद मैं जद सैं यह आया॥
तद सैं हुकुम हजूर दा नहिं एक बजाया।
पोता मलिक निजाम दा जब यौं बतराया॥
सो सुनि के पातसाहि भी दिल में सब ल्याया।
तिसी वख्त मंसूर सैं यों कहि भिजवाया॥
जाना अपने मुलक कौं हजरत फुरमाया।
जद यौं सुना वजीर ने दिल में खुनसाया॥
तौ भी दिन दस बीस लौं दिल में नहिं लाया।
फेरि साहि मंसूर कौं अहदी लगवाया॥
साहिजिहानाबाद तें तदही कढ़वाया।
तूरानी मिलि साहिं सैं यौं बैर बढ़ाया॥
ईरानी मनसूर कौं पुर सैं कढ़वाया।
बड़ा कुँवर अरु काइदा मनसूर गँवाया॥
स्वासा लेत भुजंग ज्यौं उस रूप लखाया।
करि आपुस के बैर नूँ कहि कौन सिराया॥
जेहा खेलखेल नूँ तेहा फल पाया।
दिल्ली सैं बाहर हुवैं मनसूर रिसाया॥
जुजबी फौज निहारि कैं पुर मैं मँडराया।
अहंकार दिल में चढ्या तद ब्यौंत उपाया॥
जे रफ़ीक थे आपने तिनकौं बुलवाया।
पूरब सैं निज फौज नूँ जल्दी फुरमाया॥
चाकर मेरा है वही जो आवै धाया।
घासहरै कौ कुँवर भी फरचा करि आया॥
खबर पाइ मनसूर भी खुसियौं से छाया।
तिसी बुख्त मनसूर ने फरमान लिखाया॥

रहमति दै कहि आफरीं इलकाब बधाया।
कुँवर बहादुर आवना करि मेरा साया॥
तूरानी गलबा दिया मुझकौं अकुलाया।
इसी बख्त के वास्तैं इखलास बधाया॥
चाहौ मैंड़ी जिंदगी तौ आवौ धाया।
यौं लिख सफ़दर जंग ने फरमान पठाया॥
घास हरैं था कुँवर जी रनरङ्ग अठाया।
तिस काग़ज़ के बाँचतै सूरज मुसिक्याया॥
अपना बिरद सँभारिया दिल और न लाया।
अच्छी साइत देखि कै डंका लगवाया॥
सिंह जवाहर संग लै तदही चढ़ि धाया।
पंद्रह सहस सवार लै पैदल बहु भाया॥
आनि फ़रीदाबाद मैं डेरा करवाया।
फेरि कूँच करि दूसरा रविजा तट आया॥
तहँ फ़रजंद वजीर कैं मिलना ठहराया।

सोरठा

पुनि मिलि सिंह सुजान सफ़दरजंग वजीर सौं।
डेरा किए अमान खिदरबाग रविजा-तटहिं॥

कलहंस छंद

दिन दूसरैं मनसूर सूरज पास कौं।
दरबार ह्वै असवार सो इखलास कौं॥
लखिकैं वजीर सुजान हू सनमान कौं।
बहु भाइ अदबु बजाइ दै बहु मान कौं॥
ढिग देखि सफ़दर जंग सिंह सुजान कौं।
सब पूछियौ बिरतंत आवन जान कौं॥
फिरि आपनो सुहबाल भाखि वजीर हू।
मुगलान जो कलकान की चहुँ वीर हू॥

भरि स्वास लेत उसास देखि अकास कौं।
बिसवास कै इक आस है तुव पास कौं॥
यह, मैं मुकर्रर है किया तुम सैं कही।
अब तौ दिली दहवट्ट करनी है सही॥
इस वास्तैं तुम कौं बुलाइय मैं बली।
करनी न देर सुजान मो दिल कौं भली॥
जब यौं कही मनसूर सूरज सौं सबै।
समुझाइयौ सु वजीर कौं बहुधा तबै॥
तुम हौ पनाह सनाह या हिंदुवान के।
नहिं आपु लाइक बात ये गुन आन के॥
गहि एक कैं सुबिगारि त्रासत देस कौ।
रहिहै यहै सुकलंक पेस हमेस कौं॥
अब तौ यही जु सलाह है मिलि साहि सौं।
करिकैं दिलीपति हाथ जंग जुताहि सौं॥
सुनियैं जु सफदरजंग बैन सुजान के।
मुरझाइ आनन नैंन बैंन बयान के॥

महालच्छिमी छंद

फेरि मनसूर बोल्यो यही। सिंह सुजा कहा तैं कही॥
टेकि तुरानियौं की रही। आब मेरी जिन्होंने लही॥
साहि भी है उन्हौं का सही। होइगा क्यौं हमारा वही॥
आस मैं एक तेरी गही। आप उम्मेद मेरी दही॥
एक फरजंद जलाल दीं। दौम बीबी उसैं पालदीं॥
आपने संग लीजै इन्हैं। जिंदगी चाहिए है जिन्हैं॥
गोद ए होय तेरो बली। सीख दीजै मुझै जो भली॥
जंग कैहौं दिलीसैं करौं। नेस नाबूद बैरी करौं॥
नाहि तौ सीस टोपी धरौं। हाल ही जाइ मक्कैं मरौं॥

छंद मधुभार

मनसूर बैन सुनकै सचैन, कहियौ सुजान करि सावधान।
कहि है नवाब करिहौं सिताब, पुर सहित साहि हनिहौं जुवाहि॥

अबकैं दिलीस रहि हैं न ईस, मुगलान सब्ब तजिहैं गरब्ब।
पुर इंद्रजोर करिहौं निजोर, तुव सत्रु मारि बकसी बिगारि॥
यह पातिसाहि रहि है न चाहि, मुदई जितेक तितन्ने अनेक।
सबतें मिटाई पुर कौं लुटाइ, लहि तौ प्रतापु करिहौं सु आपु॥
तजियै सुछोहु गहियै सुज़ोहु, मत एक एहु धरि चित्त लेहु।
चकते सबंस नहिं और अंस, इकु पातसाहि करियै सु चाहि॥
तख्तै चढ़ाइ धरि छत्र ताहि, तब दै निसान चढ़ियौ अमान।

दोहा

हम चाकर हैं तखत के सकती करी न जाइ।
यह उपाय करिहौ अपुन तौ बलु सबै बसाइ॥
चार लाख बदनेस कैं हैदल पैदल त्यार।
ते नवाब के जानियौ हुकुम-बजावनहार॥
अब दिन द्वै मैं राम दलु आयौ जानौ पास।
श्री हरि देव भली करैं क्यों तुम होत उदास॥

सोरठा

यह सुनिकै मनसूर दोऊ कर ऊँचे करे।
फिर मुख आयौ नूर कह्यौ बहादुर आफरीं॥
इस डाढ़ी की लाज कुँवर बहादुर है तुमैं।
है यह काज दराज होवैगा तुझ हाथ सैं॥
अब सवार तुम होंउ जाइ माँदगी कटक की।
काल्हि बजावैं लोहु साहि तख्त बैठारिकैं॥
लख्यो सुदीन वजीर सूरज सबै कबूल किय।
ह्वै सवार रनधीर दिल्ली के सनमुख भयो॥

सवंगा छंद

सूरज सफदरजंग जवाहर संग लै।
दै दै दिघ्घ निसान सैन बहु रंग लै॥
प्रथम दिना पुरइंद्र दिखायौ साथ कौ।
ज्यौं किसान लइ सगुन करै कृषि हाथ कौं॥

हरगीत छंद

भूपालपालक भूमिपति बदनेसनंद सुजान हैं।
जानै दिली दल दक्खिनी कीने महाकलिकान हैं॥
ताकौ चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छंद बनाइ कैं।
मनसूर सूरज मिलन दिल्ली प्रथम अंक सुनाइ कैं॥

दोहा

फेरि आइ मनसूर ने कीनौ भेद उपाइ।
पोता काम जु बकस कौं लीनौ बेग मँगाइ॥

छप्पय

ताहि तख्त बैठारि धारि सिर छत्र जटित जर।
चँवर मोरछल ढारि कियउ इतमाम आम घर॥
अरुन बरन नीसान तानियौ अरुन बितानहिं।
सहदाने घन घोरि दियौ उमरावनु मानहिं॥
उद्धत हयंद सुगयंद नर बहु सुभट्ट हाजिर प्रबल।
सूरज सहाइ मनसूर मैं थय्यौ साहि अकबर अदल॥

छंद पावकुलक

अकबर अदल साहि धरि आगैं। सफदरजङ्ग जङ्ग अनुरागैं॥
अपनी चमू साजि गज चढ़यौ। तूरानिन पै अति रिस बढ़यौ॥
इसमाइल राजेंद्र गुसाँईं। सफदरजंग भए अगवाँईं॥
द्वादस सहस हयंद हँकारे। हे वजीर के सङ्ग तयारे॥
तबही सूरजहू ने डंका। सब तैं आइ चढ्यौ रनबंका॥
तातैं अग्ग जवाहर धायौ। सजि कै सैन दिलीसमुहायौ॥
पंद्रह सहस तुरङ्गन वारे। व्रजबासी चढ्ढे रन रारे॥
अनगिनती पाइक ललकारे। दिल्ली के लूटन पग धारे॥
सफदरजंग जोरि दल एतौ। चढ्यौ इंद्रपुर कौं भय देतौ॥
जिते हयंद गयंदन वाले। ते सब रेथी के पथ चाले॥
पाइक लगी राह मन भाई। जो जाके सनमुख ही आई॥
एक और तैं लूट मचाई। करत किसान खेत ज्यौं लाई॥

पुर बाहर जे हे पुर छोटे। ते सब भए उही दिन बोटे ॥
किसन दास सरवर दै पाछैं। बारह पुरा लूटियौ श्राछैं ॥
लियौ तोपखानौ करि हल्ला। अरबसराइ मचाई अल्ला ॥
इतनौ देखि वजीर सिहानौ। फिर डेरनु कौं कियौ पयानौ ॥

मालती छंद

अहमद साहि सुनै अकुलाहि रह्यौ दग चाहि कछू न बसाहि।
सबै उमराइ लए सुबुलाइ कह्यौ समुझाइ करौ सु उपाइ ॥
गजद्दियखान तबै ढिग आन करी जु सलाम भरयो जहँ आम।
कह्यो जु निहोर दुहूँ कर जोर हुआ मनसूर वजीर गरूर ॥
जथा उस नाम किया वह काम हुवा बदराह जु खातरखाह।
जिसैं फुरमाइ करौ सु बिदाइ वहै अब धाइ गहै उस जाइ ॥
क़हौ अब रास जुहै मुझ पास सु हाजर हाल सु जानहु माल।

दोहा

जान माल सैं साहि का फिदवी हाजर हाल।
रजा होइ सु गुलाम कौं मनसूरा क्या माल ॥

छंद कुंडलिया

अरजी बकसी की सुनत साहि अहम्मद साहि।
पोता मलिक निजाम कौ कियौ वजीर सराहि ॥
कियौ वजीर सराहि और यह मतौ उपायौ।
समसामुद्दौलाहि मीर बकसी ठहरायौ ॥
ठहरायो सबैदन तोपखानौ रन गरजी।
सुनी अहंमद साहि गाजदीखाँ की अरजी ॥
तबही उन दोऊन कौं सरोपाव समसेर।
सादलखाँ सु नजीमखाँ जान पठान रुहेल ॥
जान पठान रुहेल साहि तब यौं फुरमायौ।
रेती के मैदान मोरचो तुम्हैं बतायौ ॥
तुम्हैं बतायौ सबै अराबौ लै कैं अबही।
उस हरीफ कौं लेउ जंग कौं आवै तबहीं ॥

छंद संखजारी

सुनै साहि बानी सबै मीरमानी करी सावधानी चमू साजि आनी।
लयैं तोपखाने मनो देव दाने रुपे जाइ रेती हुती तोप जेती॥
किती हाथ बाहैं सुकोऊ अठाहैं कछू बीस हथ्थी धरी एक सथ्थी।
सहस दोइ ऐसी भुजा मोचु कैसी किती अष्टधाती किती लोह-जाती॥
कछू बाघ मुक्खी किती मुक्ख रुक्खी धरी एक मोटी तहाँ दोइ छोटी।
करैयौं जजीरा बढ़े धीर धीरा सुतरनाल मंडी सुहथनाल चंडी॥
तहाँ बानवारे हजारौ सँभारे कढैं गोल गोला करै तोल तोला।
भरैं एक दारू ररैं मारु मारू नकीबौं सुनाई चलौ अग्ग भाई॥
यहै सद्द छायौ नहीं पारु पायौ सजे बीर बानौ चढ़े लै निसानैं।

छंद तिलक

तब सादलखां सु नजीम जहाँ सु हरौल भए तन तेह छए।
अरु सैनपती इनकौ मदती पुठवार रह्यौ बहु जोर गह्यौ॥
सु अमीर जिते सब संगति से बहु तोपन कौं अरि लोपन कौं।
धरि अग्ग धुके महि जात रुके बहु स्याम धुजा बहु रङ्ग कुजा॥
सित स्याम घनी बहु नील बनी इक जोजन लौं भुव छाइ दलौं।
सजि सैन चले सब बीर भले रिस बैन कहे रस बीर गहे॥
मनसूर जहाँ गहि लेइँ तहाँ

दोहा

निकट अहम्मद साहि के रह्यौ गाजदीखान।
वकसी तैं जु वजीर भौ जुद्ध हेत बलवान॥

छंद लीलावती

सुनि सफदरजंग उमंग अंग धरि जंग हेत तदबीर करी।
राजेंद्र गुसाईं इसमाइलखां दुहुनि संग भटभीर भरी॥
बेकरि हरौल सनमुष्ष हँकारिय जितहिं अराबौ घोरि धर्यौ।
गहि जमुना तीर बीर धरि धारैं हय हंकिय नहिं बिलम कर्यौ॥
पुनि श्री सुजान अरू सिंह जवाहर करि सिलाह धरि आह बढ़े।
लै मसलत [illegible] करहिं सहर [illegible] चाहि चढ़ें॥

हैदल सब संग अग्ग धरि पैदल तिनहि बीर यह हुकुम कियौ ।
अब लेउ ईंट करि देउ ईंट सौं दिली सहर हम तुमहि दियौ ॥

छप्पय

जब सुजान नर कहिय तनय जाहर सु जवाहर ।
तब सुनि सब ब्रजबीर हरखि हुंकिय ज्यौं नाहर ॥
करिय हल्ल बहुमल्ल रल्ल पुर मद्धि मचाइय ।
कहत देव हरिदेव देवपति की जु दुहाइय ॥
चहुँ ओर सोर अति घोर हुव तोरि फोरि भवननु भरिय ।
दिल्ली दरयाव बहु आब जुत सूरजदल दलदल करिय ॥

छंद त्रिभंगी

करि करि ललकारे गली गल्यारे तोरि किवारे पुरवारे ।
गहि करनि पनारे लहि उपरारे उच्च अटारे पग धारे ॥
वज्जंत कुठारे लत्त लठारे पौरि दुआरे भुव पारे ।
तारिनु भनकारे कहूँ कुसारे तिष्ष छुरारे पटतारे ॥
पटतारे तारे खुटे दुआरे फुटे तिबारे चौबारे ।
भज्जे घर-वारे ज्यों पघवारे बहु हटवारे भौभारे ॥
केते हथियारे सीस फिकारे डारि भगारे डर ड़ारे ।
अटके लरिटारे भटके न्यारे होत अगारे हक्कारे ॥
हक्कारे पारे जाटौं मारे मुगल महारे मनहारे ।
आरे के आरे बारह द्वारे कछु न सम्हारे गहि डारे ॥
ऊँचे घर वारे खड़े पुकारे हुआ कहारे क़रतारे ।
रव हाहाकारे घोर महा रे बूढे बारे चिक्कारे ॥
चिक्कारनु पारे धावत रारे आरे जारे ले जारे ।
लै कै तरवारे देत धवारे दिल्ली वारे बेजारे ॥
गए हकाबकारे लगत धकारे है बिक रारे गहि नारे ।
ब्रजबासी प्यारे भरत सरारे साँझ सकारे असरारे ॥

छंद ललितपद

रारे लेह लेह करि धाए गेह गेह चढ़ि साजे ।
सूरज सुभट कटकि पुर कटकनु थँभे लाल दरवाजे ॥

कवित्त

लाल दरवाजे पर सूरज सुभट गाजे।
ताजे ताजे बीर हत्थ आयुध दराजे हैं ॥
भाजे पुर लोगन कपाट दरवाजे दीने।
ऊरध भुसंडिनु कै उद्धत अवाजे हैं ॥
कहूँ सर बाजे छर बाजे लमछर बाजे।
बाजे बाजे भाठिनु सौं भोरे सिर साजे हैं ॥
जग के लराजे उभराजे लहि छाजे ओट।
केते लोट पोट मिले आजे पर आजे हैं ॥
पावत पराजे दरवाजे वारे भाजे देखि।
केते लोट पोट कोट चोटन सुमार में ॥
टूटत किवार हाहाकार ता बजार परी।
बार बार बिकल बिलंद भीर भार में ॥
आए आए कहत बगाए माल भौंहरेनु।
जायहू गँवाए नारि सहित अगार में ॥
माए कहूँ बाए बाल रटनि बुवाए ताए।
लेहरी ददाए तो चचाए आए खार में ॥
खारौं खतरानी कतरानी सतरानी फिरैं।
बाँभनी बिन्यानी तुरकानी थररानी हैं ॥
काइथी अरोरी थोरी बैसनि तमोरी गोरी।
काछिनी किरानी औ भट्यानी भहरानी हैं ॥
हीरी बहु कीरी नर नीरी तीरी पीरी भई।
सूरज के तेज चंद कला ज्यौं परानी हैं ॥
नूपुर वलय वलयानु रसनानु धुनि।
मानहुँ प्रभात पंछी बानी मडरानी हैं ॥
डोलती डरानी खतरानी बतरानी बेवे।
कुड़िए न वेखी अणी मी गुरुन पावाँ हाँ ॥

किथ्थे जला पेउ किथ्थे उज्जले भिड़ाउ असी।
तुसी कोलग्रीवाँ असी जिंदगी बचावाँ हाँ॥
भट्ठ ररा सहि हुवा चंदला वजीर वेखो।
एहा हाल कीता वाह गुरू नूँ मनावाँहाँ॥
जाँवाँ किथ्थे जाँवाँ अम्मा बावे के ही पाँवाँ जली।
एही गल्ल अष्षैं लष्षैं लष्यौं गली जाँवाँ हाँ॥
आब्या तमें आगल न ल्याब्या माटी कागलने।
डागला नड़ाट्रू कौ कठामरून लीध्यूँ छै॥
डीकरी न छैया साथैं मोकल्या न मामी हाथैं।
घरणू न आथै भूड़ा पौतियौं न दीध्यूँ छै॥
हालरू हम्हारू बाट माहें जारे आवी जोयूँ।
हहरू हमारू पूठी पेला माहँ वीध्यूँ छै॥
चीधू छै न पाहै सीधू खावानै नहाहै हवै।
सिव जी सहाहै जिनै एवूँ हाल कीध्यूँ छै॥
के कराँ सभागी भीसू भाई भाग्यो टापरे से।
आपुरे बटाऊ ए लुटाऊ घर घाले हैं॥
पापरी नवापरी मुगीरी भांड घाली पड़ी।
लोड़िये न के के लेके आए सासू लाले हैं॥
काके पैर पाके मूनै आके लेन जाके भागे।
तागे हून छूटे फूटे ऐसे आनि ताले हैं॥
केबे हुवा केवे लेवे देवे देवे देखि।
वे वे ज्याले माई अब तेरे हम बाले हैं॥
कौठे रह्या ठाकराँ कि ठाकराँ पधार्या बीरा।
चाकरा न लारैं म्हें उभारै पग धाँवाँ छाँ॥
जाया कास्या जाटराँ जनायो छै जुलम ऐंठैं।
जेठैं टेठैं म्होंवीतो सवाई रा कहाँवाँ छाँ॥
जिसी भालि बाजी तिसी गलो चली बाजी।
म्होतो टारडा न टारडी अवार कोठ्याँ पाँवाँ छाँ॥

काका जी कागला का अगार ओ जौ बाई जी थे।
ल्याँवाँछाँ जी ल्यावाँ कोई आँवाँ छाँ जी आँवाँछाँ॥
महलसराइ सैरवाने बूआ बूबू कारौ।
मुझै अपसोस बड़ा बड़ी बीबी जानी का॥
आलम में मालुम चकत्ता का घराना यारों।
जिसका हवाल है तनैया जैसा तानी का॥
खने खानै बीच सैं अमाने लोग जाने लगे।
आफत ही जानो हुवा ओज दहकानी का॥
रब की रजा है हमैं सहना बजा है वख्त।
हिंदु का गजा है आया ओर तुरकानी का॥
बबुआ न आवा मोर भैयन न पावा याक।
तुपक की न लावा गाँठि डीबू आन घावा है॥
चाकरी की लकरी की फकरी बिहानी कीन्ह।
मनई न कनई दिहाँन याँ बतावा है॥
अस कस कीन्ह म्वार दिल्ली का नवाब ख्वार।
चीन्हत न सार मनसूर जट्ट ल्यावा है॥
तुहिकाँ न मुहिकाँ कपीं लुहिकाँ रही न जाग।
भाग कुल और तोपखान बाघ ब्यावा है॥
ईधें चालि ईधें ऊँधें ऊँधें के धर्‌यौ छै थारो।
टालौ भी न चाल्यौ छै चरैया घनो पाला कौ॥
बेटौ थाँभि बेटौ भौंड़ी लागिसै चपेटौ करौ।
कूणके लपेटो फेटो लाग्यौ घरघाला कौ॥
गाड़ी एक पाड़ी दोइ नाड़ी तीन पाज नीन।
नागला तुलावाचारि मूने सोच जाला कौ॥
आला कौ रह्यौ सै आला जाला कौन जाला चौंध्यौ।
ताला न लाध्यौ सै भरोसौ कर्‌यौ माला कौ॥
कैहाँ जैहौं कैहाँ जैहौं तैं देहाँ न ऐहाँ आओ।
देखन न वैहों क्यों ललाजू उभराने हौ॥

अैयाँ बैंयाँ गैंयाँ लै लुगैंयाँ लैंयाँ पैंयाँ चलौ।
वारौ न अथैयाँ कहूँ जाट खुभराने हौ॥
कैसी करी भैयाँ मोड़ा मोड़ी न कन्हैयाँ घरे।
खात हैं लुचैयाँ कभू पेट न भराने हौ॥
चैंयाँ चैंयाँ गहौं चैंयाँ नैंयाँ नैयां ऐसे बोलो।
बढ़ि दैया करी दैया हमै काहै छुभराने हौ॥
बरनौं कहाँ लौं भुवलोक में जहाँ लौं भई।
दिल्ली में तहाँ लौं बानी सूरज प्रताप ते॥
मुगल मलूकजादे सेख बेसलूक प्यादे।
सैयद पठान अवसान भूले लापते॥
आया रोज क्यामत सलामत सैं पाक हुवे।
रहैगा सलामत खदाई आप आपते।
जार जार रोती क्यौं बजार मीरजादी यारों॥
जिनका छिपाउ महताब आफताब तें॥

छंद पद्धरी

यौं पर्‌यौ सोर दिल्ली अपार। पुरलोग पुकारत बार बार॥
ब्रजबीर हँकारत डार डार। फटकार खग्ग सेलनु उसार॥
कलबल गलीनु खलभल बजार। छलबल सँभार भज्जत अगार॥
इक तज्जत आयुध छोर छोर। इक लज्जत आनन मोर मोर॥
इक गज्जत दामन फोरि फोरि। पुरगली गल्यारे तोरि तोरि॥
महरात फिरत नर खोरि खोरि। हाहा रटंत कर जोरि जोरि॥
इक कहत धिक्क अहमंद साहि। नहिं देखतु या पुर की दसाहि॥
जिहिं जियत इंद्रपुर यौं कुटंत। गजबाज ऊँट वृषभा लुटंत॥
महिषी महिष्य गो लच्छ लच्छ। पडरादि बच्छ लूटें समच्छ॥
अज अजा भेड़ मेढ़ा कुरंग। खच्चर सु गोरखर खर दुरंग॥
बहुमोल खान पाले लवंग। बिल्ली बिलाव नहिं तजत अंग॥
चीते सुरोझ सावर दबंग। गैंडा गलीनु डोलत अभंग॥
अरु स्याह गोस त्रिश्रंग श्रंग। रिच्छादि खौरिहा छुटे अंग॥

लुटियौ सुबाज जुर्रा बिहंग। जिनको सिकार कौवा कुलंग॥
बहरी सुबेसरा कुही संग। जे गहत नीर चर बहुत खंग॥
बहु लगर झगर पुनि चगरतंग। जे हनत सुसा बुज्जर उतंग॥
बाँसा बटेर लव औ सिचान। धूती रु चिप्पका चटक भान॥
दहियर सुतुरमु◌ि बगुलहान। सुरखाव आब के जीव आन॥
जल मृगनि सहसरव कहनहार। तूती सूतीतरा बहु प्रकार॥
बहु रंग देश के कीर वेस। जो सुनत बैन बोलत हमेस॥
मैना मलूक कोइल कपोत। बगहंस और कलहंस गोत॥
सारस चकोर खंजन अछोर। तम चोर लाल बुलबुल सुमोर॥
चकई हरील पिद्दी अपार। खुमरी सु परेवा बहु प्रकार॥

छंद रोला

तुपक तीर तरवार तमंचा तेगा तीछन।
तोमर तुबल तुफंग दात्र लुट्टियौ तिहीं छन॥
पट्टा पट्टी परस पासि बिछुआ बर बाँके।
बल्लभ बरछा बरछि धनुष लिय लूटि निसाँके॥
बुगदा गुपती गुरज डाढ़ जमकील बतारी।
सूल अंकुसा छुरी सुधारी तिष्ष कुठारी॥
सिप्पर सिरी सनाह सहसमेखी दस्तानैं।
झिलम टोप जंजीर जिरह लुट्टिय मरदानैं॥
पक्खर गक्खर लक्खर राग बागे रु निषंगा।
आयुध और अनेक और चिलतह बहु अंगा॥
पुनि बासन भर लुटिय देग देगचा रकाबा।
चमचा चमची जाम तवा तंदूर गुलाबा॥
चपनी लोटा चिलम-पोस सरपोस जमावा।
हुक्का हुक्की कली सुराही अरु अफताबा॥
तँबिया कलसा कुंडि ततहरा बटली बट्ला।
दुकस और परात डिब्बा पीतर के चकला॥

बेला बेली लुटैं तमहड़ी लुटिया झारी ।
अमृतबान अमृती रु थार रकेबी बहु थारी ॥
प्यालो गंगाजली टोकनी गंगासागर ।
कुंजा जंबू डबा और ताँबे की गागर ॥
छलनी चलनी डोही और करछी बहु करछा ।
पौना झाँझर तई बिलाई परछी परछा ॥
करवा कौंपर पानदान चौघरा तवेला ।
अरघा संपुट धूप आरती लेत सकेला ॥
त्रष्टा अरु आधार भर्त के बहुत खिलौना ।
परिया टमटी अतरदान रूपे कै सौना ॥
पीलसोज फानूस कुपी तिखटी सुमसालैं ।
सँडसी सुत्रादराँत डँढ़ारे कुसा सँभालैं ॥
झाड़ दुसाखे जाम बसूला बरम हथौरा ।
टाँको नहनी घनी अरा आरी सुमथौरा ॥
कुदरा खुरपा बेल गुलसफ़ा छुरा कतरनी ।
नहनी सौंहन परी डरी बहु भरना भरनी ॥
पीढ़ा पलँग मचान दुसेजा तखत सरौटी ।
खरसज़ स्यंदन बहल बहुत गाड़ी सुनबौटी ॥
डोला अरु चंडोल घने म्याने सुपालकी ।
कंचन रंजित सुभग टुटीं अरु लुटीं नालकी ॥

छप्पय

दुँदुभि पटह मृदंग ढोलकी डफला टामक ।
मँदरा तबल सुमेरु खंजरी तबला धामक ॥
जल तरँग कानून अमृतगुंडली सुबीना ।
सारंगी रु रबाब सितारा महुवरि कीना ॥
सहनाइ भेरि तुरही दरक बंसी गोमुख बाँकिया ।
अलगोय ताल कठताल तर झालरि झाँझनिसाँ किया ॥

दोहा

मदनभेरि अरु घूँघरा घंटा घनै मतीस।
मुहचंगी कौं आदि दै आवज लुटे छतीस॥

सोरठा

तंबू पाल कनात साएबान सिरआइचे।
रावटिहु बहु भाँति पुनि कुंदश कलंदश॥
मसनद गदी उसीस सतरंजी जाजम जबर।
परदा चंदनी ईस कालीचा दुलिचा घने॥
सीतलपाटी टाट लोई कंवल ऊन के।
बची न एकौ हाट खेस निवारहिं आदि दै॥

छंद त्रिभंगी

रूमाल दुसाला पट्टू आला चूँनी जाला सोभ बनी।
मखमल बन्नातें अरु सकलातें भाँतिनु भातैं छींट घनी॥
बहु रंग पटंबर पसमी कंबर धवल सुअंबर कौन गनै।
जरदोज मुकेसी दाना केसी मसरू बेसी लेत बनै॥
बादला दरयाई नौरंग साई जरकस काई भिलमिल है।
ताफता कलंदर बाफतबंदर मुसजर सुंदर गिलमिल है॥
असकर बिलंदी दूरिघरंदी मानिकचंदी चौखानै।
किमखाब सुसालू खादी खालू चोलैं चालू जग जानै॥

छप्पय

नीमा जामा तिलक लबादा कुरती दगला।
दुतही नीमास्तीन कादरी चोला भगला॥
तंबा सूथन सरी जाँघिया तनियाँ धवला।
पगरी चीरा ताजगोस बंदा सिर अगला॥
दुपटा सु दुलाई चादरैं इकलाई कटिबंद बर।
कंचुकी कुलहैया ओढ़नी अंग वस्त्र धोती अबर॥

अरिल्ल

चोटी चुटिला सीसफूल वर । वैना बंदी बँदनी सु बर ॥
बेसर नथ्थ बुलाक सु लटकन । जाट जूह लागे सब रूटकन ॥
पीयर पर्न झुलमुली तरिवन । बहुखलेल झूमिका सुभरमन ॥
करनफूल खुटिला अरु खुँभिय। लोलक सौनसीकहुँ चुंभिय ॥
गुलीबंद पञ्चमनिया चौसर । तीन लरी पचलरी सतौसर ॥
चंपकली सु हुमेल हाँसत्रर । बीजनि बौरी उरबसीनु भर ॥
विद्रुम मुक्तमाल मनिमालहु । कंचन रजत रतन के जालहु ॥
रसना छुद्रघंटिका लिन्निय । बटुवा कुथरी जान न दिन्निय ॥
बाजूबंद बराकर छिन्निय । बँगुरी चूरा लेत न गिन्निय ॥
टाड पछेली छिन्न छिनाइय । चूरे चूरि चुरी चटकाइय ॥
कंकन गुजरी पहुँचीं अनगन । दुहरो तिहरी जटित रतनगन ॥
छल्ला घनी अँगूठीं कंचन । आरसी रु जंजीर झँमकन ॥
पाइल औ पगपान सु नूपुर । चुटकी फूल अनौट सु भू पर ॥
तेहरि झाँझन गुजरी टुट्टिय । बहु भूषन मैं एक न छुट्टिय ॥

छप्पय

कलगी तुर्रा झौर जग सिरपेच सु कुंडल ।
मोती गुरदा और गोखरू रुद्राछ भल ॥
तोरा कंठी माल रतन चौकी बहु साँकर ।
वेढ़ा पहुँचो कटक सुमरनी छाप सुभाकर ॥
किंकिनी कौंधनी पैजनी हथ संकर झंकर खुटे ।
आभरन नरन बहु भाँति के फुटे बुटे टूटे लुटे ॥

पावकुलक छंद

कस्तूरी केसर कसमीरी । हैं कपूरकचरी सुकरीरी ॥
कुटकी किटी कपूर कलाये । कूडकूठ कासिनी कबाये ॥
कैंछुक चूरकटोर करंजा । किसमिस कैथ कुलींजन कंजा ॥
काथ करौंजी कारी जीरी । काइफरो कुचिला कनकीरी ॥
कुकरौंदा करहरी कतीरा । कनक कटाई कारी जीरा ॥

कुलथी कमलगटा सुकबेला । ककरासिंगी कंद सुकेला ॥
कमल मूल किरवार कसेरू । काचनून कर मूल कनेरू ॥
खिरनी बीजखरी खसजूरा । खार खोपरा बीस सुखीरा ॥
खूबानी खसखस के दानैं । खंडखार खुंभी खस जानैं ॥
गेरोचन गेरू गोगोली । गौंद गिलोइ गोखरू श्रोली ॥
गंधक गुंजाफल गंगोला । गोपीचंदन लुब्यौ अतोला ॥
गुलगुलाल अरु गोरखमुंडी । घास घोमसा घाइल घुंडी ॥
नौजा नरियर नेतर बाला । नीम निसौत निर्विसी नाला ॥
नीला थोथा नील निरमली । नागरमोथा नगद चिलमिली ॥
चव चिराइता चित्रक चीता । चोक चोबचीनी चरलीता ॥
चंदन चूक चिरौंजी चपरा । चोख चाँवरी चंद्रकलपरा ॥
छारछबीलै छिकनि छुहारी । जावित्री जंगाल जुरारी ॥
जाइफलौ सु जवाइन जीरा । जंडीजरी जलाँजरर तीरा ॥
झकझोरी टकटोरी टोरी । ठौर ठौर डोरी गहि ढोरी ॥
तेजपत्र तज तालमखानैं । तिब्री तमाखू तुखमतरानैं ॥
तुलसी बीज तुरंज तुरंजन । देवदारु दंती दुखभंजन ॥
ढुड्ढीदल दाड़िम के बकला । दूब दालचीनी द्रगरकला ॥
धना धमासा धूम सुधुंधी । धौर धौह की छाल धुरंधी ॥
पित्तपापरा पाह पतंगी । पत्रजंपनी पीपर पंगी ॥
पथरसगा पचरंग पमारौ । पाडर फूल पापराखारौ ॥
पोलपखान भेद पन पारा । परवरपाती पतर पचारा ॥
फली फिटकरी फूल हु फैंना । बादामी बूह्मी व चबैना ॥
बाइबिरंग बेल बालंगा । बीजबंद बालेसुर वंगा ॥
बेरजरी सुबिलैया बूटी । बरू बहेर बाबची लूटी ॥
बासौं बंसलोचनौ बंदा । बेलगिरी सुबहेर बिलंदा ॥
बिही बूह्मदंडी विसबेरा । भारंगी भिंडी सुभँगेरा ॥
भैंसा गूगल भगे भिलाए । भोडरभाह सुभेंदू भाए ॥
मिरच मोलरस मैदा लकरी । मुर्दासन मनसिल मिस मकरी ॥

मलयागरि महँदी मुहलैठी। मस्तंगी मुँहमूंदी मैंठी ॥
मेनफरौ मुंडी मधुमोथा। मूढ़मूसली दोऊ चौंथा ॥
मौख मुनक्का मृत मुलतानी। मैंथी मालकांगुनी° सानी ॥
मैद मैंडुकी मोध मिमाई। मदन मखाने मिसरी भाई ॥
मोम महावर मूली-बीजा। अकरकरा अजमोद अलीजा ॥
आलूचा अमिली अँबहलदी। आल आँवरा साल अफलदी ॥
असगँद अगर आविली अंडी। अर्क अतीस आँवला ठंडी ॥
इसबगोल इंदरजौ जानौ। इंद्रांनी इलइची आनौ ॥
ऊँटकटेरा एलुआ एला। रेवतचीनी राई रेला ॥
रूमी रतनजोति रसवंती। रारे रँगमाटी रुदवंती ॥
लौंग लौंगचूरौ लगलाही। लोद लछसना लहसन काही ॥
लाँफ लेखनी लोचन बाला। इसबंद सीतल चीनी आला ॥
सौंठ सौंफ सालिम जु सुपारी। सौंध सनाइ सिलखरी सारी ॥
सज्जी सौंचर सैंवर सोरा। सांखाहूली सींप सिकोरा ॥
समुद फैन साबुनौ सुपैदा। सिंगरफ सैंदुर सारसमैदा ॥
सौनमक्खि संखिया सुहागा। सूल सम्हाँलू सबरस सागा ॥
हरद हींग हरतार हरीती। हरडा हाल्यौं हिरमिचहीती ॥
हुलहुल हिल्ल हिमामहुदस्ता। फूल मूल कागाद के दस्ता ॥

दोहा

अमल अफीमहिं आदि दै, चोवा अतर फुलेल।
सीसी चीनी मीन के, मुहरदरावी रेल ॥

छंद त्रोटक

लुटियौ लडुआ बहु भाँतिन के। नुकती अरु मोदक पाँतिन के ॥
कलकंद सुमैंथिय मूँगदला। सिमई सतसूत मगद्द भला ॥
सुठि सेव सु औरिहु गौंदगिरी। खुरमा मठरी भरि ली गठरी ॥
गुपचुप्प गुना गुलपापरियाँ। खजला सु खजूरि खड़ापरियाँ ॥
अमृती रु जलेबिनु पुंज लुटे। खिरसादर भिस्ति चुटे सुफुटे ॥
गुझिया गुलकंद गुलाबकरी। तिरकौन सुहारिन मोट भरी ॥

बहु घेवर बावर मालपुवा । अरु सेव कचौरिन लेत हुवा ॥
हलुवा हिसर्मी बहु फेननु की । कतरी रसनासुख चैननु की ।
कहुँ लेत निवात बतासन कौं । सु गिंदौग्न ए रनवासिन कौं ॥
अरु खोवन ढेर बखेर दए । बहु खाँड़ खिलौनन लेत भए ॥
अरु लाइचदाननु गोद भरैं । दधि दूधन के परसाद करैं ॥
कुजतीतिल सक्कर रेवरियाँ । बहु पाक पुडार जु सेवरियाँ ॥
पकवान जथा रूचि और घना । गुहरी परमल्ल सुखोल चना ॥

छप्पय

गेहूँ चावर चना उरद जव मूँग मौंठ तिल ।
चौरा मटर मसूर तुवर सरसों मडुवा मिल ॥
सँवाँ पसाई मका काँगुनी कोदौं मकरा ।
चैना कूरीवटी सिंघारे कुलथी सकरा ॥
घृत तेल नौन गुड़ तूलरस मिले विरस मौटन खुटे ।
पुर इंद्र अन्न कौ कूट ज्यौं सब रस कोटिन मन लुटे ॥
साम यजुर रिग निगम अथर्वन धर्म पतंजल ।
मीमांसा वेदांत न्याय साहित्य तर्क भल ॥
विष्णु वायु शिव अग्नि गरुड़ नारद बलिरच्छक ।
मच्छ कच्छ बाराह पद्म हरनच्छक तच्छक ॥
पुनि स्कंद मारकंडे भविष ब्रह्मवर्त्त ब्रह्मण्डवर ।
भागवत मेघ मघु रघु कुँवर पुनि किरात नैसध अवर ॥
छंद कौस ब्याकर्न कर्म जोतिष निरुक्त रस ।
मंत्र जोग धनु गान वैद्य स्रोदय गनती जस ॥
सामुद्रिक पुनि कोक सर्पबानी अरु भारथ ।
नाटक भासादेस यमनबानी ग्रन्थारथ ॥
लखिकैं अधर्म सु अनीति अति सब विद्यनु चलनौ रिढ़य ।
पुर इंद्र छाड़ि व्रजवास कौं व्रजवासिनु के कर चढ़िय ॥

दोहा

देस देस तजि लच्छिमी, दिल्ली कियो निवास ।
अति अधर्म लखि तह सिस, चली करन ब्रजबास ॥

छंद भुजंगी

लुटै द्यौस दिल्ली निसाँ ज्वाल जारै। मनौ सूर कौ तेज पांपै पजारै ॥
जरैं रंग रंगे घने काठ खंभा। हलै ज्वाल की झाल, ज्यौं पात रंभा ॥
टुटैं गोल मर्गोल टोडा सुहाटी। मनो स्वर्न की खान तैं सोठ काटी ॥
जरैं बंगला बंगली चित्रसाला। मनौ पेष्रने कौं रूप्यौ ख्याल आला ॥
जरैं दारु की पुत्रिका यौं दती सी। मनौ धाम कौ बाम ठाढ़ी सती सी ॥
कहूँ आँच सौ काँच के मौन फूटैं। महा तेज सौं ज्यौं वृथा तेज बूटैं ॥
जरी यौं दरीची तिबारो अटारी। सतौं मेरु की शृङ्ग जैसी निहारी ॥
बरंगा बरंगी करी यौं जरी हैं। मनो ज्वाल जैं बाहु लच्छौ करी है ॥
जरी सीढि प्रासाद ते भू परी है। सिला मेरु के सीस तैं ज्यौं ढरी है ॥
जरैं बाँस यौं काँस उद्धै फुलंगा। नचै भूमि कौ पूत कै कोटि अंगा ॥
कहूँ जाल के जाल मैं ज्वाल झोरैं। किधौं धाम धारा धरौ बिज्जु दौरैं ॥
सिखा की सिखातैं धुवाँ व्योम धायौ। भजै तामसी राजसी ज्यौं सतायौ ॥
किवारी विवारे उसारे पनारे। जरैं जालि पानैं करे मौन न्यारे ॥
उड़ैं खास सींगी धनैवान भारे। फिरैं आग लेती मनौ दै हँकारे ॥
फिरैं वायु के बेग सौं बाइमोता। सुरेसा पुरै आपुनै रूप कीता ॥
चहूँ ओर यौं ज्वाल मालानिहारी। दुल्हैया दिली बादला ज्यौं सिगारी ॥

कवित्त

धर्मसुत-धाम जान जमुना निकट मान,
सर्व मंद जग्य कौ बनायौ व्यौंत पूर है।
पत्र फल फूल सब औषध समूल रस,
पट अनतूल धात धान धन भूर है ॥
अंडज जरायुज औ स्वेदज उद्भिज हव्वि,
कर्‌यौ पूरनाहुति चकत्ता कुल मूर है।
औज की अगिन इंद्र पुर सों अगिनकुंड,
होता श्री सुजान जजमान मनसूर है ॥

दुपई छंद

कलिका आदि क्रूर मघवा ने व्रज पै कीपु जतायो है।
वही अकस धरि श्री व्रजेस-सुत इंद्र परहिं लुटआयौ है ॥

हरिगीत छंद

भूपाल पालक भूमि-पति बदनेस नंद सुजान हैं।
जानै दिल्ली दल दक्खिनी कीने महाकलिकान हैं॥
ताकौ चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छंद बनाइकैं।
दिल्ली लुटाइय पुनि दहाइय दुतिय अंक सुनाइकै॥

छंद त्रिभंगी

सत सहसौं धावत अयुतौं आवत लच्छौं पावत भाल धर्यौ।
सूरज गुन गावत बिरद बुलावत जग ललचावत चाल पर्यौ॥
सबही बिधि ताजा सकल समाजा छिन मैं राजा रंक किए।
ज्यौं धनपति धावै सुरग न पावै हाथ लड़्यावै हरष हिए॥
हिय सकत नाहीं आवत जाहीं खाली नाहीं मोद भरे।
जैसी गति लंका करी अतंका रघुकुल बंका आनि अरे॥
ज्यौं रच्छस खंडे यमन बिहंडे जदुकुल चंडे सुखरासी।
जलधर जिमि गज्जत बारिद बज्जत यौं धुनि सज्जत ब्रजबासी॥
ब्रजबासी सगरे करि करि दगरे दिल्ली बगरे लूटि करैं।
मनसूर बिचारै अबको रारै याहि सँभारै रुंक भरैं॥
सूरजहि बुलायौ कहि समझायौ सो दलु हायौ समुहायौ।
अब लूटहिं थंभौं जंगहि रंभौ कर्यौ अचंभौ मन भायौ॥

दोहा

मन भायौ है है सबै सूरज कही नवाब।
अब मैं लूटहिं बंद करि लैहौं जंग सिताब॥

छंद अनुगीत

यौं कहि सिताब सुजान उट्ठिय मनहुँ तुट्ठिय ईस।
ढिग बोलि सिंह जवाहरै किय हुकुम बिस्वा बीस॥
अब फौज राखहु एकठी अरु करहु लूटहिं बंद।
सुत तो बिना यह को करै नहिं आन कौं परबंद॥
यह सुनत जाहर सत जवाहर तात हुकुम बजाइ।
तिहि लार है असवार धाइय दई लूट मिटाइ॥

ज्यौं वायु कै बस बारि बादक मंत्र के उतपात।
त्यौं सलब साबर के प्रयोगहिं छिनक में उड़ि जात ॥
लखि ऊर्ज नाभी बदन तें है तार कौ बिस्तार।
त्यौं श्री जवाहर ने कियौ सब लूट कौ परिहार ॥
पुनि सैन सज्जिय पटह बज्जिय गज गरज्जि हयंद।
यौं सुनत ही मनसूर चड्ढिय दैन दिल्लिय दंड ॥
दुहुँ दल उमंडिय रज घुमंडिय भानुजा के तीर।
सुत सहित सूरज सरपस्या सजि सुभट संग वजीर ॥
उत सादुला सु नर्जामखाँ अरु खानदौराँ पूत।
धरकैं अराबौ अग्ग रुप्पिय कोठरा मजबूत ॥
इति सहर दिल्ली उतहिं जमुना मद्धि बढ्ढिय भीर।
कुरखेत ज्यौं सुत अंध पंडव रचिय जुद्ध गँभीर ॥
तहँ तुमल नद्द गरद्द उड्डिय रूट्ठ बुट्ठिय काल।
हरष्यौ कपाली देत ताली हेत माल कपाल ॥
गंधर्व किन्नर अपछरा भइ गगन में अति भीर।
रसमसी चंडी कसमसी जग जुग्गिनी जुत बीर ॥
मसहार छाये नभ पुराये धरनि धाये स्यार।
भुव भरभरानी भय दबानी खरखरानी ब्यार।
लगे क्रूर धरषन सूर हरषन दुहूँ परखन वार।
दल प्रबल घोर घटा जुरी रस सार बरसन हार ॥
उत साहि अहमद सुभट रुप्पिय इतहि सफदर जंग।
तिहिं सग सूरज अरु जवाहर ठठिय जंग अभंग ॥
तहँ छुटत बान भयान सहसन रहकला हथनाल।
जज्जाल पुनि घुरनाल अयुतन जबर जंग कराल ॥
अगगगग अगग अगगगं सगग सग गगसंन।
धगगग धगगगग धगगगं धंमाक धुंकर धंन ॥
घधकार घघघघघघ धंधू धाइ धूमक धाइ।
भभकंत भक्क भड़ाइ भंकत भडडडडंभं भाइ ॥

भंनात भद्द भड़ाक भड़ भड़ भभक भूरि भयान ।
भड़कंत भभकत भभभभंभट भेत्र भासत भान ॥
अति घोर घोष घुरयो जहाँ धरधरत जमुना नीर ।
झरझरत गोली गोल ओला इंद्रपुर के तीर ॥

सारंग छंद

छायौ महाधूम धूली घटाधोर । उट्ठैं जहाँ रंजकै बिज्जु सी जोर ॥
पज्जैं घनी ताप गज्जैं निरद्धार । देखैं दुहूँ सैन के जान आकार ॥
धुंधी धरा धूसला धूम गुब्बार । मानौ प्रलयकालकौ घोर अंधियार ॥
ओलानु के भेस गोलानु के मेह । फोरै घनै मुंड ढोरैं कहूँ देह ॥
बौछारि गालीनु की चारिहूँ ओर । बानौंन की घोर मानौ उड़ैं मोर ॥
लुट्ठें कहूँ बाजि फुट्टें कहूँ भाल । गोलानु की गैंद खेलैं मानौं काल ॥
सन्नात घन्नात फन्नात नासाँस । भासै नहीं भान और आस आकास ॥
तामैं घुरयौं घोस ज्यौं गाज के पात । कै सेल के सीस पै बज्र को घात ॥
सद्दैं सुन्यौ कै गरद्दैं लखी नैन । भैचक्क के सूर ठाढ़े दुहूँ सैन ॥
नीचैं तपै भूमि ऊपर तपै भान । भारी भयद्दान जारैं जगत प्रान ॥
यह हाल कौं देखि सूजा भर्यौ तेह । बौल्यौ तज्यौ बीर हो संक संदेह ॥
ह्वै है लिख्यौ हाल गोपाल जो भाल । एतौ भयजाल है भूत के ख्याल ॥
हौ भाग पूरे सुदिल्ली लह्यौ खेत । है स्वामि कौ काम कालिंदरी रेत ॥
यातैं गहौ खेत अग्गैं पगो देत । या तोपखाने घरी चार मैं लेत ॥
यौं भाखि सूज्या लख्यो पूत की ओर । ठाढ़ौ हुतौ पास ज्यों भान है भोर ॥
भारथ्थ मैं भीम पारथ्थ के मान । कंसारि ज्यौं काम बैरीन कै जान ॥
दोऊ महाबीर दिल्ली रुपे धीर । लंका खगे राम ज्यौं लछमना बीर ॥
सूजा कहैं बान सुन्ने सबै सैन । मुच्छौं धरैं हथ्थ रत्ते किए नैन ॥
हथ्थैं गहे सेल लत्तां तुरी हंकि । जैसैं कपी-जूह लंका परैं दंकि ॥
संका तजैं दोह डंकानु कौं देत । हंका करैं बीर बंका दिली हेत ॥

दोहा

सेल साँग समसेर सर गहै भुसंडी हथ्थ ।
मसकि मसकि बानीनु कौं हल्ल करा इक सथ्थ ॥

छंद हनूफाल

सबते अग्ग गोकुल राम। कुंभानी प्रताप उदाम ॥
सिंह भरथ्थ सूरतिराम। धरि हिय स्वामि काम उदास ॥
व्रजसिंह बंस कौ चहुँवान। स्यौसिंह है गदाल अमान ॥
तिरखा जादवाँ सुलतान। भीखाराम सिंह गुमान ॥
मोहन राम द्विज बलधाम। राजाराम दौलति राम ॥
बल्लू और बाला बीर। हरि बलराम कृष्ण गँभीर ॥
तिहिं की पुट्ठि धाइय छिप्र। हरि नागर जमूपति बिप्र ॥
किरपा राम दानी राम। दुरजन सिह मुहकम नाम ॥
दब्बढ्यो जोर सुभट समूह। वह बलराम लेत फतूह ॥
रनसिंह उदयसिंह खुस्याल। हरिबलिराम छत्तरसाल ॥
मैदा जैतसिंह संतोष। पहोपा रतनसिंह सरोष ॥
किरपा विप्र लछमन दास। अरु जैकृष्ण मानसा पास ॥
तोफा स्याम सिंह सुजोध। धीरज सिंह भीम अरोध ॥
सकता और दाता दौर। पाखरमल्ल पारी रौर ॥
उदभट सुभट लै इक सथ्थ। हरनारइनौ समरथ्थ ॥
तोमर रामचंद तिलोक। ठाकुरदास सैंगर थोक ॥
धनसिंह गौर गंगाराम। फत्ते ऊधमासुत स्याम ॥
हरसुख रतीराम अजीत। प्रोहित है घमंड अभीत ॥
सेखावत उमेद प्रचंड। बल्लभ सिंह कमधुज चंड ॥
स्यामहु सिंह थानापूत। हरजी राम जो मजबूत ॥
पैमा प्रथी सिंह पमार। अंगू सदा राम अपार ॥
मंत्री सदा राम सुक्रुद्ध। राजू रतनसिंह अरुद्ध ॥
नाथूराम खैमा विप्र। बाला और गिरिधर छिप्र ॥
हरि सिंह हठी सिंह अजीत। बकसीराम जंग अभीत ॥
जै सिंह तुला हट्टी जोर। पलका अमर सिंह कठोर ॥
साहिबराम जालिम जीत। रंनू सदाराम सुनीति ॥
दल्लामेव साकिरखान। गुलखाँ किते और पठाम ॥

है पुरषोत्तमौ श्रीराम। मेदा बिजै राम उदाम ॥
बहादुर सिंह औ औधूत। कन्हई राम बैदा पूत ॥
साजैं सूर वह सावंत। श्री गुरू रामकृष्ण महंत ॥
सुत सुकलेस सूरतिराम। मुहकमसिंह उद्धत नाम ॥
है सुखराम मातुल उद्ध। स्यौसिंह उदैभान समुद्ध ॥
देवी सिंह औ अस्यौसिंह। सूरज अनुज धाइयधिंग ॥
तिनके मद्धि सिंह सुजान। नवग्रह जूह जैसैं भान ॥
सिंह दलेल सिंह खुस्याल। मेदहु सिंह ब्रजपतलाल ॥
उदभट सुभटसिंह भवान। वीरनराइनौ बलवान ॥
बंके मानसिंह गुमान। उद्धतराम बलमँतवान ॥
बुधिबल सभाराम बिलंद। ए बदनेस भूपतिनंद ॥
एने श्री जवाहिर संग। षटमुख-सहित गन ज्यौं जंग ॥

दोहा

सेरसिंह रनजीत अरु जैतसिंह हठिसिंग।
सिंह अनूप चँदौल किय भूप अवारि अरिंग ॥
उतहि अहम्मदसाहि-दल इत मनसूर-सुजान।
इंद्रप्रस्थ जमुना-निकट कर्यौ घोर घमसान ॥

छंद संयुता

घमसान घोर जहाँ घुर्यौ। तिहिं जुद्ध तैं भट ना मुर्यौ ॥
गति मंद मंद हयंद की। सुपदाति और गयंद की ॥
सुधि धारि दिल्ली-काट की। इत दिष्टि सूरज जोट की ॥
अति घोर मार जहाँ घुरी। दसहू दिसा भइ धुंधरी ॥
धरधद्धरं धरधद्धरं। भड़भम्भरं भड़भम्भरं ॥
तड़ तत्तरं तड़ तत्तरं। कड़ कक्करं कड़ कक्करं ॥
घड़ घग्घरं घड़ घग्घरं। झरझम्झरं झरझम्झरं ॥
अर रर्रं अर रर्रं। सर रर्रं सर रर्रं ॥
खर रर्रं खर रर्रं। फर रर्रं फर रर्रं ॥

कड़ डड्डडं कड़ डड्डडं। सड़ डड्डडं सड़ डड्डडं ॥
बहु सद्द कौं इक सद्द है। तम घार धूम गरद्द है॥
जग अंत को अँधियार सो। रितु सीत कौ नीहार सौ॥
छुटि बान भासत भासते। ग्रह पात जिमि आकास ते॥
मध्र सर्व धूम महाल सो। मनु काल राति कराल सी॥
सर सैकरौं सर राहटे। लखि ब्याल ज्वाल उछाहटे॥
नर बाजि कुंजर खाहटे। बिल पाइ मानहुँ चाहटे॥
लगि गोल गोल घराहटे। लखि काइरौं थरराहटे॥
मुख मर्द कैं मरराहटे। भुज दंड होत फराहटे॥
चहुँ ओर गोलिनु की झरी। घुटि सार की मनु फुलझरी॥
करिधार कुंभकरी फिरैं। फिलवान अंकुस दै भिरैं॥
लगियौ तुरंगनि थरथरा। नथुनान लग्गिय फरफरा॥
इहिं भाँति दुहु दल साँकरी। फर भूमि घोर निसाकरी॥
भुजदंड खंडित उड्डियं। कहुँ जंघ ऊरू गुड्डियं॥
कहुँ रुंड मुंडनु झुंड है। कहुँ कुंड है कहुँ डुंड है॥
लगि गोल फूटत पेट है। मनु देत काल चपेट हैं॥
महि होत श्रोनित लाल सी।
फुटि जात रग पखाल सी॥
गज बाजि श्रोनित यौं झरैं।
दुति ढाक फूलन की धरैं॥
तिहि बार राम सुचंद नै। हय हंकि जुद्ध बिलंद नै॥
धनु बान हथ्थ सँभारि कै। हित स्वामि कौ उरधारि कै॥
निज खेत जान हरष्षयौ। सर सार धार बरष्षियौ॥
तबही सु गोली लग्गियौ। उर फोरि श्रोनित जग्गियौ॥
वह धीर बीरहि रंगतै। नहिं बागनोरिय जंग तैं॥
सत दौरि सूरतिराम नैं। किय हल्ल जुद्ध मचावनै॥
गुल तासु गोली सौं फुटी। करकी न बाग तऊ छुटी॥
तुलसी फुटयौ पप्रहेरिया। तिहिं जाय सुरपुर हेरिया॥

बहुतै सुभट्ट जहाँ फुटे। गोली चुटे धरनी लुटे ॥
बहु होत लोटक पीटहीं। तउ जट्ट ठट्ट हटे नहीं ॥

कवित्त

श्रोनित अरघ ढारि लुत्थि जुत्थि पाँवड़े दे।
दारू-धूम धूप दीप रंजक की ज्वालिका ॥
चरबी कौ चंदन पुहुप पल टूकनु के।
अच्छत अखंड गोला गोलिनु की चालिका ॥
नैबेद नीकौ साहि सहित दिली कौ दल।
कामना बिचारी मनसूर पन-पालिका ॥
कोटरा के निकट बिकट जंग जोरि सूजा।
भली बिधि पूजा कै प्रसन्न कीनी कालिका ॥

छंद त्रोटक

तिहि औसर सिंह सुजान तनं। अति सिंह जवाहिर रोस मनं ॥
हय हंकि धमंकि उठाइ रनं। जिमि सिंहछवा कढ़ि सैन बनं ॥
बरषा जहँ गोलिय गोलनु की। गरजै बहु बानन बोलनु की ॥
चमकै बरछा जिमि बिज्जु छटा। उमड़े पुर इंद्र सुभट्ट घटा ॥
बरसा सरषार अचूकन की। बहुतोप जंजाल बँदूकन की ॥
तित जाहर सिंह जवाहर भो। तिहिं ठाहर जुद्ध अठाहर भौ ॥
इत्त उत्त धमाधम खूब भई। कछु साहि चमू हहराइ गई ॥
फुटमुंड अनेकनु रुंड गिरे। गहु गोलनु स्यौं गज बाजि खिरे ॥
कहुँ अंग उड़े गति चंगनु की। लखि दाबहि देह पतंगन की ॥
कहुँ अंतन दंतन पाँति परी। मनु रेसम रंगिन सूकि धरी ॥
वहु लुथ्यनि श्रोनित धार झरै। मनु भारथ रूप अपार धरैं ॥
अति उद्धत जुद्धत रुद्ध रयौ। दुहुँ आकुल व्याकुल जोग भयौ ॥

कवित्त

तूरा तैं तरेर दैं दरेरनु सौं दिल्ली दाबि।
प्रबल पठान ता उड़ायौ पौन पत्ता सौ ॥

कूरम रठौर हाड़ा खीची औ पँवार राना।
बना डारि छूटे बाँधि कीनौ एक वत्ता सौ ॥
सूदन सपूत ससिबंस अवतंस बीर।
ताही दिल्लीपति कौ लपेटि राख्यौ गत्ता सौ ॥
जाहर जगत्ता है जवाहर प्रताप तत्ता।
जाके कर कत्ता सां चकत्ता जर्यौ लत्ता सौ ॥

दोहा

प्रबल अराबौ साहि कौ बिकट सहर पुठवार।
वृथां जुद्ध करिबौ इहाँ होत सुभट संहार ॥
यौं समुझाइ सुजान नैं आइ जवाहर पास।
घरी चारि दिन के रहत डेरनु कियौ निवास ॥
जे सच्छत आये सुभट तिनकौ कियौ उपाय।
जिन पायौ पंचत्तु कौं ते जमुना पहुँचाय ॥

हरगीत छंद

भूपाल-पालक भूम पति बदनेसनंद सुजान हैं।
जाने दिल्ली दल दक्खिनी कीने महाकलिकान है ॥
ताकौ चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छंद बनाइकै।
रन कौटरा तट करिय सूरज अंक तृतीय अघाइकै ॥

—

चंद्रशेखर

'हम्मीरहठ' के रचयिता चंद्रशेखर बाजपेयी वीरकाव्य के एक प्रथम श्रेणी के कवि माने गए हैं। इनके वंश और पिता-माता आदि के विषय में निर्भ्रांत रूप से अधिक ज्ञात नहीं हो सका है। कुछ लोग इन्हें कान्यकुब्ज ब्राह्मण (बाजपेयी) बतलाते हैं। जो हो, पर इतना मालूम है कि इनका जन्म फतहपूर जिले के मुअज्जमाबाद नामक स्थान में मिती पौष शुक्ल १० सं० १८५५ में हुआ था। इतिहासकार इनके पिता का नाम मनीराम बाजपेयी बतलाते हैं और कहा जाता है कि यह भी एक अच्छे कवि थे।

जीवनी

चंद्रशेखर जी राज-दरबारों में बहुत घूमा करते थे। पहले यह महाराज दरभंगा के दरबार में गए और लगभग सात वर्ष वहाँ रहे। कहा जाता है कि सं० १८७७ में ये पहले-पहल देशाटन के लिये निकले थे। उस समय इनकी अवस्था २२ के लगभग थी और इनके पिता भी उस समय जीवित थे। फिर सं० १८८४ में ये जोधपूर दरबार में पधारे। वहाँ उस समय महाराज मानसिंह सिंहासन पर थे। ये कवि और कविता के बड़े प्रेमी और आश्रयदाता थे और इनके दरबार में प्रायः कुछ अच्छे कवि उपस्थित रहा करते थे। बाँकीदान चारण नाम के एक सज्जन ने इनको दरबार में प्रवेश कराया और वहाँ पहुँच कर महाराज मानसिंह की प्रशंसा में इन्होंने एक ऐसा कवित्त पढ़ा जिससे इनकी धाक बँध गई और दरबार ने सौ रुपए महीने की वृत्ति देकर ६ वर्ष तक इनको बड़े सम्मान से वहाँ रक्खा। वह कवित्त प्रसिद्ध हो गया है और अवलोकनार्थ नीचे दिया जाता है—

द्वादश कला सौं मारतंड ये उवैंगे चंड।
सेसवारी साँसनि समस्त मनु जलि है।

छुटि जैहै अचल अवास अमरेस-वारो,
कूट जैहै कहति कली सी भूमि हलि है ॥
शेषर कहत अलिका में कलापात ह्वै हैं,
पावक पिनाकी के त्रिशूल सौं निकलि है ।
तून तानि भौंहैं भानुबंसी भूपमान ना तौ ॥
जानि लै हैं प्रलय पयोधि फूटि चलि है ॥

महाराज मानसिंह के उत्तराधिकारी महाराज तख्तसिंह जी कवियों के वैसे प्रेमी न थे। उन्होंने सिंहासनारूढ़ होते ही इनकी तनख्वाह आधी कर दी, पर यह इन्हें स्वीकार नहीं था। वे तुरंत जोधपुर छोड़ कर चल पड़े।

मारवाड़ छोड़ कर इन्हें पंजाब घूमने की सूझी और ये लाहौर होते हुए अंत में पटियाले पहुँचे। वहाँ उस समय महाराज कर्मसिंह जी तख़्त पर थे और उन्होंने इनका अच्छा स्वागत किया और बहुत अच्छी वृत्ति दी। कहा जाता है कि पटियाले के स्वागत और आतिथ्य ने इन्हें जोधपुर भूलने पर विवश किया। यहाँ तक कि इनको मना कर लिवा लाने के लिए महाराज तख्तसिंह ने मुंशी लाँडलीदास जी को भेजा था और अपनी भूल भी स्वीकार की थी पर इनके आत्मसम्मान ने फिर इन्हें जोधपुर नहीं जाने दिया और फिर ये आजीवन पटियाले में ही रह गए। कभी-कभी छुट्टी लेकर वृन्दावन चले जाया करते थे। कृष्ण इनके इष्टदेव थे और 'वृन्दावन शतक' नाम का काव्य ग्रंथ आपने वृंदावन में ही रचा था।

इनकी मृत्यु सं० १९३२ में हुई। उस समय इनकी अवस्था ७७ वर्ष की थी।

महाराज कर्मसिंह की आज्ञा से इन्होंने कई ग्रंथ रचे थे जिनमें एक राजनीति का बड़ा ग्रंथ लगभग ६००० श्लोकों का भी है।

महाराज कर्मसिंह जी के देहावसान पर कवि जी को महान् शोक हुआ और इनका जी टूट गया पर स्वर्गीय महाराज के सुयोग्य उत्तराधिकारी महाराज नरेन्द्रसिंह ने इनको बहुत ढाढ़स दिया और

पूर्ववत् सत्कार और सम्मान के साथ ही इन्हें दरबार में रक्खे रहे। इन्हीं महाराज के आग्रह से इन्होंने 'हम्मीर हठ' की रचना की थी।

चंद्रशेखर जी के रचे हुए इतने ग्रंथ प्रसिद्ध हैं—

(१) नखशिख
(२) रसिक विनोद
(३) वृंदावन शतक
(४) गुरु पंचाशिका
(५) ज्योतिष का जातक
(६) माधवी वसंत
(७) हरि भक्तविलास
(८) राजनीति
(९) हम्मीर हठ

उक्त ग्रंथों में से नखशिख और रसिक विनोद स्वर्गीय बाबू जगन्नाथ दास जी रत्नाकर भारत जीवन प्रेस से प्रकाशित करा चुके हैं। हम्मीर हठ भी पहले साहित्य सुधानिधि में प्रकाशित हो चुका है पर इसका संपादन कुछ नहीं हुआ है और पाठ बहुत भ्रष्ट रह गया है। फिर से नागरी प्रचारिणी सभा ने 'रत्नाकर' जी द्वारा संपादित करा कर इसका एक उत्तम संस्करण प्रकाशित किया है। इसी संस्करण से आगे का संग्रह लिया गया है।

चंद्रशेखर जी की कविता के संबंध में अधिक लिखना व्यर्थ है। इनको हम आसानी से लाल और सूदन की श्रेणी में ले सकते हैं। यों

कविता

तो किसी भी सुकवि को 'श्रेणीबद्ध' करना या उसे किसी विशेष कवि की श्रेणी में रखना उसके साथ अन्याय करना होगा क्योंकि प्रत्येक कवि के ढंग, शैली, तथा तर्ज़-बयान जुदा-जुदा होते हैं। लाल की श्रेणी में कहने से मेरा तात्पर्य सिर्फ इतना ही है कि एकमात्र महत्त्व की दृष्टि से हम इन्हें लाल आदि के समकक्ष रख सकते हैं। चंद्रशेखर जी दुर्भाग्य से कुछ

ऐसे कवियों में से एक हैं, जिनसे हिंदी संसार अभी तक पूर्ण रूपेण परिचित नहीं है।

प्रत्येक कवि की विशेषताएँ अलग-अलग होती हैं। हम्मीर-हठ के संपादक स्वर्गीय 'रत्नाकर' जी स्वयं एक लब्धप्रतिष्ठ सर्वजनसमादृत कवि हो गए हैं वे चंद्रशेखरजी की कविता के क़ायल थे। आप अधिकार के साथ इनकी कविता के संबंध में कहते हैं—"इस ग्रंथ (हम्मीर हठ) की कविता बड़ी मनोहर और उमंगवर्द्धिनी है। ओज, माधुर्य और प्रसाद तीनों गुण अपने-अपने स्थान पर सुशोभित हैं। कवि की प्रौढ़ता अक्षरों से प्रगट होती है। बहुधा कवियों के काव्य में भोंड़ापन आ जाता है पर इस दूषण से भी यह ग्रथ रहित है। किस अवसर पर कैसे अर्थ का साधन किन शब्दों द्वारा करना उचित है इस बात पर कवि जी ने ध्यान रक्खा है और इसमें वे कृतकार्य भी हुए हैं।"

उक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि एक श्रेष्ठ और समर्थ कवि की रचना में जितने मुख्य गुण वांछनीय होते हैं वे सब इनमें हैं।

यह तो स्पष्ट ही है कि यह भूषण और लाल या सूदन आदि की भाँति वीर रस की रचना के लिये ही प्रसिद्ध हैं। पर इनके वीर रस के निरूपण और व्यक्तकरण में क्या ख़ास बात है यह भी ज़रा देख लेना होगा। ऊपर कहे हुए कवि बल्कि प्रायः सभी कवि इसकी व्यंजना के लिए अक्षरों या शब्दों की ध्वनि का ही सबसे बड़ा भरोसा रखते थे। शायद इन लोगों की ऐसी धारणा थी कि अनगढ़ और लड़ाई में होने वाले विविध प्रकार के उग्र शब्दों की सी ध्वनिवाले शब्दों को लाए बिना कविता में वीररस का परिपाक हो ही नहीं सकेगा। कुछ अंशों तक यह सही भी है। पर, एकमात्र यही भर सब कुछ नहीं है और चंद्रशेखर जी इस बात को कदाचित औरों से अधिक पहचानते थे। युद्धक्षेत्र का पूरा चित्र खींचने के लिए ये अलङ्कार, ध्वनि, भावना, चमत्कार और गुण इन सभी के एक ऐसे संतुलित अनुपात से काम लेते थे जैसा कि बहुत थोड़े से कवि ही करने में समर्थ हुए हैं।

हम्मीर हठ

छप्पय

करौं जुद्ध करि क्रुद्ध आज अवरुद्ध सुद्ध मन ।
अरि बिहंड करि खंड खंड डारौं गनीमगन ॥
परे सोर चहुँ ओर घोर दिन राति न सुज्झै ।
गज तुरंग रन रंग अंग भरि भूत अरुज्झै ॥
बिन मुंड रुंड धावै धरनि बचन बोलि चूकै नहीं ।
मोरौं न बाग रनभूमि तैं मानु मातु मेरी कही ॥

दोहा

जो ईश्वर कारन कहूँ उलटै मुरैं निसान ।
तब तुम जौहर देखियौ मेरो बचन प्रमान ॥
पुनि माता के पग परसि प्रमुदित राम हमीर ।
हरषि तुरंग मँगाइ कै चल्यो बीर रनधीर ॥
चढ़त राह हम्मीर के गह गह बजे निसान ।
चढ़े सूर सामत सब रूपवान जसवान ॥

मोतीदाम छंद

चढ़े चहुँआन धनी महराज । चल्यौ खल दाबि दिगंत दराज ॥
बजैं बहु बंब निसान आवाज । उठै घनघोर घटा जनु गाज ॥
सजोम जकंदत जात तुरंग । चढ़े रन सूरनि रंग उमंग ॥
लसैं सब अंग कसे तनत्रान । गहे बरछी करवाल कमान ॥
झुकी कलँगी सिर सोहत टोप । रही चढ़ि आनन औरह ओप ॥
चढ़ी भृकुटी दरसैं दृग लाल । भरे रन रोस मनौ रिपु काल ॥
चले जुरि जुत्थ बरुत्थ अनेक । लगे बलगै विलि एकनि एक ॥
सज्यौ मद मत्त मतंग अनूप । हमीर बिराजत तापर भूप ॥
मनौ गिरि कज्जल को मग जात । मढ़े मनि कंचन सों सब गात ॥
मनौ मन मंदिर तापर मंड । उदै रबि आप भयो परचंड ॥

दोहा

चल्यौ कटक को कहि सकै ताको बिहद बिबाद ।
चल्यौ मनौ परलय करन सागर तजि मरजाद ॥
ग्रीषम गहर गनीम की गारन गरब्ब झुकारि ।
चढ्यौ प्रबल पावत नृपति दल बद्दल बल धारि ॥

छप्पय

उठी धूरि धुरवानि धरनि जलधर दल जुट्टै ।
धवल धजा बकपाँति अस्त्र छनदाछबि छुट्टै ॥
घुरैं बंच घनघोर बिरद बंदी पिक बोलैं ।
गज तुरंग रथ वेग बिहद हद मारुत डोलैं ॥
छिति अंधकार छायौ सघन दृग बसारि लूकै न कर ।
दोसै न पंथ पावस नृपति चढ्यो साजि दल जलद वर ॥

चौपाई

बाजे बिहद जुझाऊ बाजैं । निरतैं मग तुरंग गज गाजैं ॥
पढ़ैं बिरद बंदी बर जौर । मढ्यौ राग मारू सब ठौर ॥
धौंसनि धमक घूम छिति छाई । सुनै कौन निज बात पराई ॥
चलत कटक डोलत इमि धरनी । प्रबल पवन हत जिमि लघु सरनी ॥
सहमि सुरेस संक मन माने । धनाधीस तजि धीर पराने ॥
मंदर मेरु कली सम कावै । फाटत फन फनसी फन झंपै ॥
करत बाजि खुर छार पहारनि । धीजत कहि कतंग मदधारनि ॥
महाराज चहुँआन हमीर । राजत मनु सुरेस रन धीर ॥

दोहा

महि कंपै चंपै चरनि रविरथ झंपै धूरि ।
चढ्यौ राह हम्मीर इमि जुद्ध हरष भरि पूर ॥

छप्पय

उतै साह अल्लाउदीन हम्मीर देव इत ।
सजै जुद्धहित कुद्ध बरनि को सकै सौभ तित ॥

दुहुँ दिस खुलै निसान बंध मारी बहु बज्जैं ।
पढैं बिरद बंदी बिलोकि सुरनायक लज्जैं ॥
गज तुरंग पायक प्रबल दल बिलोकि दुहुँ दिसि घने ।
कुरुखेत करन अरजुन मनौ जुद्ध हेत बहु बिधि बने ॥

भुजंगप्रयात छंद

दुहूँ ओर तैं सूरसेना सिधाई । महा मेघ कीसी घटा घेरि आई ॥
महा अस्त्र औ सस्त्र सारे चमक्कैं । प्रलै काल की दामिनी सी दमक्कैं ॥
गहे खग्ग खंडा प्रचंडा दुधारे । छुरा सक्तिसूलं सरं चाप धारे ॥
लसैं बीर बंके निसंके जुझारे । महा मोद बाढ़े दुहूँ ओर सारे ॥
सुने बीर बाजे बली बीर बाजैं । करैं सिंहनादं मनो मेघ गाजैं ॥
उमंगैं भरे रंग जंगे उमाहैं । दुहूँ ओर सौं आपनी जीति चाहैं ॥
लसैं मत्त मातंग पै दोउ ऐसे । लरैं स्वर्ग में संभु औ सक्र जैसे ॥

सोरठा

आनन औरै ओप भुज फरकत हरषै हियौ ।
भए अरुन दृग कोप देखी देखा दुहूनि सौं ॥
ताते करे तुरंग अंग अंग उमगै सुभट ।
चढ्यौ चौगुनी रंग सुरन के तन बदन में ॥

कवित्त

आनि जुरे कटक दुहूँ दिसि तैं कोपि मुख ।
औपि रन सूरन कै सेखी बरसत हैं ॥
छाई छबि छूटै छटा निनद निसाननि को ।
बाजै बीर बंब राग मारू सरसत हैं ॥
आगैं बढ़ि सुभट सुनावै सिंहनादै एक ।
एकै हाँकि हरषि कृपान करसत हैं ॥
भारत के पारथु औ भीषम समान ये ।
हमीर औ अलाउदीन दोऊ दरसत हैं ॥

दोहा

दल दीरघ दोऊ सजे आए निकट निदान ।
दुहूँ ओरि सूरनि हरषि गहे सरासन बान ॥
बंदूकैं बीरनि सजी द्वै द्वै गोली डारि ।
रंजक दै छाती धरीं जलद जामि की बारि ॥
हाँकि हाँकि मारन लगे डाँटि डाँटि रनसूर ।
मारु मारु दल दुहुन में सबद रह्यो भर पूर ॥

कवित्त

गहर गराव नक थहरत भूमि मढ़ी ।
गगन गरद्द मैं न भानु सरकत हैं ॥
बरषत गोली बरषा में ज्यों जलद ज्वान ।
मारै बान तानत कमान मरकत हैं ॥
केते लोट पोट भए समर सचोट केते ।
बाहन पैं बिकल बिहाल लरकत हैं ॥
फाटे परे लेजा सों करेजा टूक टूक कढ़े ।
छाती छेद बिसिष बिसारे करकत हैं ॥
उतै साहि आलम अलाउदीन गाजी हते ।
महावीर नृपति हमीर रन रङ्ग मैं ॥
दुहूँ देति दलन दिलासी दुहूँ ओर देखि ।
चढ़ै चोप चौगुनी उमंग अंग अंग में ॥
मारे तीर गोलिनि के धीर न धरत छिति ।
गगन समीर न सकत चलि संग में ॥
दारु बिन सिग बान रहित निखंग भयो ।
जंग भयौ दारुन दुहूँ के परसंग में ॥

बढ़ि बढ़ि करैं सूर सब वारि । परी बारि गोलिनि की मार ॥
लग्गी दुहूँ दिसि दारुन 'चोटैं । घायल परे भूमि में लोटैं ॥
अंग भंग रन फिरैं तुरङ्ग । लगैं दाव जिमि बिपिन बिहंग ॥
जरजर गात जात मग भागे । बिकल बितुंड बान बहु लागे ॥

ढीले धनुष भए जिह टूटे। भे खाली निखंग सर खूटें॥
दुहूँ ओर पिलि चले तुरङ्ग। परा मारि नेजनि के संग॥
हाँकि हाँकि रिपु हनै सजोर। बरषैं अस्त्र सस्त्र अति घोर॥
खुलीं खग्ग को करै सुमार। रन मैं परी भयंकर मार॥

कवित्त

चले सूर सर सेल दल पेलि बगमेल परे।
गोलनि पै गोल बोलि बचन प्रमान॥
भयौ घोर घमासान धूरि धाई आसमान तहाँ।
आपनौं परायौ न परत पहचान॥
मारु मारु धरु तोरु सिर फोरु मुख मोरु।
मच्यो सोर ठौर ठौर सुनि परत न आन॥
जहाँ पारथ समान रच्यौ भारत हमीर करै।
वीर रनधीर पुरुषारथ अमान॥
खुले काल तैं कराल करवालनि के जालजाल।
लाल मुख सुभट उमंग सरसाइ॥
परी मारि तरवारिनि को करन सुमार कटे।
टोप तनत्रान परे भूमि भहराइ॥
परे बाजि बिन कंठ बिन सुंडनि बितुंड उठे।
मुंडनि बिहीन रन रुंड रहे धाइ॥
तहाँ पारथ समान पुरुषारथ निधान।
चहुँआन सिर मुकट हमीर दरसाइ॥
जुरे बाजिनि सौं बाजी औ गजनि गजराज पिले।
पायक प्रबल रनरोस सरसाइ॥
डटी ढालनि सौं ढाल करवाल करबमाल वीर।
खंजर कटारनि हनत हरषाइ॥
परे लुत्थनि पै लुत्थ कटे बिहद बरुत्थ।
करकत सरसूल भभकत भार धाइ॥

तहाँ पारथ समान पुरुषारथ करत।
चहुँआन सिर मुकुट हमीर दरसाइ ॥
कटी कूंडी टोप कवच सनाह टूक टूक पेरी।
झूमि झूमि भूमि मैं झिलिमि फहराइ ॥
परे झुंडनि के झुंड कटे बीर बरवंड कहूँ।
रुंड कहूँ मुंड कहूँ तुंड तलफाइ ॥
भिरैं भूत भीम भैरव भ्रमत रन रुद्र जुरि।
जोगिनी जगावत मसान जस गाइ ॥
होत जंग मन मुदित उमंग सरसाइ हेर।
हनत विपच्छिनि हमीर हरषाइ ॥
चली खेत रनथंभ के विषम तरवारि मारी।
मारि मुख कढत मढत तन घाइ ॥
परे अंग काटि सुभट तुरंग न चलत।
चरबी के चहले मैं चलि सकत न पाइ ॥
मरे कूडनि रुधिर रन रुंडनि को रासि भषैं।
मास खग जंबुक पिसाच समुदाइ ॥
तहाँ बीर बलवान बहुआन रनधीर खग्ग।
बाहत हमीर हठधारी हरषाइ ॥
खेत रनथंभ के हमीर रन धीर बली।
सेना पातसाह की कृपान मुख मारी है ॥
लुत्थन पै लुत्थ परे घायल बरुत्थ परे।
हत्थ कहूँ मत्थ खात आकिष अहारी है ॥
लोहू के अलेल में गलेल देत भूत भिरैं।
रुंडनि को प्रेत और पिसाच सहचारी है ॥
तारि देत कालिका किलकि किलकारी दै के।
भारी मुंडमालिका महेस उर डारी है ॥
लरे पातसाह और हमीर रनथंम खेत।
बीरता बखाने कान सुभट अरे जे हैं ॥

हाँकि हाँकि दलन दबाह दहपट्टि हते।
बाजी और बितुंड झुंड झूमत खरे जे हैं॥
मारे रन मुगल पछारे पीर जाते।
अधफारे फर लोटत पठान वे लरे जे हैं॥
पार भए नेजे घूमि भूमि में परे जे करे।
टूक टूक रेजे सरे के करेजे हैं॥

सवैया

बीर हमीर हते रनधीर लरै उत सौं सुलतान सो हेलैं।
मार परी तरवारिनि की बरसै सर सूल भयंकर सेलैं॥
टोप कटे केलही तन त्रान मची घमसान भए दल मेलैं।
लोहू अघायल ह्वै रहे घायल फाग सी खेलैं॥

छप्पय

बिषम चलीं तरवारि मारु धुनि मारु मारु धुनि।
मच्यो सोर यह धीर परत नहिं और बात रुनि॥
जुत्थ जुत्थ कटि परैं लुत्थ पर लुत्थ उलत्थिय।
कुंडनि श्रोनित भरे सुंड सब डोलत हत्थिय॥
असवार डिगत बाहन फिरैं फिरैं भूत भैरव बिकट।
नाचैं गिरीस गिरिजा सहित रंगभूमि रुंडनि निकट॥
भयौ घोर घमसान रोर दसहुं दिसि मची।
डहडह बज्जे डमरु जूह जुग्गिनि जुरि नाची॥
प्रमत भूत जमदूत बीर बेताल बहक्कैं।
ताल देत भैरव पिसाच मिलि प्रेत डहक्कैं॥
कर गहि कपाल पीवै रुधिर कंकाली कौतुक करै।
गन सहित रुद्र जाग्यौ समर लाग्यौ घर मुंडनि भरै॥
चुंचनि चुथैं गृद्ध मांसिजंबुक मिलि भच्छैं।
चाटैं चर्रबि पिसाच प्रेत गहि हाड़ प्रतच्छैं॥
भषैं मोद भरि भूत रुंड भैरव लै भज्जैं।
गहि कपाल रत पान करत चंडी गलगज्जैं॥

नाचैं निहारि जेरि जोगिनी सुभट जच्छ कंया बरै ।
रनभुम्मि भए कायर विमुख सूर समर साका करैं ॥

दोहा

भयो जुद्ध दिन सात लौं रात दिवस इक सार ।
रुंड मुंड परि खेत मैं परगट भयो पहार ॥
कहीं कुटिल गति कोटि वत श्रोनित सरित अपार ।
मज्जन करत पिसाच घन रुद्र सहित परिवार ॥

भुजंगप्रयात छंद

परे मत्त दंती मरे सुंड खंडे । उभै ओर ते कूल राजैं प्रचंडैं ॥
बहे लाल लोहू लसै बारिधारा । मनौ कौल फूलै कलंगी अपारा ॥
परे अंग भंगं तुरंगं अनेकं । तिरैं ग्राह मानों गहे एक एकं ॥
फटे रुंड मुंडं कटे केस छूटे । मनौ पाज कौ पाह सेवाल जूटै ॥
परे खग्गखंडा प्रचंडा देधारे । फिरैं धार में ज्यों महा ब्याल कारे ॥
तनं त्रान फूटे फटे टोप ढालं । परे नीर में ज्यों महा जंत्र जालं ॥
बहे बस्त्र फेनं फँसे अस्त्र मीनं । महा मक्र से सूर सावंत पीनं ॥
चली जोर बेगं महा घोर धारा । गिरे गर्ववृच्छं प्रतच्छं अपारा ॥
लसै भौंर से मीम हैं चक्र बामैं । कलत्थंत सूरं तरंगं ललामैं ॥
करै केलि काली कपाली समेतं । करै पान केते तृषावंत प्रेतं ॥
भिरै भूत भैरव भरे गात घावैं । कलोलै तिरैं जोगिनी ताप खोवैं ॥
परै गीध आकास तैं आनि टूटै । बिना सोक कोकावली हंस जूटै ॥
महा भीम भारी नदीयों गंभीरं । करी युद्ध मैं वीर हम्मीर धीरं ॥
तहाँ कोप कै साह अल्लाउद्दीनं । गही हाथ कम्मान औ बान लीने ॥

छप्पय

गहि कमान करि तान साह अल्लाउदीन हसि ।
करे बान बरषा अपार सर बारि धार जिमि ॥
गिरे बीर रनबीर भिरैं सनमुख दल दोऊ ।
पीछैं देत न पाँव फेरि फिरि सकत न कोऊ ॥

मीड़ैं न बाग छोड़ैं न छिति अड़ि घोड़े जड़ गति रहे।
श्रोनित अन्हाइ वायल सुभट तन घायल जकि थकि रहे॥

दोहा

भूर सूर करनी करैं टरैं न तजि रन खेत।
सात दिवस सँगरे भयौ निसिदिन रहा न चेत॥

सोरठा

बरषत सर सुलतान बिकल देखि दल आपनी।
गहि कृपान चहुँ आन परयौ मृगनि में सिंह ज्यौं॥
नागनि कौं मृगराज बाज बटेरनि ज्यौं हने।
त्यौं हमीर गलगाज हन्यौं साह दल आपही॥

मोतीदाम छंद

गही करवाल हमीर कारि। दलं दहपट्टि दियो महि डारि॥
करे जुग खंड बिहंडि बिहंडि। दिए जमदूतनि कौं धनु बंडि॥
करै नररंग तुरंगनि भंग। चरै मनु केहरि कोप कुरंग॥
परैं रनसूर कलत्थ कलत्थ। कहूँ धड़ मत्थ कहूँ पग हत्थ॥
फिरैं रन घूमत घायल सूर। अघायल घोनित चायल चूर॥
कटे तंन त्रान फटे सिर टोप। लटे रिपुरंग मिटी मुख ओप॥
लगे रन धावन रुंड अपार। वही पुनि दारुन श्रोनितधार॥
उठे अति कोपि कबंध उदार। भई यह भूमि भयंकर मार॥
जहाँ चहुँआन गही समसेर। दिये सब सत्रुनि के मुख फेरि॥
चढ्यौ गजभाजत फौज निहारि। तहाँ सुलतान गयौ हिय हारि॥

दोहा

भाग्यौ दल सुलतान कौ जोर परयौ चहुँआन।
हाँकि हाँकि मारन लगे धीर वीर बलवान॥

छप्पय

भयो क्रुद्ध अति घोर राम रावन रन जुज्झे।
पुनि पारथ अरु करन कोपि कुरुखेत अरुज्झे॥

लर्यो भीम गहि गदा गाजि दुरजोधन मार्यो ।
सुलतान गरब गंज्यौ समर तिमि हमीर सूरनि सजे ।।
निरतंत रुद्र नारद निरखि डिमि डिमि डिमि डमरू बजै ।।

सोरठा

भयौ घोर घमसान परे खेत सिगरे सुभट ।
दल सब आयौ काम रहे नषत ज्यौं भोर के ।।
दल बल सान गँवाइ दै हमीर कौं सुजस बर ।
भग्यौ साह सिर नाइ पील चढ्यो जित तित लता ।।

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।